श्री शारदा-सहेली-संघ ग्रन्थमाला का प्रथम सोपान

तीन पुष्प

(तीन सामाजिक नाटकों का संग्रह)

वृद्ध-विवाह, विधवा, उत्सर्ग

लेखक—

श्रीमान् पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री न्यायतीर्थ,

भादवा (जयपुर)

प्रस्तावना-लेखिका—

श्रीमती सावित्री देवी भारतीया, एम. ए., बी. टी.

प्रिन्सिपल-श्री महाराजा गर्ल्स इण्टरमीजियट कालेज,

जयपुर।

प्रकाशक—

श्री शारदा-सहेली-संघ, चौकड़ी घाट-दरवाज़ा,

चूड़ी वालों का मोहल्ला, जयपुर सिटी।

प्रथम वार १०००] सन् १९४४ ई० [मूल्य २)

समर्पण !

श्रीमान् श्रद्धेय गुरुवर्य्य एवं पूज्य भ्राता

पं० चैनसुखदासजी न्यायतीर्थ

– के –

पवित्र चरण-कमलों

में

ता० १६-११-४४ कैलाशचन्द्र

तीन पुष्प



कविरत्न श्री प० चैनसुखदासजी न्यायतीर्थ, जयपुर।

प्रकाशकीय

तीन पुष्प नामक पुस्तक पाठकों के सामने प्रस्तुत है। यह तीन सामाजिक नाटकों का संग्रह है। तीनों ही नाटकों का अभिनय सहेली संघ के वार्षिक अधिवेशनों पर जैन पद्मावती कन्या पाठशाला की बालिकाओं एवं संघ की सदस्याओं द्वारा हो चुका है। इस का ब्योरेवार विवरण हर एक नाटक के प्रारम्भ में दिया गया है।

जब से सहेली-संघ का जन्म हुआ, वर्ष के अन्त में संघ अपना वार्षिक अधिवेशन मनाता आ रहा है। प्रथम दो वार्षिक महोत्सवों में अधिवेशन का कार्य-क्रम साधारण तौर से विदुषी महिलाओं के भाषण गायन व रिपोर्ट आदि के साथ संपन्न हुआ। सन् १९३९, ४० ई० में व्याख्यान-गायन के साथ साथ बालिकाओं द्वारा पं० उमाशंकरजी चतुर्वेदी कृत स्त्री शिक्षा विषयक एक छोटे से संवाद का भी आयोजन किया गया। सन् १९४१ में जब वार्षिक-अधिवेशन के कार्य-क्रम पर विचार होने लगा तो प्रबन्ध कारिणी समिति की सदस्याओं ने किसी ऐसे नाटक का होना वांछनीय समझा जो सामाजिक कुरीतियों पर प्रकाश डालने के साथ साथ केवल स्त्री पात्रों के द्वारा साधारण वेशभूषा और अल्प व्यय साध्य दृश्यों के साथ सम्पन्न किया जा सके। यह विचार श्रद्धेय बाबू मोहनलाल जी सोनी के द्वारा भी, जो सहेली-संघ के वार्षिक-अधिवेशनों में खास तौर पर दिल-चस्पी लिया करते हैं, बहुत सराहा

गया ! किन्तु पहले से प्रकाशित केवल स्त्री पात्र समाविष्ट समाजिक नाटक हमारे सामने उपलब्ध न होने के कारण हमने हमारे पूज्य मास्टर साहब पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री से प्रार्थना की कि वे कोई ऐसा संवाद तैयार करें। फल स्वरूप इस पुस्तक का पहला पुष्प 'वृद्धविवाह' सन् १६४१ के वार्षिक-अधिवेशन के अवसर पर समाज के सामने आया। लोगों ने इस संवाद के आयोजन को बहुत अधिक पसन्द किया। इसलिए दूसरे वर्ष भी संवाद के कार्य-क्रम को रखना आवश्यक समझा गया और उन्हीं के द्वारा दूसरा पुष्प 'विधवा' लिखा गया। इस नाटक के अभिनय से लोग इतने अधिक प्रभावित हुए कि सबने एक मत होकर सामाजिक कुरीतियों के निवारण और समाज-सुधार की समस्या को अत्यन्त सरलता और शीघ्रता से सुलझाने के लिए ऐसे सामाजिक नाटकों की आवश्यकता का अनुभव किया। इसी तरह सन् १६४३ में तीसरा पुष्प 'उत्सर्ग' भी पूज्य मास्टर साहब के द्वारा लिखा गया। यह नाटक और भी प्रभावोत्पादक रहा। इस नाटक को देख कर बहुत सी महिलाओं व महानुभावों ने यह अनुभव किया कि ऐसी कृतियों का प्रकाशित होकर समाज के सामने आना बहुत ही जरूरी है। कुछ महानुभावों ने हमारे सामने यह भी प्रकट किया कि यदि संघ इजाज़त दे तो वे इनको प्रकाशित करा सकते हैं। इस पर विचार करने के लिए तारीख १ जनवरी सन् १६४४ को प्रबन्ध कारिणी समिति का अधिवेशन हुआ और सर्व सम्मति से तय किया गया, कि लेखक महोदय की स्वीकृति लेकर तीनों नाटकों की एक

सम्मिलित पुस्तक शीघ्र से शीघ्र सहेली-संघ की तरफ से ही प्रकाशित की जाय और प्रकाशन खर्च के लिए धनी मानी महिलाओं से आर्थिक सहायता के लिए प्रार्थना की जाय । जो कमी रहे वह संघ के कोष से पूरी की जाय । परिणाम स्वरूप आप लोगों के सामने सहेली-संघ का यह प्रथम प्रयास प्रस्तुत है ।

इन नाटकों की मौलिकता और उपयोगिता के विषय में मैं स्वयं कुछ नहीं कहना चाहती । क्रियात्मक अभिनय देखने वाले सैंकड़ों महानुभावों एवं महिलाओं ने इन रचनाओं की आवश्यकता को एक स्वर से स्वीकार किया है । हमारे श्रद्धेय मास्टर साहब ने सहेली-संघ को वास्तव में एक अमूल्य चीज़ भेंट की है । सहेली-संघ इसके लिये उनका अत्यन्त आभारी है । पाठकों से भी प्रर्थना है कि वे इसके सम्बन्ध में अपनी अमूल्य सम्मति प्रकट करें और सहेली-संघ के पास भेजें ।

इन नाटकों को जनता के समक्ष क्रियात्मक अभिनय के रूप में लाने का श्रेय जिन महानुभावों, बहिनों एवं बालिकाओं को है, उन सब का उल्लेख हर एक नाटक के प्रारम्भ में भूमिका-परिचय में किया हुआ है । संघ इन सब के प्रति अपना आभार प्रदर्शित करता है ।

श्रीमती सावित्री देवी एम-ए-बी-टी प्रिन्सिपल महाराजा गर्ल्स इन्टर मीजियट कालेज जयपुर ने इस पुस्तक की प्रस्तावना लिख कर संघ के प्रति जो प्रेम प्रदर्शित किया और पुस्तक की उपयोगिता को

बढ़ाया है, उसके लिए संघ अन्तः करण से अपनी कृतज्ञता प्रकट करता है।

अफ़सोस है कि प्रेस की असावधानी के कारण पुस्तक में बहुत सी शाब्दिक और ख़ास तौर से विराम चिन्हों की अशुद्धियाँ रह गई हैं।

पुस्तक के कुल पृष्ठों की संख्या साढ़े तीनसौ के लगभग है। आज-कल काग़ज़ और छपाई की मँहगाई के कारण पुस्तक की कीमत २) रु० रखी है, जो लागत से विशेष अधिक नहीं हैं। आशा है पाठक सहेली-संघ के इस प्रथम सोपान को अपना कर संघ का उत्साह बढ़ायँगे।

ता० १२-११-४४

ललिताकुमारी
मंत्रिणी–
श्री शारदा-सहेली-संघ जयपुर,

प्रस्तावना

जीवन एक ओर समगति पर बह रहा था। सहसा धक्का लगा, धारा उलट गई—समय बीतने लगा। दूसरी ठोकर लगी—फिर दूसरी ही ओर फिरना पड़ा—नाटक में यही दिखाना होता है।

जीवन की धूप-छाया का चित्र हम उपन्यास तथा कहानी में भी पाते हैं, किन्तु नाटक में काव्य की जो मनोहरता लाई जा सकती है, वह अन्य कहीं सम्भव नहीं। और इसी से हम नाटक को उपन्यास तथा काव्य के बीच डालेंगे। नाटक में आख्यायिका की मनोहरता, घटनाओं का संवर्षण आदि मिलता है तो साथ ही काव्य की ललित रागिनी भी! इसी से नाटक की गति एक नदी की भांति मानी गई है। जीवन की एक विशालता को त्याग कर हमारी भावनायें बहुमुखी होने लगती हैं—बिल्कुल उसी भांति जिस तरह एक नदी बरसाती बाढ़ में अपना सारा दम समेटती कितनी ही उपनदियों को काटती, बिखेरती चलती है। कथानक वही बरसाती बाढ़ है जो उपकथाओं में खंडित होकर अन्त में फिर अपने उद्देश्य को पकड़ लेता है। महानदी की अन्यान्य नदियें भी फिर एक होकर अपना विसर्जन करती हैं। इसी से नाटक में कथानक का ऐक्य (*union of plot*) चाहिये।

'तीन पुष्प' के नाटकों की विशेषता यह है कि कथानक एक है। लेखक ने कथानकों का चुनाव कुछ इस ढंग से किया है कि सहायक कथानकों की कहीं गुञ्जायश ही नहीं। कहीं अन्य

नगर के दृश्य की सृष्टि अवश्य होगई है, पर वहाँ कोई घटना विशेष ऐसी नहीं जिसे उपकथानक के शीर्षक में हम डाल सकें। शास्त्री जी के नाटकों के विषय में मुझे विशेष कुछ कहना नहीं है। हां, नाटक के कुछ बंधे नियम हैं जिन्हें ध्यान में रखते हुए 'तीन पुष्प' पर दृष्टिपात करना है।

नाटक के आकार के सम्बन्ध में द्विजेन्द्रलाल के मत से मैं सहमत हूँ। वह कहते हैं कि वह मधुमक्खी के छत्ते के समान होता है, जिसे एक ही स्थान से निकल कर, फिर विस्तृत होकर अन्त को एक ही स्थान में समाप्त होना चाहिये। नाटक का मुख्य विषय यदि प्रेम हो तो उसे प्रेम ही के परिणाम में समाप्त करना चाहिये। यहाँ नाटक का ध्येय समाज-सुधार है। तीनों नाटकों में ही इस सुधार के पूर्व हम एक बवंडर से भेंट करते हैं। पात्रों के जीवन में आंधी का तेज झोंका आता है, तमाम तरह के द्वंद्व सामने आते हैं, अन्त में वह सुलझ कर समाज के एक सफल सुधार का स्वरूप ग्रहण करते हैं। 'वृद्ध-विवाह' में समाज की एक घातक कुरीति को रोकना लेखक का ध्येय था। यह पूरा होता है। 'विधवा' हमारे समाज की एक अभिशाप-सी है। यह ऐसा क्यों हो ? विधवा के नाते नारी तक का इतना अपमान! मानवता का ऐसा उपहास !! हमारे सदय लेखक को यह सह्य नहीं'। उन्होंने नारी-हृदय का क्रन्दन देखा, सुना, समझा। उसी के विरुद्ध एक आग भड़का दी। नारी के प्रति उनके हृदय में जो सहानुभूति है उसका प्रतिबिम्ब हम उन अनेक प्रस्तावों में पाते हैं, जो 'जयपुर ' टाउन हॉल ' के दृश्य में दिखाया गया है। नारी वासना नहीं, उपासना का उपादान है—ऐसा आप महसूस करते हैं।

हाँ, एक अभाव जो मुझे खटका, वह भी लिखना मेरा कर्तव्य है। अन्तर्द्वन्द्व नाटक को उच्च श्रेणी में बिठाता है, उसकी यहाँ कमी लगी। दो विरोधी भावनायें यदि टकरायें तब एक बिजली पैदा होती है, जिसमें गर्जन होती है, स्फूर्ति होती है, ज्योति होती है! नाटक की प्राणशक्ति यदि इस अन्तर्द्वन्द्व से भरी जाय, तब वह नाटक कहीं अधिक आकर्षक हो जाय। हमारे जीवन में दर्द है, तड़पन है, दुःख है; तब यह सब क्या बहिर्द्वन्द्व द्वारा ही दूर हो सकेगा? इनकी सुलगती चिनगारियाँ हमें भीषण शक्ति देती हैं। हमारी मनोवृत्तियाँ भी भीमाकार होकर हमें उकसाती हैं। दो बिल्कुल विरोधी भावनाओं के बीच में थपेड़े खाते हुए संशय, ज्ञान और अज्ञान के बीच एक किनारे लग ही जाते हैं। इसमें केवल बहिर्घटनाओं के साथ युद्ध दिखा देना बहुत श्लाघ्य नहीं। 'तीन पुष्प' के नाटकों में अन्तर्द्वन्द्व है-पर दो विरोधी भावनाओं का न होकर ही एक भावना, एक ही लक्ष्य को इङ्गित करता हुआ मुख्य पात्री के हृदय में मँडराता है। उसके हृदय के साथ एक ही दर्द, एक ही पीड़ा का लगाव है। वहाँ संशय को कोई विशेष स्थान नहीं।

फिर भी--मैं शास्त्री जी के इस प्रयत्न का स्वागत करती हूँ। उन्होंने जो कुछ लिखा, इस ध्येय से कि बालिकाएँ इनका अभिनय कर सकें। इसी दृष्टि से ये नाटक हिन्दी-साहित्य की एक बड़ी सफलता है। इसकी सब से बड़ी उजूनियत एवं नवीनता यह है कि पुरुष पात्र एक भी नहीं है। वार्तालाप द्वारा ही हमें उनका परिचय कराया गया है। रङ्गमञ्च पर बालिकाएँ पुरुषों के वेष में आयें और कभी हँसी, कभी मखौल का एक कारण बनें—इस भय से यह नाटक दूर है। नाटक खेलते समय

दो शब्द

हिन्दी नाट्य-कला के सम्बन्ध में मेरा अनुभव नहीं के बराबर है। इस दृष्टि से इस क्षेत्र में मेरा हस्तक्षेप करना मुझे भी कुछ खटकता है। न जाने क्यों, मेरी प्रिय शिष्या बहिन ललिता कुमारी और माननीय बाबू मोहनलाल जी सोनी के दिल में मेरे प्रति यह बात बैठ गई कि मैं नाटक लिख सकता हूँ, अतः जब भी सहेली-संघ के वार्षिक अधिवेशन का अवसर आता, मुझसे बराबर अनुरोध किया जाता कि मैं बालिकाओं के लिए केवल स्त्री-पात्रों का संवाद के ढंग का कोई नाटक लिखूँ। दो एक अधिवेशनों पर तो मैं टालता रहा। पर अन्त में मुझे विवश होना पड़ा और सन् १९४१ के वार्षिकोत्सव के लिए मैंने 'वृद्ध-विवाह' लिखा। वह बालिकाओं द्वारा क्रियात्मक अभिनय के रूप में भी आया। फिर तो मेरे लिए एक लागसी लग गई और हर एक वार्षिक उत्सव पर मुझे नाटक लिखने को बाध्य किया गया और सन् ४२ व ४३ के अधिवेशनों पर मैंने क्रमशः 'विधवा' और 'उत्सर्ग लिखा'। इस वर्ष भी इस कार्य से मेरा पीछा नहीं छूटा और मेरे बार बार मना करने पर भी बहिन ललिता कुमारी ने मेरे उपर यह बोझा डाल ही दिया। आजकल मैं चौथा नाटक 'प्रति शोध' इस नाम से लिख रहा हूँ, जिसका अभिनय आगामी १८, १९ तारीखों को सदा की तरह ही बालिकाओं द्वारा किया जायगा।

मैं नहीं कह सकता नाट्य-कला की दृष्टि से ये नाटक कहाँ तक ठीक उतरे हैं, कारण मैं स्वयं नाट्य-शास्त्र के नियमोपनियमों से विशेष जानकारी नहीं रखता हूँ। सच तो यह है कि मैंने इन नाटकों को नाट्य-शास्त्र के नियमों में बांधने और इन पर ठीक उतारने की कोशिश

तीन पुष्प



प्रस्तुत पुस्तक के लेखक—श्री पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री

भी नहीं की। इसलिए शुरू में जब ये नाटक तैयार हुए तो मैंने इनका नाम नाटक न रखकर संवाद रखा। सहेली-संघ के वार्षिकोत्सव की विज्ञप्तियों में इनका नाम अब भी संवाद ही चलता आ रहा है।

ये संवाद सामाजिक हैं और इनको बनाने का मेरा एक मात्र उद्देश यह रहा है कि स्त्री-पात्रों द्वारा साधारण बात चीत के ढंग से सामाजिक कुरीतियों पर कुछ प्रकाश डाला जासके जो लोगों को रुचि कर भी हो और वे उसमें से कुछ लेकर भी जायँ। केवल स्त्री पात्रों द्वारा कथा के प्रवाह को निर्दोष रीति से चलाने में मुझे कई स्थलों पर कठिनाई उठानी पड़ी है, और कई स्थलों पर तो पुरुष-पात्रों की अनुपस्थिति वास्तव में खटकती भी है, फिर भी मैंने सहेली-संघ की सुविधा और उसकी मांगके अनुसार केवल स्त्री-पात्रों द्वारा ही इन नाटकों की कथा को और उनके विषय को अधिक से अधिक स्पष्ट करने की कोशिश की है। ये संवाद सर्व देशीय न होकर एक देशीय हैं बल्कि और भी आगे बढ़ा जाय तो कहा जायगा कि प्रान्तीय हैं। कारण, इन नाटकों का कथानक खास तौर से जयपुर प्रान्त के सामाजिक वातावरण को लेकर चलता है। इसी दृष्टि से इनमें कई स्थलों पर जयपुर की भाषा काम में ली गई है। यह बात दूसरी है कि नाटकों को रोचक और कुछ प्रान्तीयता से ऊपर उठाने के लिए कहीं २ 'भारत माता,' 'मातृ भाषा' 'बङ्गाल के बाढ़ पीड़ितों की दुरवस्था,' आदि दृश्य रख दिये गये हैं,जो भारत की तत्कालीन राजनीतिक आदि परिस्थितियों पर भी साधारण प्रकाश डाल देते हैं। मैं यहां यह प्रकट कर देना जरूरी समझता हूं कि इन नाटकों को लिखते समय साहित्यिक दृष्टि को मैंने जान बूझ करही भुलादेना चाहा है और घटनाओं के चक्र व्यूह, भावों के उत्थान-पतन, मानव हृदय के घात प्रतिघात और मानसिक संघर्ष में भी मैं ज्यादा नहीं उलझा हूँ। मेरे सामने अभिनय करने वाली जैसी बालिकाएं थीं, उनकी योग्यता और सुविधा के अनुसार सामाजिक

जीवन की सीधी सीधी कहानी को ही मैंने इन नाटकों का आधार बनाया है । उत्कृष्ट नाटक के लिए मानसिक संघर्ष बहुत जरूरी है पर इसके सफल अभिनय के लिए उच्चकोटि की अभिनय कला भी वाञ्छनीय है । दूसरी बात यह है कि ऐसे दृश्यों को मुझे विवश होकर टाल देना पड़ा है, जिनके आजाने से नाटकों के जीवन में तो जरूर विशेष बल आसकता था पर साधारण सामाजिकों के सामने बालिकाओं द्वारा उनका अभिनय श्रेयस्कर नहीं हो सकता था । अस्तु ।

आर्थिक दृष्टि से इन नाटकों का अभिनय बहुत सस्ता पड़ता है, कारण इनमें बहुत अधिक खर्चीले दृश्य और बहुत कीमती पोशाकें बसाने की विशेष जरूरत नहीं पड़ती है । अधिकान्श दृश्य घर रास्ता, मन्दिर और पाठशाला के हैं, जिनका सामान हमारे घरों में बहुत सुलभ है और इसीलिए इनका अभिनय दो या तीन पर्दों से कहीं भी सफलता के साथ किया जा सकता है ।

संवाद के बहुत से गीत शास्त्रीय गीतों और फिल्म गीतों की स्वर-लिपि के अनुसार बनाये गये हैं, इसलिए उनमें कविता की दृष्टि से वर्ण या मात्राओं का ख़याल नहीं रखा गया है ।

इन संवादों को तैयार करने में, चूंकि मुझे बहिन ललिता कुमारी और बाबू मोहनलालजी सोनी की प्रेरणा खास तौर से मिली है, मैं उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ । सहेली-संघ ने इन रचनाओं को प्रकाशित करा कर जो इनके प्रति प्रेम प्रदर्शित किया है, उसके लिए मैं सहेली-संघ का आभारी हूँ ।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रूफ संशोधन का कार्य मेरे ही जुम्मे था । कुछ तो मेरी असावधानी से और कुछ प्रेस की असावधानी से पुस्तक में बहुत सी अशुद्धियाँ रह गई हैं, इसका मुझे बहुत ही पश्चाताप है ।

नाटक लिखते समय मुझे यह ख़्याल नहीं था कि ये प्रकाशित भी किये जायँगे। इसलिए संभवतः पाठकों की दृष्टि में ये एक पाठ्य नाटक पुस्तक की हैसियत से ठीक न उतरें पर ये नाटक जैसे भी हैं वैसे पाठकों के सामने प्रस्तुत हैं। मैं अपने आपको बहुत धन्य समझूंगा जो पाठक इनकी कमियों को मुझ तक पहुंचाने की कृपा करेंगे।

जयपुर
ता० १० नवम्बर सन् १६४४ ई०

कैलाशचन्द्र

कोरस

कृपया निम्न अशुद्धियों को शुद्ध करके पढ़ें:—

पृष्ठ नं०	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१२	चौथीलाइन के बाद इसे पढ़िये—तीसर स्त्री—क्यों जी लड़की कितनी बड़ी है ?		
१८	८	कल	आज
३२	अन्तिम पेज के बाद इसे पढ़िये—विदित हो गया होगा कि वृद्ध-विवाह समाजके लिये		
'विधवा' का टाइटिल पेज		सन् ११४२ ई०	सन् १९४२ ई०
७४	१६	कल	पीछे
११२	५	गायत्री	हमीदा
२६८	५	प्रतिभा	अरण्य
२६७	२१	अरण्य	राजेन्द्र

वृद्ध-विवाह

(सन् १६४१)

—:पात्र-परिचय :—

१–स्नेहबाला—स्थानीय श्री कजौड़ीमलजी की पुत्री

२–रजनी—स्नेहबाला की घनिष्ठ सहेली

३–वीणादेवी—स्थानीय कन्या-पाठशाला की अध्यापिका

४–स्नेह की माँ—कजौड़ीमलजी की स्त्री

५–सुधांशुबालादेवी—एक स्थानीय शिक्षित महिला

६–विद्युत्बालादेवी— ,, ,,

७–सन्यासिनी—स्नेहबाला को विपत्ति में धैर्य और दृढ़ता प्रदान करने वाली एक साध्वी

८–सभानेत्री—स्थानीय महिला-मंडल की अध्यक्षा

९–शान्ताकुमारी—स्नेहबाला की सहेली

१०–शशिप्रभा— ,, ,,

११–कंचनबाला—स्थायीय कन्या-पाठशाला की एक छात्रा

अन्य प्रचीन व अर्वाचीन महिलाएँ

❀ भूमिका-परिचय ❀

इस नाटक का सर्व-प्रथम अभिनय तारीख २६ सितम्बर सन् १६४१ को श्री सावित्री देवी एम.ए-बी-टी- इन्सपेक्ट्रैस आफ गर्ल्स-स्कूल्स जयपुर स्टेट की अध्यक्षता में मनाये गये श्री शारदा-सहेली-संघ जयपुर के पंचम वार्षिक महोत्सव के अवसर पर जयपुर श्री दारोगा जी के मन्दिर में सहेली—संघ की सदस्याओं द्वारा सम्पन्न हुआ। भूमिका व कार्य-कर्ताओं का परिचय निम्न तरह से है :—

—: कार्य कर्ताओं का परिचय :-

१ व्यवस्थापक—श्री बाबू मोहनलाल जी सोनी
२—लेखक व निर्देशक—श्री पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री
३—संगीत—निर्देशक—श्री मा० मनमोहन रावजी भट्ट तैलङ्ग
४—स्थान-प्रबन्धक—श्री बाबू जोरावरमलजी पाटणी बी. ए.एल.एल.बी.

:❀ भूमिका-परिचय ❀:

१—स्नेह बाला—श्री पद्माकुमारी सुपुत्री श्री पुरुषोत्तम लालजी याज्ञिक
२—रजनी— श्री चन्द्रकला कुमारी सुपौत्री श्री दारोगा मोतीलालजी पाटणी
३—वीणादेवी—श्री विमला कुमारी सुपुत्री पूरणचन्द्र जी काशलीवाल
४—स्नेह की माँ—श्री चमेली देवी सुपुत्री श्री गुलाबचन्द जी गोधा

५-सुधांशबाला देवी—श्री विमलाकुमारी सुपुत्री श्री कपूरचन्दजी पाटणी

६-विद्युत्बालादेवी
७-सन्यासिन } —श्री सरला कुमारी सुपुत्री श्री मनमोहन रावजी भट्ट

८-सभानेत्री—श्री शकुन्तलाकुमारी, सुपुत्री श्री केशरलालजी कटारिया

९-शान्ताकुमारी—श्री छुट्टनकुमारी, ,, श्री गुलाबचन्दजी विंदायक्या

१०-शशिप्रभा—श्री सरदारकुमारी, ,, श्री केशरलालजी अजमेरा

११-कञ्चनबाला—श्री कञ्चनकुमारी, ,, श्री मोहनलालजी सोनी

अन्य प्राचीन व अर्वाचीन महिलाएँ तथा सेविकाएँ आदि:— कुमारीशान्ति संघई, कञ्चन पाटणी, सुभद्रा कटारिया, कंचन सोनी, शान्ता अजमेरा, लल्लीबाई साह, कान्ता तोतूका, शान्ति लुहाड्या आदि।

ललिता कुमारी

मंत्रिणी श्री शारदा-सहेली-संघ

जयपुर।

वृद्ध-विवाह

पहला दृश्य

(स्थान — एक महिला-वाचनालय)

(वाचनालय में एक बड़ी टेबिल और पाँच सात कुर्सियाँ पड़ी हुई हैं नीचे कार पेट और कालीन बिछा हुआ है। टेबिल पर टेबिल-पोश और इधर-उधर दो गुलदस्ते रक्खे हैं तथा कुछ दैनिक साप्ताहिक व मासिक पत्र पत्रिकाएँ पड़ी हुई हैं। स्थानीय बालाएँ रजनी, कान्ता, शान्ता और शशिप्रभा बैठी हुई अखबार पढ़ रही हैं।)

रजनी :—(आश्चर्य और क्षोभ के साथ) ओः गजब होगया!

तीनों :—क्यों क्या हुआ रजनी? (खड़ी होकर समाचार पढ़ने के लिये एक साथ रजनी की ओर लपकती हैं)

रजनी :—बस कुछ न पूछो!

शशिप्रभा :—आखिर कोई बात भी होगी?

शान्ता :—युद्ध के समाचार हैं क्या?

कान्ता :—कहीं रेलवे लाइन का पुल तो नहीं टूट गया?

रजनी :—इससे भी दुःखपूर्ण समाचार हैं।

शशिप्रभा :—ऐसे क्या समाचार हैं, रजनी, बताओ तो सही।
शान्ता :—अरे भारत पर हमला तो नहीं हो गया है !
कान्ता :—मुझे तो कहीं रेलवे दुर्घटना ही हुई जान पड़ती है।
रजनी :—नहीं तुम सब ग़लती पर हो। स्नेहबाला का बूढ़े के साथ ब्याह हो रहा है।
तीनों :—बूढ़े के साथ ब्याह हो रहा है ?
रजनी :—ओह ! वो वीणा देवी जी आईं।

(वीणा देवी का प्रवेश)

रजनी :—आइये वीणा देवी जी नमस्कार !
तीनों :—नमस्कार !
वीणा :—नमस्कार बहनों नमस्कार !
कान्ता :—वीणा देवी जी ग़ज़ब होगया !
शशि :—बेचारी स्नेहबाला पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा।
शान्ता :—कितनी सुशील और सुन्दर है वह।
रजनी :—अगर ऐसा होगया तो बेचारी की ज़िन्दगी ही बेकार समझिये।
वीणा :—बात है सो साफ़ साफ़ कहो न रजनी।
रजनी :—लीजिये यह अखबार (अखबार देती हैं) पढ़िये और इन सबको भी सुना दीजिये।

(वीणा देवी समाचार पढ़ कर सबको सुनाती हैं।)

"सेठ सौभागमल जी की काम लिप्सा का निन्दनीय उदाहरण
एक अबोध बालिका के जीवन को बर्बाद करने का
गर्हित प्रयत्न।
समाज के कर्णधार ध्यान दें।

विश्वस्त सूत्र से मालूम हुआ है कि सेठ सौभागमल जी खाती पुरा वाले अपनी ६० वर्ष की ढलती हुई उम्र में १४ हजार रुपये देकर लाला कजौड़ीमल जी की सुपुत्री स्नेहबाला के साथ अपना विवाह रचा रहे हैं। अभी हमारे सामने पुरानी बस्ती वाले सेठ पकौड़ीमल जी के असामयिक गर्हित व्याह से पैदा हुआ एक निरीह बाल-विधवा का करुण चीत्कार समाज और संसार को कोस ही रहा था कि यह दूसरा वैसा ही उदाहरण और सामने आरहा है। समाज के मान्य नेताओं को चाहिये कि वे इस व्याह को रुकवाने के लिये हर तरह से प्रयत्न करें और एक होन हार बालिका के जीवन को नष्ट होने से बचावें।

—एक समाज सेवक,"

(समाचार पढ़ चुकने के बाद)

रजनी :—बेचारी बहुत ही सीधे और सरल स्वभावकी लड़की है। मेरे साथ पढ़ी है वीणा देवी जी।

वीणा :—ओह, तुम्हारी सहपाठिनी रही है! तब तो तुमको उसकी मदद जरूर करना चाहिये।

रजनी :—हाँ, हाँ मुझे आप कोई उपाय बताइये। मैं स्नेहबाला की मदद करने में कोई बात उठा न रक्खूँगी।

वीणा :—अच्छा तुम एक बार खुद स्नेह से मिलो और यह मालूम करो कि ये समाचार कहाँ तक सच हैं। फिर मुझसे मिलना। मैं तुमको कोई उपाय बताऊँगी।

रजनी :—वीणा देवी जी मेरी सहेली का विवाह मैं एक बूढ़े के साथ हरगिज़ नहीं देख सकती। मैं कल ही स्नेहबाला से मिलूँगी। मैं स्नेहबाला की अवश्य मदद करूँगी।

मैं स्नेहबाला के लिये अपना जीवन तक त्याग दूँगी। क्यों शशि और शान्ता।

शशि और शान्ता:—हाँ बेशक। हम भी आप के साथ हैं।

रजनी:—धन्यवाद! आप लोगों की मदद के बिना तो मैं कर भी क्या सकूँगी।

(पटाक्षेप)

दूसरा दृश्य

स्थान—कजौड़ीमल जी का घर-स्नेहबाला का कमरा

समय—दो पहर।

(कमरे में सतरंज बिछी हुई है। एक तरफ एक अल्मारी और दूसरी ओर कुछ गृहस्थी का सामान पड़ा है। बीच में एक टेबिल और उसके पास दो एक कुर्सियाँ रक्खी हुई हैं। एक कुर्सी पर कजौड़ीमल जी की चौदह वर्ष की पुत्री स्नेहबाला उदास भाव से बैठी हुई एक तकिये के गिलाफ़ पर कसीदा निकाल रही है और कुछ गुन गुना रही है।)

गायन।

हे प्रभो यह ज़िन्दगी भारी हुई।
हूँ व्यथित मैं और घबराई हुई॥

चौ तरफ़ दुःख है, न कोई आस है,
रंज और अफ़सोस में छाई हुई ॥१॥
कोई साथी है, न कोई मित्र है,
लोभ की तलवार से मारी हुई ॥२॥

(गायन समाप्त होते होते रजनी का प्रवेश)

स्नेहः—ओ ! आइये, बहिन रजनी, नमस्कार (कह कर खड़ी हो जाती है ।)

रजनीः—नमस्कार !

स्नेहः—आज तो बहुत दिनों से मिलीं ।

रजनीः—हाँ सोच तो बहुत दिनों से रही थी कि तुमसे मिलूं ।

स्नेहः—पर फ़ुरसत नहीं मिली क्यों यही न ? हाँ जी हम ग़रीबों के यहाँ आने की आपको फ़ुरसत कहाँ ।

रजनीः—लो तुमतो नाराज़ होगई स्नेह । अच्छा बताओ तो क्या *गाना गारही थीं ।*

स्नेहः—(स्वगत) क्या गाना गा रही थी । (प्रकट) गाना वाना कुछ नही रजनी, यों ही कुछ गुन गुना रही थी ।

रजनीः—आज कल क्या काम करती रहती हो ?

स्नेहः—समझो किसी प्रकार दिन कट जाता है ।

रजनीः—इन दिनों कुछ सिलाई बुनाई का काम नहीं रख छोड़ा है क्या ?

स्नेहः—जी में आता है तो कभी कर लेती हूँ, कोई चीज़ पूरी बनने ही नहीं पाती रजनी । कई कपड़े अधूरे पड़े हुए हैं ।

रजनीः—क्यों ? ऐसा क्यों ?

स्नेहः—किसी में क्या समझ में नहीं आया किसी में क्या? सोच रही थी किसी दिन रजनी मिलेगी तो उससे इकट्ठा ही पूरा करवाऊँगी।

रजनीः—मुझे बुलवा क्यों नहीं लिया स्नेह? इस तकिये के गिलाफ़ पर क्या बना रही हो!

स्नेहः—एक फ़ूल बना रही हूँ।

रजनीः—देखूँ कैसा फ़ूल है?

(स्नेह तकिये का गिलाफ उठाकर देती है।)

स्नेहः—इसकी पंखुड़ियाँ कैसे बनेंगी यह कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

(रजनी गिलाफ को बहुत ध्यान पूर्वक देख रही है)

रजनीः—ओः मैं समझी यह गिलाफ़·········एक बात पूछूँ स्नेह बताओगी।

स्नेहः—(ज़रा रुक कर) हाँ क्यों नहीं बताऊँगी!

रजनीः—मैंने सुना है तुम्हारी·····················।

स्नेहः—हाँ, हाँ कहो रुक क्यों गई रजनी? यही न सगाई होगई है। इतना ही सुना या और भी कुछ सुना? शायद तुम उसकी मिठाई माँगने आई हो।

रजनीः—मैं तो तुमको सीधे २ पूछ रही थी स्नेह, इतना बिगड़ क्यों गई? तुम्हें मेरा आना अच्छा नहीं लगा? लो मैं जाती हूँ।

स्नेहः—मुझे सगाई की बधाई देने आई थी, वह तो देती जाओ।

रजनीः—आज तुम मुझे इतनी जली कटी क्यों सुना रही हो, स्नेह! मेरे प्रति तुम्हारा रुख एक साथ ही क्यों बदल गया है?

स्नेह :—मेरा रुख़ तुम्हारे प्रति क्या आज दुनियाँ ही के प्रति बदला हुआ है। मैं दुनियाँ से बदली हुई हूँ और दुनियाँ मुझसे बदली हुई है।

रजनी :—तुम मुझे भी उस दुनियाँ में शामिल कर रही हो स्नेह ?

स्नेह :—मुझे जन्म देने वाले माँ बाप ही जब उस दुनियाँ में शामिल हो गये तो तुम उससे कैसे बच सकती हो।

रजनी :—नहीं स्नेह! ऐसा कभी न कहो। मुझे तुम अपनी वही सहेली समझो। मैं जानती हूँ मनुष्य पर जब आफ़त आती है तो वह अपने-पराये, दोस्त-दुश्मन सबको अपने से बदला हुआ समझने लगता है। किन्तु तुम विश्वास रक्खो मैं तुम्हारी वही रजनी हूँ। जबसे मुझे यह ख़बर मिली मेरा अपना जी भी बहुत दुःखित हो रहा है। मैं इस समय तुम्हारे सामने यह चर्चा चलाती भी नहीं। जानती थी ऐसी बात मुँह पर लाते ही तुम्हें दुःख का उफ़ान आ जायगा। किन्तु कल वीणादेवी जी मिली थीं। वे तुम्हारे लिये बहुत चिन्तित हैं। बोलीं हम इस व्याह को रुकवाने के लिये हर प्रकार का उपाय करेंगी, तुम पहले जाकर स्नेह से मिलो और इसके सत्यासत्य का निर्णय करो। ख़ैर, हाँ यह तो बताओ तुम्हारे अम्माजी इस में शामिल कैसे हो गईं ?

स्नेह :—शुरू में तो वे ख़िलाफ़ ही रहीं किन्तु तुम जानती हो रुपये का लोभ बुरा होता है। और फिर हमारे घरों में औरतों की चलती भी कितनी है ?

रजनी :—अच्छा, तुम किसी बात की चिन्ता न करो। वक्त पर जो होगा सो देखा जायेगा मैं जानती हूँ यह तुम्हारे जीवन मरण का सवाल है। मैं .खुद भी तुम्हारे अम्माजी से मिलती किन्तु सोचा बात कुछ ठंडी पड़ जाने पर मिलूँ तो ठीक है। लेकिन तुम सब तरह से निश्चिन्त रहो। भगवान हमारी जरूर रक्षा करेंगे। हाँ इसमें तुम्हारे सहयोग और आत्म बल की अपेक्षा जरूर है। अच्छा, अब मैं जाती हूँ। कहो तो पुस्तकालय से प्राचीन सती-साध्वियों की जीवनियाँ पढ़ने को भेजदूँ उनके पढ़ने से तुम्हें बहुत कुछ ढाढस बँधेगा। तुम देखोगी स्त्रियों पर कैसी कैसी आपदायें आई हैं और फिर भगवान ने उनकी किस तरह से रक्षा की है। जब तुम्हें चिन्ता और निराशा आ घेरे तो ऐसी ही पुस्तकें पढ़ा करो। अच्छा, अब मैं जाती हूँ, नमस्कार।

स्नेह :—नमस्कार ! फिर जल्दी ही मिलना।

पटाक्षेप

तीसरा दृश्य ।

स्थान रास्ता ।

(नात स्त्रियाँ जिन-मन्दिर के मार्ग में परस्पर बात-चीत करती हुई जा रही हैं ।)

पहली स्त्री :—अजी आपने भी सुना ?

सब :—क्या ?

पहली स्त्री :—सेठ सौभागमल जी हैं न। वे नीली हवेली वाले ·

दूसरी स्त्री :—हाँ, हाँ ....

तीसरी स्त्री :—वे सफेद दाड़ी मूँछों वाले क्या ?

चौथी स्त्री :—वही क्या जो खाँसते खाँसते रोज सुबह हमारे रास्ते से मन्दिर जाया करते हैं ?

पहली स्त्री :—हाँ बिल्कुल वे ही ।

दूसरी स्त्री :—सो क्या हुआ उनका ?

तीसरी स्त्री :—सौ वर्ष तो नहीं पहुँच गये उनको ?

चौथी स्त्री :—अजी कुछ दिनों से बीमार तो थे ।

पहली स्त्री :—राम ! राम ! तुम भी बेचारों के लिये क्या अपशब्द मुँह से निकाल रही हो !

दूसरी स्त्री :—अच्छा तो कोई ख़ुशी की बात होगी ।

तीसरी स्त्री :—घरमें बाल बच्चा हुआ है क्या ?

चौथी स्त्री :—अजी हाँ अब समझ में आया। उनकी पोते की बहू का कुछ दिन हुए आठवाँ मनाया गया था ।

पाँचवीं स्त्री :—ओहो। तब तो बड़ी खुशी की बात है कि सेठ जी ६० वर्ष की उम्र में भी मरते मरते पड़ पोते का मुँह देख रहे हैं।

चौथी स्त्री :—बड़ भाग वालों की यही बात है साहब।

तीसरी स्त्री :—हाँ जी आज दिन उनके घर में पाँच पाँच बेटे बहू की जोड़ियाँ हैं। चार चार पोते और उनके भी बहुएँ मौजूद हैं।

चौथी स्त्री :—पड़पोते की कमी थी सो वह भी पूरी हुई।

पाँचवी स्त्री :—अजी बेल पर बेल बढ़ती ही जा रही है।

छठी स्त्री :—सेठ जी को आज दिन परिवार का ही सुख नहीं है, घर भी खाता पीता है।

सातवीं स्त्री :—देखो न हवेली कितनी बड़ी है। ओहो मैंने तो इतनी बड़ी हवेली किसी के भी नहीं देखी। चार तो उसके बड़े बड़े दरवाजे हैं और सबके चाँदी के किवाड़ लगे हुए हैं।

दूसरी स्त्री :—आज दिन सैंकड़ों आदमी तो उनके लोहे के कारखाने में काम करते हैं।

तीसरी स्त्री :—हजारों रुपये की आमद है साहब।

चौथी स्त्री :—तभी तो सब बहुओं के हाथ पाँव सोने चाँदी से लथपथ हो रहे हैं।

पाँचवीं स्त्री :—अजी, सोने चाँदी के गहने ही क्या पाँच पचीस लाख तो बहुओं के पास अपने खर्चे के लिये रोकड़ी जमा होंगे।

छठी स्त्री :—बाईजी, उनका बड़ा ही बड़ा लड़का विहारी बहुत समझदार है। काम करने में भी चतुर है। उसने

अपने सब कारोबार को इस तरह सँभाल रक्खा है कि सेठ जी तक किसी बात की आँच ही नहीं आने पाती।

सातवीं स्त्री :—होना ही चाहिये बाईजी, सेठ जी अब कितने दिन के। उनके तो ये दिन भजन विराग के हैं।

दूसरी स्त्री :—क्यों जी! लड़का कैसा हुआ है? तुमने देखा आँखों से?

पहली स्त्री :—अरे लड़का वड़का कुछ नहीं हुआ। तुम तो सब बावली होगई हो। अपने मन से ही लड़का होने का मन्सूबा बाँध लिया। लड़का बच्चा होगा सो तो हो ही जायगा। पर मैं तो तुम्हें इससे भी ख़ुशी की बात सुना रही थी।

सब :—अच्छा यह बात है?

दूसरी स्त्री :—भला वह बात कौनसी है?

पहली स्त्री :—अभी एक महीने पहले ही सेठ जी की घरवाली चल बसी थी यह तो तुम लोगों को मालूम ही होगा?

सब :—हाँ, हाँ सो।

पहली स्त्री :—अब वे दूसरी घरवाली लाने की और सोच रहे हैं।

सब :—क्या मतलब?

पहली स्त्री :—अरे वह व्याह कर छोटी सी वधू और ला रहे हैं।

दूसरी स्त्री :—राम! राम! इस बुढ़ापे में और व्याह!

तीसरी स्त्री :—नहीं जी यह भी कभी हो सकता है?

चौथी स्त्री :—बाईजी, हमारे तो यह बात गले उतरती ही नहीं है।

पहली स्त्री :—अजी साहब कल ही मैंने गुलाब ब्यासन से सुना था। वह कहती है बात बिल्कुल पक्की हो चुकी है सिर्फ दुलाल अपनी दलाली के लिये अड़ रहा है।

पहली स्त्री :—अजी इसी धूप दशमी को उसे चौदहवाँ साल लगा है। आप जानती नहीं ठठेरों की गली में वह मिर्च वाले हैं उन्हीं की लड़की हैं। नाम भी देखो जी मेरी जीभ के नीचे आ रहा है।

तीसरी स्त्री :—अजी वह कजौड़ीमल जी क्या ?

पहली स्त्री :—हाँ, हाँ वही।

चौथी स्त्री :—क्यों जी ! चार पाँच हजार तो लिये ही होंगे।

पहली स्त्री :—अजी पूरे चौदह हजार गिनाये हैं। सौदा पटने लगा तो दलाल से बोले एक-एक वर्ष के पूरे एक-एक हजार रुपये लूँगा।

दूसरी स्त्री :—राम, राम कैसा जमाना आया है ! निर्दयी माँ बाप अपनी प्यारी बेटियों को भी धनके लोभ में आकर बेच डालते हैं।

तीसरी स्त्री :—अजी वह कोई बाप है क्या ? कसाई है पूरा कसाई।

पहली स्त्री :—अच्छा होता लड़की जन्मते ही मर जाती तो उसको आज यह दिन क्यों देखना पड़ता ?

चौथी स्त्री :—क्यों जी ! लड़की है तो पढ़ी लिखी वह चुप चाप अपना गला कटवाने के लिये गर्दन झुका लेगी क्या ?

पहली स्त्री :—अजी लड़कियों के बेचारियों के जीभ कहाँ है ? वे तो गाय हैं। जिसके साथ बाँध दो उसी के साथ चुपचाप चली जायेंगी।

सातवीं स्त्री :—हे भगवान ! तू भी ग़रीबों की सुध नहीं लेता है।

छठी स्त्री :—अरे यह इतना बड़ा समाज है वह भी इन कसाइयों की करतूतों पर कुछ नहीं बोलता।

दूसरी स्त्री :—लो अब अपने सोच किये क्या होता है। चलो देर हो रही है।

पहली स्त्री :—देखिये क्या होता है। मैं समझती हूँ हमारे यहाँ आजकल महिला मंडल खुला है, वह इसका अवश्य विरोध करेगा। शायद है इस ब्याह को भी रुका सके।

सब :—लो यह मन्दिर आगया।

गायन।

चलो वीर भजन मन्दिर सजनी।

आओ वीर प्रभू को गाती चलें, मन में हम उसको ध्याती चलें,

सब सदा करें उत्तम करनी ॥१॥ चलो वीर०॥

मग में पग जल्दी उठाती चलें, अपने दिल को हरसाती चलें,

हम वीर प्रभू की किंकरनी ॥२॥ चलो वीर०॥

(यह गीत गाती हुई सब स्त्रियाँ मन्दिर की ओर चली जाती हैं)

चौथा दृश्य।

स्थान—वीणादेवी का सुसज्जित कमरा।

कमरे में रंगीन कारपेट और उसके ऊपर खूबसूरत कालीन बिछा हुआ है। एक तरफ एक बड़ा शीशा लगा हुआ है। चारों कोनों में गुलाब और जूही के गमले रक्खे हैं। बीच में एक बड़ी टेबिल और उसके चारों तरफ सोफा सेट की मखमली कुर्सियाँ रक्खी हुई हैं। टेबिल के ऊपर एक रंगीन टेबिल-पोश और इधर उधर दो गुलदस्ते रक्खे हैं।

(वीणादेवी एक कुर्सी पर बैठी हुई हिन्दी का दैनिक पत्र पढ़ रही है।)

(रजनी का प्रवेश)

वीणा :—(रजनी की ओर देखकर) आइये बहन रजनी, नमस्कार।
(कहते हुए उठ कर खड़ी हो जाती है।)

रजनी :—नमस्कार, वीणादेवी जी।

वीणा :—बैठिये। (दोनों बैठ जाती हैं।)

वीणा :—कहिये आप फिर स्नेहबाला से मिलीं ?

रजनी :—हाँ मिली थी।

वीणा—क्या खबर है ?

रजनी :—बात बिल्कुल सही है। इस संबंध में खुद स्नेहबाला से जाँच पड़ताल करना तो मैंने उचित नहीं समझा। कारण मैंने उसके ब्याह का नाम लिया भी नहीं था

और वह मुझ पर ऐसी उबल पड़ी कि उसको धीरज बंधाना भी कठिन हो गया। सोचा रजनी मेरा मज़ाक करने आई है।

वीणा :—हाँ रजनी सच है। दुःखी आदमी के सामने उसके दुःख का जिक्र किया जाता है तो वह उसका उल्टा ही अर्थ लेता है। चाहे कहने वाला उसका हितैषी से हितैषी दोस्त ही क्यों न हो। एक बार तो उसके दिल में शक होगा ही।

रजनी :—मैंने फिर उसको बहुत समझाया और उसके ख़याल को भी सुधार दिया। आपका भी जिक्र चला दिया था। आपके नाम से उसे बहुत सान्त्वना मिली।

वीणा :—तो बात बिल्कुल सही है ?

रजनी :—हाँ बिल्कुल सही है। मैं मन्दिर में उसकी माँ से भी मिली थी। उसको भी मैंने बहुत कुछ उल्टा-सीधा सुनाया। अपने किये का समर्थन करने के लिये वह कहने लगी अजी हमने हमारी लड़की को कोई भूखे घर में थोड़े ही दिया है। वह तो पूरे धापते घर में जा रही है। रंग महलों में सोयेगी। सोने चाँदी से लदी रहेगी। ज़रीकी साड़ियों और रेशमी लहंगों से सजी रहेगी। वीणादेवी जी मैं इससे आगे बर्दाश्त नहीं कर सकी और उसको भी रूखी सुनाने लगी—हाँ और तुम भी तो इस बुढ़ापे में अपनी बेटी की बदौलत सोने से पीली हो जाओगी। झोंपड़ी से महल बना लोगी। सूखी रोटी के बदले रोज हलुआ पूरी उड़ाओगी। बस इस

पर तो वह मुझ पर आग बबूला होगईं और पढ़ी लिखी लड़कियों के लिये बहुत बुरा-भला सुनाने लगीं।

वीणा :—रजनी ! तुमने ग़लती की। तुम्हें कुछ शान्ति से काम लेना चाहिये था।

रजनी :—यह फिर मुझे भी महसूस हुआ। अच्छा अब क्या होगा वीणादेवी जी ?

वीणा :—हम कल ही महिला-मंडल का आम अधिवेशन करेंगी और उसमें इस व्याह का जोरदार विरोध करेंगी। विरोध में प्रस्ताव पास हो जाने पर व्याह को रुकवाने के लिये हर तरह की कोशिश की जायेगी। जगह जगह नोटिस चिपकाये जायेंगे। मन्दिरों-मन्दिरों में विरोध स्वरूप सभायें की जायेंगी। अख़बारों में भी इसका आन्दोलन किया जायगा।

रजनी :—अगर इसमें भी सफलता न मिली तो।

वीणा :—तो फिर सरकार से मदद लेनी पड़ेगी।

रजनी :—सरकार इसमें क्या करेगी ?

वीणा :—स्नेहबाला से हम सरकार के नाम एक दरख़्वास्त लिखालेंगे।

रजनी :—दरख़्वास्त में क्या होगा ?

वीणा :—दरख़्वास्त में यही होगा कि मेरे माता पिता धन के लोभ में आकर मेरी इच्छा के विरुद्ध मेरा एक ६० वर्ष के बूढ़े के साथ विवाह रचा रहे हैं। कृपया इसे जल्द से जल्द रुकवाया जाय और मेरी जिन्दगी को बरबाद होने से बचाया जाय।

रजनी :—ठीक है। अन्त में यही उपाय करना पड़ेगा, तो उस

बूढ़े के और कजौड़ीमल के होश दुरुस्त होंगे! अच्छा अब मैं जाती हूँ कल सभा के लिये क्या क्या तैयारी करनी होगी ?

वीणा :—मैं अभी नोटिस जारी करवा देती हूँ। समय रात को आठ बजे का ही ठीक रहेगा।

रजनी :—हां यही समय ठीक है। अच्छा नमस्कार।

वीणा :—नमस्कार!

(रजनी का प्रस्थान और पटाक्षेप)

पांचवाँ दृश्य।

स्थान—विद्युत्बाला देवी के मकान के पीछे का बगीचा।

विद्युत्बाला देवी आरामकुर्सीपर बैठी हुई पेन से कुछ लिख रही है। बीच में एक फुहारा चल रहा है। आस पास दो एक कुर्सियां रक्खी हैं। चारों तरफ तरह तरह के फूलों के गमले रक्खे हैं। छोटे छोटे पेड़ लगे हुए हैं और उन पर लताएं छा रही हैं।

(सुधांशुबाला देवी का प्रवेश)

सुधांशुबाला :—विद्युत्! नमस्कार।

विद्युत्बाला :—(चौंककर) ओः सुधा आइये। आप नैनीताल से कब आ गई।

सुधा :—कल ही सुबह की मेल से आइ हूँ।

विद्युत् :—अब तुम्हारे पिता जी का स्वास्थ्य तो ठीक है न ?

सुधा :—हाँ, ईश्वर की दया से अब वे बिल्कुल अच्छे हैं।
विद्युत् :—बड़ी ख़ुशी की बात है कि अब आराम हो गया।
सुधा :—हाँ धन्यवाद है परमात्मा को। यह क्या लिख रही हो विद्युत् ?
विद्युत् :—यह तो मैं एक प्रस्ताव तैयार कर रही थी। आज शाम को टाउनहाल में महिला-मंडल का अधिवेशन होने वाला है न।
सुधा :—क्यों कल किस बात को लेकर अधिवेशन किया जा रहा है ?
विद्युत् :—तुम्हें मालूम नहीं सुधा ! बेचारी स्नेहबाला पर वज्रपात ....
सुधा :—क्यों कैसा वज्रपात ?
विद्युत् :—तुमने कुछ भी नहीं सुना ?
सुधा :—हाँ नहीं तो। स्नेहबाला पर कैसा वज्रपात हो रहा है ? उसके पिता जी तो अच्छे हैं न। बेचारी की एक वे ही ख़बर लेने वाले हैं। वे नहीं हों तो उसके पीले हाथ होना भी मुश्किल है।
विद्युत् :—हाँ उन्हीं की कृपा से यह वज्रपात हुआ है।
सुधा :—मैं समझी नहीं, विद्युत् साफ़ साफ़ कहो न।
विद्युत :—परसों उसका विवाह हो रहा है।
सुधा :—हाँ यह तो बड़ी ख़ुशी की बात है। इसमें क्या वज्रपात हो गया ?
विद्युत् :—विवाह होना खुशी की बात हो सकती है किन्तु एक होनहार बालिका का एक बूढ़े के साथ विवाह होना वज्रपात से भी बुरा है।

सुधा :—बूढ़े के साथ विवाह !

विद्युत् :—हाँ सुधा, बूढ़े के साथ विवाह ।

सुधा :—यह तुम क्या कह रही हो विद्युत् !

विद्युत् :—मैं सच ही कह रही हूँ सुधा।

सुधा :—उसके पिता जी ने ऐसा क्यों होने दिया ? वे तो उसे बहुत प्यार करते थे ।

विद्युत् :—उन्हों ने ही उसको चौदह हजार रुपया लेकर सेठ सौभागमल जी के हाथ बेच दिया।

सुधा :—सेठ सौभागमल जी ? वह खाती पुरे वाले ?

विद्युत :—हाँ वही।

सुधा :—उनकी स्त्री का कब देहान्त हो गया।

विद्युत् :—यही कोई डेढ़ महीना हुआ है ।

सुधा :—समाज वालों ने इसका कुछ भी आन्दोलन नहीं किया ?

विद्युत् :—समाज वाले क्या करते । वे तो खुद रुपये के गुलाम हैं। वे जिधर से रुपया मिल जाता है उधर से ही चुप्पी साध जाते हैं ।

सुधा :—नव-युवक सम्मेलन और समाज - सुधारक - मंडल भी कुछ नहीं देखता ।

विद्युत् :—समाज-सुधारक-मंडल के उपर सेठ जी का पाँच हजार रुपये का क़र्जा है और नव-युवक-सम्मेलन के सभापति सेठ जी के भानजे और मंत्री जी उनके मुनीम के लड़के हैं । इस लिये कुछ भी नहीं बोल सकते ।

सुधा :—प्रजा-सम्मेलन वाले बाबू उत्तमचन्द जी तो ऐसे मामलों में आगे आये बिना नहीं रहते। वे भी नहीं बोले क्या ?

विद्युत् :—इसी सर्दी में उनकी लड़की कुल-भूषणा का विवाह हो रहा है। सेठजी ने उनको दो हज़ार रुपया देने का वचन दिया है।

सुधा :—कुरीति-निवारक-मंडल तो ऐसे मामलों में बहुत आगे रहता है।

विद्युत् :—अजी उसके उपसभापति सेठ जी के बड़े लड़के विहारी के पक्के दोस्त हैं। वे रात दिन एक साथ चौपड़ खेला करते हैं और साथ साथ रोज़ सिनेमा जाया करते हैं।

सुधा :—विवाह-सुधारक सभा वालों को तो ऐसे मौके पर अपनी आवाज़ बुलन्द करना चाहिये था।

विद्युत् :—विवाह-सुधारक सभा वालों में कार-गुज़ार आदमी एक बाबू रूप सहाय जी हैं। दो महीने पहिले ही उनके लड़के जम्बूप्रसाद का विवाह हुआ है। और वे उसमें पूरे १० हज़ार रुपये समीरमल जी रईस नागपुर वालों से दहेज में और टीके में ले चुके हैं,इससे उनकी प्रतिष्ठा में बहुत धब्बा लगा है। अब वे आगे होकर बोलना नहीं चाहते।

सुधा :—तो पुरुष समाज में से किसी का कोई वश ही नहीं चल रहा है जो इस ब्याह को बन्द करा सके।

विद्युत् :—पुरुष समाज की ओर से शुरू ही शुरू में इस ब्याह के विरोध स्वरूप एक अखबार में समाचार प्रकाशित

हुए थे। और वे भी गुम नाम से निकाले गये थे। इसके लिये सेठजी ने बाबू गुरू-मुखराय पर सन्देह किया है जो एल. एल. बी. फाइनल का इम्तहान देने जा रहे हैं। उनके पिताजी अपनी हवेली १० हज़ार रुपये में सेठ जी के गिरवी रख कर गये थे। सेठ जी रुपयों की डिग्री करा कर बेचारों की हवेली नीलाम कराने की सोच रहे हैं।

सुधा :—तो फिर अन्त में महिला-मंडल ही ने इस ब्याह को बन्द कराने का बीड़ा उठाया दीखता है। इस सम्बन्ध में मंडल पहला ही अधिवेशन कर रहा है क्या ?

विद्युत् :—नहीं सुधा इसके पहले एक अधिवेशन और हो चुका है।

सुधा :—उसमें क्या हुआ ?

विद्युत् :—उसमें यह तय हुआ था कि सेठ सौभागमलजी कजौड़ीमल जी और कजौड़ीमल जी की स्त्री तीनों के पास ख़ास, ख़ास सदस्याओं का डेपुटेशन भेजा जाय, अगर वे किसी तरह मानें ही नहीं तो इसको रुकवाने के लिये समाज में ख़ूब आन्दोलन किया जाय।

सुधा :—डेपुटेशन तीनों के पास गये भी होंगे ?

विद्युत् :—हाँ गये थे, पर वे सफ़ल नहीं हो सके। लाला कजौड़ीमल तो डेपुटेशन से मिले ही नहीं। हम लोग पहुँचे तो वे चादर ओढ़कर ऊपर कमरे में बुख़ार का बहाना

लेकर सो रहे। सुधा, तुम जानती हो पाप और नीचता की भी हद होती है। ऐसे आदमी तो अपने कुटुम्ब-कबीले और व्यवहार वालों से भी मिलना जुलना बन्द कर देते हैं। स्नेह की माँ अलबत्ता कुछ पिघलाई जा सकती थी, पर वह हम लोगों से पहले ही चिढ़ी हुई थी। जाते ही हम लोगों को उल्टा सीधा सुनाने लगी। सेठ सौभागमल जी से बहुत बातें हुईं। उनको हमने ऊँचा नीचा भी बहुत लिया। समाज में आप इतने प्रतिष्ठित हैं अच्छे खान दान और भरे पूरे कुनबे वाले हैं। अब आपको ऐसी कौनसी जरूरत रह गई जो विवाह बिना काम नहीं चल सकता। चाहिये तो यह कि अब आप अपना सब समय धर्म-ध्यान और समाज-सुधार के कामों में दें। इससे आपका अपना जीवन भी उज्ज्वल होगा और पीछे अपनी कीर्ति भी छोड़ते जायेंगे। लज्जित तो वे बहुत हुए और उन्होंने अपनी गलती भी मन में तो अवश्य महसूस की होगी किन्तु ब्याह करने पर पूरे तुले ही रहे। अपनी बात का समर्थन करने के लिये न जाने क्या-क्या उदाहरण सुनाने लगे। यह भी कहा कि यदि कोई आदमी अटल ब्रह्मचर्य से नहीं रह सकता तो फिर वह क्या करे। ब्याह करना उसके लिये अनिवार्य हो ही जाता है। हमने तो फिर उनको यहाँ तक शर्मिन्दा कर दिया कि देखिये आपके घर में ही आपके छोटे ही छोटे पोते की षोड़श वर्षीया बहू यौवन के प्रभात काल में वैधव्य का जीवन

विता रही है। आप उसी की तरफ़ देख कर संतोष न कीजिये ?

सुधा :—तुम्हारी बातों से ऐसा मालूम हुआ कि आदमी बहुत ही पतित और नीच है। ख़ैर जाने दो अब इन बातों को। अब क्या करने का इरादा है ? स्वयं स्नेह को ही हम विरोध के लिये तैयार क्यों न करें ?

विद्युत :—हाँ सोचा तो ऐसा ही था कि उससे सरकार के नाम एक दरख़्वास्त लिखालेंगे। लेकिन वह इन्कार होगई। बोली—विद्युत, मेरे कारण मेरे माँ बापों को पहले ही इतनी बुराई उठानी पड़ रही है कि एक इन्सान उसको सुन भी नहीं सकता। जिधर जाते हैं। उधर लोग दुतकारते हैं, धिक्कारते हैं, छोटे छोटे लड़के तो उन पर पत्थर तक फेंकने लग गये। कई दिन हुए वे घर से बाहर तक नहीं निकले। यदि मैं यह दरख़्वास्त वगैरह लिख देती हूँ तो पता नहीं बेचारों पर क्या मुसीबत पड़ जाय। आप लोग भी मेरे लिये क्यों इतनी तकलीफ़ उठा रही हैं। भाग्य में लिखा हुआ किसी तरह टल नहीं सकता। मेरा, होनहार खोटा था तभी तो मेरे पिताजी की बुद्धि फिरी न। और दूसरी बात यह है कि स्नेहबाला के माता-पिता उसे किसी से मिलने भी नहीं देते। बेचारी को रात दिन घर में बन्द रखते हैं। सोचते हैं कोई बहका कर इसे ले न जाय।

सुधा :—विद्युत् आखिर वह उनकी बेटी है। उनकी बेइज्जती और बदनामी से उसको दुःख होना ही चाहिये।

विद्युत् :—तुम्हीं बताओ अब आखिरी उपाय क्या होना चाहिये? आज का दिन और है। कल फेरे फिरा ही दिये जायेंगे।

सुधा :—अच्छी बात है आज शाम को सभा हो ही रही है। मैं भी आऊँगी। वहाँ जो कुछ भी तय हो उसी पर निर्भर रहना पड़ेगा। मैं भी आप लोगों का साथ जी-जान से दूँगी अच्छा अब जाती हूँ। पिताजी के चाय पीने का समय होगया है।

विद्युत् :—अच्छा आज शाम को अवश्य आना।

सुधा :—नमस्कार।

विद्युत् :—नमस्कार।

(विद्युत् चली जाती है)

पटाक्षेप

छठा दृश्य

स्थान--कजोड़ीमल जी का घर।

(एक कमरे में दरी बिछी हुई है। सामने दीवार पर दो बड़े बड़े शीशे लगे हुए हैं। अगल बगल में दो छोटी छोटी टेबिलों पर फूलदान रक्खे हुए हैं। बीच में एक बड़ी टेबिल रक्खी हुई है। उस पर नीचे तक लटकता हुआ ज़री के काम का पोश रक्खा हुआ है। टेबिल पर सेठ सौभागमल जी के यहाँ से आये हुए चाँदी के लाल कपड़े से ढके हुए दो बड़े बड़े थाल रक्खे हुए हैं जिनमें बहु मूल्य हीरे मोती तथा सोने के ज़ेवर अपनी चका-चौंध फैला रहे हैं। पास ही दो छोटी छोटी टेबिलों पर बहु मूल्य जरी गोटे के काम के कपड़े रक्खे हुए हैं जिनको एक एक को उठा-उठा कर स्नेह की मां आगन्तुक महिलाओं को दिखा रही हैं। और आपस वे में बात-चीत कर रही हैं। एक तरफ स्नेहलता खिन्न और उदास मुख लिए सिलाई का काम कर रही है।

पहली स्त्री :—न्याल बाई की मौं अब तो आँकी बेटी के ठाठ छै।

स्नेह की माँ :—हाँ जी अब म्हारी बेटी के काँई कमी। रंग महलां में सोवेली। सोना और चाँदी सूँ लदी रहली। जरी की साड़्या और रेशमी लंहगा सूँ सजी रवेली।

दूसरी स्त्री :—हाँ साहब पूरी बड़ भागन छै।

तीसरी स्त्री :—पहला भवमें सुवरत करया जी का फल छै साब

मा :—अजी लोग तो घणी ही निन्दा करे छै। पर बाँकी निन्दा करवाँ सूँ काँई हे छै। म्हारी बेटी को घर देख लुगायां के पेट में पाणी हो गयो।

पहली स्त्री :—अजी नहीं जी घर और कुटुम्ब कबीलो चाय जे। लड़को बरस दो बरस बड़ो है तो काँई है छै। बाँ रूपचन्द जी ने तो काल ब अनाज हाला छोटा ही देख्या छाक दो महिना पाछे ही बाँकी लड़की विधवा हो गई।

दूसरी स्त्री :—अजी सुहाग दुहाग तो तकदीराँ का खेल छै।

तीसरी स्त्री :—क्यों जी कत्ताक तो लो सोनो हो लो।

माँ :—अजी ५००) तोला सोनों और सारा जोड़ चाँदी का छै।

चौथी स्त्री :—अजी थे देख्या बेस कस्याक बद, बदका छै।

दूसरी स्त्री :—अजी २५) थाल तो बरफी का छै।

तीसरी स्त्री :—अजी ल्यो चालो देर हो रही छै। चालो जी चालो अब चालां।

तीनों :—ल्यो चालो।

सब :—आच्छयाँ न्हयाल बाई का माँ जावां छां।

मां :—देखो शाम ने गीतां में जरूर आज्यो ।

(सब चली जाती हैं) बाहर आने पर ।

पहली स्त्री :—देख्या थे । बिचारी फूल सी छोरी ने आ मावली काली धार डुबोव छै ।

दूसरी स्त्री :—क्यूँ जी सेठ जी कत्तोक बड़ो छै ।

तीसरी स्त्री :—अजी पूरो ६० बरस को छै । म्हांक दादाजी के मान छै ।

चौथी स्त्री :—ई लोभी कजौड़ीमल कै भी नरकाँ को बंध बंधेलो ।

पहली स्त्री :—छोरी बिचारी कत्ती उदास हो रही छै ।

दूसरी स्त्री :—अजी तो बा काँई टाबर थोड़े ही छै । सब समझै छै । देखो जी इ माँन भी आपकी बेटी बेचता क्यों ही दरद को न आयो ।

दूसरी स्त्री :—अजी रुप्याँ को ढेर देखर कुण न दरद आव छै ।

तीसरी स्त्री :—बाबा अस्या कांई रुप्या भाया जो बेचारी ने कुआं में ही गेर दी ।

चौथी स्त्री :—दस पांच बरस ही बड़ो हो तो असी कोई बात कोन छी । पण ओ तो पूरो ६० बरस को छै ।

दूसरी स्त्री :—मैं तो जाणूँ सेठ जी अब बरस दो बरस ही निकाल लो ।

तीनों :—हाँजी और कांई ।

पहली स्त्री:—ल्यो आओजी आओ अब चालां देर हो रही छै—

(सब चली जाती हैं)

पटाक्षेप

सातवाँ दृश्य ।

स्थान—स्नेहबाला का कमरा ।

(स्नेहबाला उदास भाव से बैठी कुछ गुन गुना रही है ।)

गायन ।

प्रभु बिन मोरी कौन शरण है मैं विपदा की मारी ।
मात पिता अरु कुटुम्ब कबीला ये स्वारथ के सीरी हैं ।
काम पड़े वे मतलब के वश, सब आपस में भीरी हैं ॥
मेरा कोई हितू नहीं है बिगड़ी दुनियाँ सारी ॥१॥
जिन हाथों ने खिला पिलाकर अजा पुत्र को पाला है ।
निष्ठुर बनकर इक दिन उसको, छुरी चलाकर मारा है ॥
मेरा भी तो हाल यही है मैं विपदा की मारी ॥२॥

(गायन के पश्चात्)

अपने आप

स्नेहबाला :—रंग महलों में सोयेगी ! सोने और चाँदी से लदी रहेगी ! जरी की साड़ियों और रेशमी लंहगों से सजी रहेगी !!

वो देखो, वो देखो, ये असंख्य तारे मेरी ही ओर देख कर हँस रहे हैं । यह अनन्त आकाश मेरी ही दुर्दशा पर अट्टहास कर रहा है । यह विशाल पृथ्वी

मेरी ही दशा को देखकर मुस्करा रही है। यह निठुर चाँद भी मेरा ही उपहास कर रहा है। वो देखो मुझे चिढ़ाने के लिये छोटे छोटे लड़कों का झुंड आ रहा है। मेरी सहेलियाँ मुझे देखकर अन्दर ही अन्दर मुसकरा रही हैं। माताएँ मेरे ही बारे में काना फूँसी कर रही है। लोग मेरी ही ओर अंगुली उठा कर कह रहे हैं—वह जा रही है वह जारही है। वह बूढ़े की होने वाली पत्नी जा रही है। ओ मुझे जन्म देने वाली मां तुमने मुझे जन्मते ही क्यों नहीं मार डाला ? क्यों मुझे खिलाया-पिलाया ? क्यों मुझे बड़ा किया ? क्यों मुझे लाड़-प्यार किया ? क्यों मुझे प्रेम से थपथपाया। क्या मुझे इसीलिए जन्म दिया था कि आज मैं दुनियां भर की शर्म, ग्लानि और उपहास की चीज़ बनूं ?

ओ माँ पृथ्वी तू क्यों नहीं मुझे अपने अन्दर समा लेती है ? हे गंभीर समुद्र तू क्यों नहीं मुझे निगल जाता ? हे विशाल पर्वत तू क्यों नहीं मुझ पर एक साथ टूट पड़ता ? हे अग्नि देवी तू भी आज शान्त है। तू क्यों नहीं मुझे जला कर ख़ाक कर देती ? मैं तुम से हाथ जोड़ती हूँ ! मुझे वह दिन मत दिखा जब मेरा फूल सा हृदय कुचल दिया जायगा ! मेरे अरमानों का ख़ून कर दिया जायगा ! मेरी इच्छाओं के प्रति जिहाद बोल दिया जायगा। मेरी इज़्ज़त और आबरू को ख़ाक में मिला दिया जायगा।

(कहती हुई मूर्छित होकर ज़मीन पर गिर पड़ती है)

(एक सन्यासिनी का गाते हुए प्रवेश)

गायन

विपद में धैर्य धरो नारी, गिरो नहिं आफत की मारी।
साहस दृढ़ता जोड़ हृदय में, करले बल संचार।
अपने निश्चय को नहि छोड़ो, विमुख होय ससार॥
सहो जन जनकी कुट्गारी॥

नारी में वह तेज तपस्या, क्षार सके यह लोक।
किसकी हिम्मत लगा सके जो उसके मत पर रोक॥
मिटादो कायरता सारी॥

(गायन की आवाज से स्नेह की मूर्छा दूर हो जाती है और वह सन्यासिनी के गायन को ध्यान पूर्वक सुनने लगती है।)

स्नेह :—माताजी प्रणाम।

सन्यासिनी :—आशीर्वाद ! क्या सोच रही थी, बेटी ?

स्नेह :—माताजी आप तो हर एक के मन की बात जानती हैं। आप ही मेरा उद्धार कीजिये। आप ही मुझे इस भयकर पाप से बचाइये।

सन्यासिनी :—बेटी हिम्मत से काम लो। अपने पैरों पर खड़ी हो। भगवान तुम्हारी जरूर रक्षा करेंगे।

स्नेह :—लड़कियों के लिये सब रास्ते बन्द हैं। वे कहाँ से हिम्मत कर सकती हैं माता जी ? और ब्याह के बिषय में तो उनको बिल्कुल मूक रहना पड़ता है। अगर वे आवाज उठाती हैं तो घरवाले रिश्तेवाले और समाजवाले

उनके मुँह पर थप्पड़ मारने हैं। लोग उनको दुत कारते हैं। नफ़रत की दृष्टि से देखते हैं। ब्याह के विषय में उनकी सम्मति कोई मूल्य नहीं रखती। उनकी इच्छा खूँटे के बँधे जानवर की इच्छा है। उनका विरोध पूरी तेज़ी से चलती हुई रेलगाड़ी से टक्कर लेना है।

सन्यासिनी :—सच है किन्तु मनुष्य के साहस की जाँच घोर आपदाओं में ही होती है।

स्नेह :—तो बतलाइये माताजी मैं मेरे साहस का परिचय किस तरह दे सकती हूँ।

सन्यासिनी :—लोभ में अन्धे हुए माँ बाप की बात मत मानो। उनकी बात का ज़ोर दार विरोध करो। समाज की निन्दा और अपवाद की परवाह मत करो।

स्नेह :—समाज की निन्दा को सहलूँगी। किन्तु माँ बाप की बात नहीं मानने पर किधर और किस घर में जाकर रहूँगी ?

सन्यासिनी :—साहसी मनुष्य का वही रास्ता है जिधर वह क़दम बढ़ाले और वही उसका घर है जहाँ वह चला जाय। आजीविका की चिन्ता मत करो। अपने गौरव और अभिमान की रक्षा करो। भूखे रह कर प्राण त्याग देना उत्तम है किन्तु अपनी आत्मा की प्रतिष्ठा को खोदेना अच्छा नहीं। समाज की गालियाँ सहो। लोगों की फटकार सहो। पत्थरों की मार सहो किन्तु अपनी आत्मा को पतित मत होने दो। तुम पढ़ी लिखी लड़की हो। दूसरी लड़कियों

के लिये आदर्श बनो । अगर तुमने इस ब्याह का डट कर मुकाबिला किया तो फिर वृद्ध-विवाह सदा के लिये बन्द हो जायगा । बेचारी हजारों मूक लड़कियों का तुम उद्धार कर सकोगी । इस मौके पर यदि तुम्हें अपने जीवन का भी बलिदान करना पड़े तो हँस-हँस कर अपना जीवन समाप्त करदो किन्तु अपने आप को धन लोलुपी माता पिता और कामुकी सेठ के पाप का शिकार मत होने दो।

स्नेह:—अच्छा माता जी आप आशीर्वाद दीजिये। मैं ऐसा ही करूँ गी

सन्यासिनी:—आशीर्वाद ।

(चली जाती है ।)

पटाक्षेप

आठवाँ दृश्य

स्थान—टाउन-हाल ।

(महिला-मंडल का आम अधिवेशन हो रहा है और सदस्याऐं काफ़ी संख्या में बैठी हुई हैं और सभा की कार्रवाई में दिलचस्पी ले रही है ।)

समानेत्री:— आप लोगों ने श्रीमती रजनीदेवी विदुषी, श्रीमती शान्तादेवी प्रभाकर, श्रीमती कंचनबाला बी० ए० श्रीमती विद्यु त बाला साहित्य-रत्न और शर्मिष्ठा देवी एम० ए० विशारद के व्याख्यान सुने । जिससे

अभिशाप और घृणा की चीज है। अगर इसका दौर दौरा इसी तरह चलता रहा तो यह भी समाज के लिये एक बहुत ही कलङ्क और लज्जा की बात है। इस समय हम लोगों के सामने हमारी अभिन्न सहेली स्नेहबाला के ब्याह का विषय है। जैसा हमने गत अधिवेशन में पास किया था ब्याह को रुकवाने के लिये तीनों महानुभावों के पास डेपुटेशन भी गये। इसका जोरदार आन्दोलन भी किया गया। जगह, जगह पैम्प्लेट भी चिपकाये गये। मन्दिरों मन्दिरों में सभायें भी की गईं। लेकिन कजौड़ीमल और सौभागमलजी के ऊपर इसका कोई असर नहीं हुआ। यदि वे दोनों ही इस भयानक कृत्य के लिये पूरी तरह से डटे रहे और कोई आकस्मिक घटना नहीं घटी तो कल रात को १२ बजे ब्याह की रस्म अदा हो जायगी। ऐसा भी सुना है कि महिला-मण्डल से डर कर वे ब्याह शहर से बाहर जाकर किसी ऐसे स्थान में करेंगे जहाँ लोगों का विरोध हो ही न सके। यह अफ़वाह ही है। कोई विश्वस्त समाचार नहीं मिले हैं। किन्तु यह तय है कि ब्याह जरूर होगा। अब इस समय महिला-मण्डल का क्या कर्त्तव्य है। वह इसको रुकवाने के लिये किस अन्तिम उपाय का अवलम्बन करे यही विषय विचारणीय है। मैं समझती हूँ श्रीमती विद्युत्वाला देवी का आयोजन जो अभी आप लोगों ने सुना

बिल्कुल ठीक है। वह यदि आप लोगों को स्वीकृत हो तो उसी के अनुसार कार्रवाई की जाय। हाँ इसमें बलिदान और त्याग की जरूर आवश्यकता है। हमें इस कार्य में बहुत कुछ सहना पड़ेगा। घरवाले व कुटुम्बी हमारा विरोध करेंगे। सेठजी भी हम पर दबाव डालने की चेष्टा करेंगे पर हमें इस पुनीत कार्य में किसी की भी परवाह न करके सब कुछ बलिदान करने को कटिबद्ध रहना होगा। क्या आप इतना करने को तैयार हैं ?

('हाँ तैयार हैं तैयार हैं' की ध्वनि गूँज उठती है।)

सभानेत्री :—ठीक है मैं आप लोगों की हिम्मत और उत्साह को देखकर प्रसन्न हूँ। मुझे विश्वास है कि हम सब इस कार्य में अवश्य सफल होंगी। आप लोगों से प्रार्थना है कि अभी इस विषय को बिल्कुल गुप्त रक्खा जाय। ग़ैर लोगों से इसकी चर्चा बिल्कुल ही न चलाई जाय। नहीं तो सेठजी कोई दूसरा रास्ता अख्तियार कर लेंगे। मैं आशा करती हूँ कि हर एक बहन अपने साथ में कम से कम ४-४ अन्य महिलाओं को लेकर मौके पर उपस्थित रहेंगी। अब मैं आज की सभा का कार्य समाप्त करती हूँ।

पटाक्षेप।

नवाँ दृश्य ।

(स्थान—कजौड़ीमल का घर)

(स्नेह और उसकी माँ आपस में बातचीत कर रही है ।)

स्नेह की माँ :—बेटी अब यह किस तरह से हो सकता है !

स्नेह :—किसी भी तरह से हो, यह होकर ही रहेगा । मैं अपने इरादे पर पक्की हूँ ।

माँ :—तुम्में यह हो क्या गया स्नेह ! तुम यह बेतुकी बातें क्यों कर रही हो । तुम्हारी अक्ल तो खराब नहीं होगई ?

स्नेह :—मेरी अक्ल अब तक खराब थी आज ही दुरुस्त हुई है । मैं उस सन्यासिनी की कितनी कृतज्ञ हूँ जिसने मुझे सद्बुद्धि प्रदान की और गड्ढे में गिरने से बचा लिया ।

माँ :—सन्यासिनी कौन और गड्ढे में गिरना कैसा ! हमने तुम्हें कोई गड्ढे में थोड़े ही पटका है । रंग महलों में सोओगी............

स्नेह :—बस माँ मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ । मुझे अधिक गुस्सा न दिलाओ । तुम मेरी माँ हो, मेरे सुख-दुःख का ख़याल तुम नहीं करोगी तो और कौन करेगा ?

माँ :—इसके सिवा सुख की जगह औरक्या हो सकती है ? हमने तो तुम्हारे लिये ऐसा ही घर ढूँढ़ा है जहाँ तुम पूरी तरह से सुखी रहो ।

स्नेह :—तुमने तुम्हारे अपने लिये पूरे सुख का घर बना लिया है यह जरूर हुआ, किन्तु मेरे लिये कौनसा सुख है ? क्या अपनी आत्मा को बेचकर, अपनी प्रतिष्ठा को नष्ट कर और अपने हृदय के हजार हजार टुकड़े करके गौरवहीन जीवन व्यतीत करना ही सुख है ? थोड़े से चाँदी के टुकड़ों के लोभ में आकर ....बस माँ मुझसे अधिक न कहलाओ ? तुम भी तो स्त्री हो। मेरे हृदय से मेरे भावी जीवन की कल्पना करो, और बताओ कि मुझे वहाँ सुख है या दुःख ?

माँ :—स्नेह, तुम्हारा कहना ठीक है। किन्तु अब दूल्हा आता ही होगा।

स्नेह :—आने से पहले ही तुम वहाँ कहलादो कि लड़की शादी करने से इन्कार करती है।

माँ :— बेटी ! इसमें तुम्हारी, मेरी और उनकी कितनी बड़ी भारी बदनामी है। कल ही तुम्हें लोग अँगुलियाँ उठा उठाकर बताने लगेंगे।

स्नेह :— परवाह नहीं। समाज के पास अँगुलियाँ उठाने के सिवा और है ही क्या ? समाज दूसरों को दुःख और विपत्ति में डालकर उसका तमाशा देखना चाहता है। वह दुखी आदमियों का सिर्फ मजाक करना जानता है। जिस समाज ने मेरे सुख दुःख की परवाह नहीं की उस समाज की अँगुलियों की मुझे कोई परवाह नहीं। समाज मुझे गालियाँ दे।

मुझे जाति से अलग करदे, मुझे पत्थरों से मारे, मैं सब सह लूँगी। लोग तो मेरे ऊपर वैसे भी अँगुलियाँ उठायेंगे। सोने, चाँदी के आभूषणों और रेशमी कपड़ों से सजकर मैं जो समाज की अँगुलियाँ और तानेकसी सहूँगी, वह मेरे लिये एक कलङ्क और लज्जा की बात है। किन्तु ब्याह नहीं करने पर मेरी ओर जो अँगुलियाँ उठाई जायेंगी उन पर मुझे नाज़ और गौरव है। सेठजी की बहू की ओर उठाई जाने वाली अँगुलियों में कायरता और अपमान है और एक साहसी वीर बाला की ओर उठाई जाने वाली अँगुलियों में अभिमान और इज्जत है। मैं पद-दलित होकर फूलों की सेज़ पर नहीं सोना चाहती, किन्तु अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा कर छाती फुलाये काँटों की शय्या पर सोना पसन्द करूँगी।

जाओ अब देर न करो। अपने घर से रवाना होने के पहले ही यह शुभ सम्वाद सेठजी के कानों में पहुँचादो। वरना उनको अपनासा मुँह लिये वापिस लौटना पड़ेगा।

माँ:— बेटी मैं भी मानती हूँ कि मैंने तुम्हें लोभ के वश आकर ही एक बूढ़े के गले मँढना पसन्द किया।। किन्तु २४ हजार रुपये जो सेठजी को वापस देने होंगे वे कहाँ से आयेंगे। तुम्हारे पिताजी ने उन रुपयों में से सिर्फ १०००) रुपये तो ब्याह के खर्च के लिये निकाल लिये थे। और बाकी सब बीच वाले कोठे

में बड़ी सन्दूक में रक्खे थे। दूसरे ही रोज सन्दूक का ताला खुला हुआ मिला और रुपये नहीं पाये गये। समाज के डर से तुम्हारे पिताजी ने उन रुपयों के चोरी चले जाने की ख़बर पुलिस तक में नहीं दी।

स्नेह:- वे रुपये मेरे पास हैं।

माँ:—सच बेटी।

स्नेह:—हाँ मैंने ही उसमें से निकाल लिये थे। मुझे उन रुपयों के प्रति रोष था। क्योंकि यदि वे नहीं होते तो मैं बेची नहीं जा सकती थी। किन्तु वे सेठ सौभागमल जी को वापिस नहीं दिये जा सकते। वे महिला-मंडल के भवन-निर्माण के लिये दिये जायँगे। इससे बढ़कर उन रुपयों का सदोपयोग नहीं हो सकता है।

माँ:—किन्तु सेठजी ने तो उन रुपयों का तुम्हारे पिताजी से कागज़ लिखा लिया था। बोले फेरे होते ही कागज़ जला दिया जायगा।

स्नेह:—वह कागज़ भी मेरे पास है। उनके मुनीम बाबू कमल-चन्दजी मेरी एक सहेली के भाई हैं। उन्हीं की कृपा से वह ख़त मुझे मिल सका है।

माँ:—किन्तु बेटी लड़कियों के एक ही बार तेल चढ़ता है। इस समय रातों रात दूसरा लड़का कहाँ से ढूँढ़ेंगे।

स्नेह:—मैं जन्म भर कुँआरी ही रहकर जीवन व्यतीत कर लूँगी।

(रजनी और शान्ता का प्रवेश)

रजनी :—वर तैयार है।

माँ :—कहाँ ?

शान्ता :—नीचे मोटर में बैठा हुआ है।

माँ :—कौन है और यह किस तरह से हुआ ?

रजनी :—मैं, वीणा देवीजी, विद्युतबाला देवी आदि महिला-मंडल की सदस्याओं ने पहले से ही एक लड़का ठीक कर लिया था। वर बी० ए० पास है और उम्र भी कोई बीस साल की होगी। आप जानती हों तो महकमा इन्जीनियरिंग में हैडक्लर्क बाबू सुरेन्द्रकुमार जी हैं उन्हीं का लड़का है। हमने उनकी भी सम्मति प्राप्त करली है। कल रात ही हमने सभा में यह तय कर लिया था कि सेठजी निकासी के लिये घर से निकलें उसके पहले ही उनके दोनों दरवाजों पर भुण्ड की भुण्ड स्त्रियाँ धरना देकर खड़ी रहें और सेठजी के रथ के आगे लेट जायँ। और इधर मैं हमारे मनोनीत वर महाशय को लेकर यहाँ चली आऊँ और स्नेह के साथ उनके फेरे फिरवा दिये जायँ।

माँ :—तो वहाँ अभी तक धरना देने का काम जारी है।

शान्ता :—हाँ बराबर जारी है और ४ बजे तक जारी रहेगा।

माँ :—ओ शायद इसीलिये अभी एक आदमी उनको बुलाने के लिये आया था।

रजनी :—अच्छा तो अम्माजी ! अब जल्दी कीजिये। विवाह-मंडप तो तैयार ही है। एक पंडितजी को भी मैं साथ लेती

आई हूँ। आपके घर वाला ब्राह्मण आये उसके पहले पहले ही हम फेरों का काम पूरा करलें तो ठीक होगा। अभी १२ बजे हैं। और उनके आने का समय २ बजे का है। मैंने ब्राह्मण से पूछ लिया था—१२ बजे से ४ बजे तक किसी भी समय लग्न का काम सम्पन्न किया जा सकता है। चलो अम्मा जी अब देर न करो। शुभस्य शीघ्रं—स्नेह जल्द कपड़े पहनो। जाओ शान्ता, तुम किसी जरूरी काम के बहाने स्नेह के पिताजी को कन्यादान के संकल्प के लिये बुला लाओ। यहाँ आने पर मैं सब समझा दूँगी।

शान्ता :—अच्छा जाती हूँ।

पटाक्षेप

दसवाँ दृश्य।

(स्थान—टाउनहाल)

(स्नेहबाला को मानपत्र दिया जा रहा है। महिला-मंडल की सब सदस्यायें बैठी हैं।)

(स्नेहबाला का रजनी व शान्ता के साथ प्रवेश। वीणादेवी भी माला पहनाती हैं और सब बैठ जाती हैं।)

वीणादेवी :—मैं श्रीमती शान्तादेवी से प्रार्थना करूँगी कि वे मानपत्र पढ़ कर सुनावें।

(शान्तादेवी पढ़ती हैं।)

"आदर्श पथ-प्रदर्शिके,

हमारा हृदय आज यह देखकर हर्ष और उल्लास से फूला नहीं समाता कि आपने हमारे समाज में फैली हुई वृद्ध-विवाह की घातक रूढ़ि पर लोह-प्रहार करके अपने प्रचण्ड साहस और गौरव का ही परिचय नहीं दिया किन्तु प्रतिवर्ष वृद्ध-विवाहरूपी अंध-कूप में ढकेली जाने वाली हजारों बालिकाओं के लिए एक आदर्श मार्ग-प्रदर्शन भी किया है।

जो वृद्ध-समाज अपनी पुत्री और पौत्रियों के समान बालिकाओं के साथ ब्याह कर अपनी पापमय प्रवृत्ति और नीचता का परिचय दिया करता है उसको आपने बहुत ही उत्तम सीख प्रदान की है तथा जिन बालिकाओं में बूढ़ों के ऐसे अमानुषिक कार्यों का मुकाबला करने की जरा भी सामर्थ्य नहीं है उनके सामने एक अनुकरणीय उदाहरण पेश किया है।

आपके इस उत्कृष्ट कार्य की भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए हम आपके और आपके जीवनसंगी के लिए हार्दिक मंगल कामना प्रकट करती हैं तथा साथ ही आशा करती हैं कि भविष्य में आप इसी तरह महिला समाज के लिए मार्ग प्रदर्शन करती रहेंगी।

आपकी मंगल कामना
करने वाली—
महिलामण्डल की सदस्याएँ।

(स्नेहबाला खड़ी होकर अभिनन्दन पत्र के जवाब में कहती हैं।)

स्नेह :—आप सब बहनों ने अपनी बहन के प्रति जो इतनी सहृदयता और स्नेह का परिचय दिया है उससे मेरा हृदय हर्ष और उल्लास से फूला नहीं समाता,

यह तो सच है कि कृतज्ञता का प्रकाशन धन्यवाद और ऐसे ही अन्य शब्दों से किसी भी तरह नहीं हो सकता। उसके प्रकाशन का स्थान तो हृदय ही है। फिर भी शिष्टाचार के नाते मैं आप लोगों के इस अपार कष्ट और मेरे प्रति अगाध प्रेम के लिए अन्तःकरण से धन्यवाद देती हूँ।

(स्नेहबाला कहकर बैठ जाती है और इतने में एक लड़की 'लीजिये ब्याह की खबर छप भी गई" कहती हुई दौड़ी चली आती है और अपने हाथ का अख़बार कंचनबाला को देती है। कंचनबाला अख़बार पढ़कर सबके सामने सुनाती है)—

"एक वीर बालिका के प्रशंसनीय साहस का उज्ज्वल उदाहरण
महिला-मण्डल की सदस्याओं का अनुकरणीय प्रयत्न
सेठ सौभागमल को जबरदस्त मुँहकी खानी पड़ी"

पाठकों को मालूम होगा कि जयपुर में कुछ दिनों से सेठ सौभगमलजी खातीपुरावालों के ब्याह का एक जोरदार आन्दोलन चल रहा था। उस आन्दोलन में सेठजी को ब्याही जाने वाली लाला कजौड़ीमलजी की सुपुत्री स्नेहबाला के साहस और महिला मण्डल के सद्प्रयत्न से एक अभूतपूर्व सफलता मिली है। फेरों के कुछ समय पहिले बालिका अपनी रक्षा करने के लिए आपही उद्यत होगई व समाज व जाति की कुछ भी परवाह न कर ब्याह करने से साफ़ इन्कार होगई। ठीक वक्त पर महिला मण्डल की सदस्याएँ एक बड़े समूह में जाकर सेठजी के मकान पर धरना

देकर बैठ गईं तथा निकासी के रथ के आगे लेट गईं और चार बजे तक रथ को आगे बढ़ने से रोके रहीं। इधर सेठजी के घर में महिलाओं के सत्याग्रह की कसमकस चलती रही और उधर स्नेह-बाला का, महिला-मण्डल द्वारा पहले से निश्चित आयोजन के अनुसार बाबू सुरेन्द्रकुमारजी हैडक्लर्क महकमा इंजीनियरिंग के सुपुत्र बाबू नरेन्द्रकुमार बी० ए० के साथ पाणिग्रहण-संस्कार सकुशल सम्पन्न हो गया। हम स्नेहबाला और महिला-मण्डल की सदस्याओं के साहस की भूरि भूरि प्रशंसा, वर-वधू के लिए मंगल कामना और सेठजी की दयनीय स्थिति पर अन्तःकरण से समवेदना प्रकट करते हैं।

पटाक्षेप।

समाप्त।

विधवा

(सन् ११४२ ई०)

पात्र-परिचय

१ प्रेमलता—रूपचन्द जी के छोटे लड़के की विधवा बहू
२ सास— रूपचन्द जी की बहू
३ सावित्री—रूपचन्द जी की बड़ी लड़की
४ चमेली— ,, मँझली लड़की
५ विमला— ,, छोटी लड़की
६ अध्यापिका } स्थानीय बालिका-विद्यालय की एक अध्यापिका
७ भारत माता }
८ प्रभा— प्रेमलता की प्रधान सहेली
९ सुनीता—प्रेमलता की सहेली
१० सुलोचना ,,
११ चन्द्रप्रभा ,,
१२ प्रियम्बदा ,,
१३ सुधांशुबाला देवी—भारत माता के दृश्य में उपदेश देने वाली महिला
१४ हमीदा—प्रेमलता को धोखा देकर लेजाने वाली एक मुसलमान औरत
१५ ज़रीना—हमीदा की सहायिका
१६ गंगा—प्रेमलता को बदनाम करने वाली एक स्थानीय व्यासन
१७ संचालिका—इलाहाबाद विधवाश्रम की संचालिका
१८ शर्मिष्ठा देवी—इलाहाबाद की एक महिला-डाक्टर
१९ पंडिता शीलवती देवी—संकीर्ण विचारों की एक स्थानीय पंडिता
अन्य महिलाएँ, बालिकाएँ सेविकाएँ आदि

भूमिका–परिचय

इस नाटक का सर्व-प्रथम अभिनय श्रीमती शैलकुमारी 'प्रभाकर' चतुर्वेदी की अध्यक्षता में किये गये श्रीशारदा-सहेली संघ जयपुर के छठे वार्षिकोत्सव के अवसर पर तारीख १ व २ नवम्बर सन् १९४२ को जयपुर-दारोगाजी के जैन-मन्दिर में सहेली-संघ की सदस्याओं द्वारा हुआ ।

भूमिका व कार्यकर्ताओं का परिचय निम्न तरह से हैं :–

कार्य–कर्ताओं का परिचय–

१ व्यवस्थापक—श्रीमान् बाबू मोहनलालजी सोनी
२ लेखक व निर्देशक—श्रीमान् पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री
३ संगीत व वेष-निर्देशिका—श्रीमती त्रिशलादेवी पाटनी बी० एस-सी०
४ स्थल-प्रबन्धक—श्रीमान् बाबू जोरावरमलजी पाटनी बी० ए० एल-एल० बी०

भूमिका-परिचय–

१ प्रेमलता–श्री विमला कुमारी पाटणी 'विदुषी' (आनर्स) सुपुत्री श्रीमान् बाबू कपूरचन्दजी पाटणी
२ सास—श्री सरदार कुमारी 'विदुषी' सुपुत्री श्रीमान् केशरलालजी अजमेरा
३ सावित्री—श्री शकुन्तला कुमारी 'विदुषी' (आनर्स) सुपुत्री श्री केसरलाल जी कटारिया
४ चमेली–श्री सुशीलाकुमारी सुपुत्री श्री पुरुषोत्तमलाल जी याज्ञिक
वेमला–श्री सत्यवती सुपुत्री श्री केशरलाल जी कटारिया

६ अध्यापिका
७ भारतमाता
८ शर्मिष्ठादेवी
} श्री विजयादेवी 'विदुषी' अध्यापिका श्री जैन पद्मावती कन्या-पाठशाला, जयपुर।

६ प्रभा—श्री छुट्टनकुमारी 'विदुषी' सुपुत्री श्रीमान् गुलाबचन्दजी बिन्दायक्या

१० सुनीना
११ सुधांशुबाला
} श्री चन्द्रकलाकुमारी 'प्रभाकर' सुपौत्री श्री दारोगा मोतीलालजी पाटणी।

१२ सुलोचना—श्री शान्तिकुमारी 'विदुषी' सुपुत्री श्रीमान् राजमल जी संघी।

१३ चन्द्रप्रभा—श्री कंचनकुमारी 'विदुषी' सुपुत्री श्री बाबू मोहन-लालजी सोनी।

१४ प्रियम्बदा—श्री सुभद्राकुमारी सुपुत्री श्री केशरलालजी कटारिया

१५ हमीदा—श्री शान्ताकुमारी सुपुत्री श्री केशरलालजी अजमेरा।

१६ जरीना-श्री शान्तिकुमारी सुपुत्री श्रीगुलाबचन्दजी बिन्दायक्या।

१७ गंगा—श्री सुदर्शनकुमारीसुपुत्री श्री गुलाबचन्दजी मुसरफ़।

१८ संचालिका—श्री शान्तिकुमारी सुपुत्री श्री राजमलजी संघी।

१९ पंडिता शीलवती—श्रीशान्ताकुमारी सुपुत्री श्री केशरलालजी।

अन्य महिलाएँ, बालिकाएँ, सेविकाएँ आदि—

(१) कुमारी लक्ष्मीबाई साह, (२) कुमारी शान्ता अजमेरा, (३) कुमारी लच्छम काशलीवाल, (४) कुमारी कान्ता तोतूका, (५) कुमारी चमेली भार्गव, (६) कुमारी शान्ति तोतूका, (७) कुमारी कंचन पाटणी, (८) कुमारी तेजकुँवर काला, (९) कुमारी सुलोचना पाटणी, (१०) कुमारी सुभद्रा कटारिया।

विधवा

पहला अंक

पहला दृश्य

(स्थान—बालिका-विद्यालय, कक्षा-विदुषी)

समय—प्रातःकाल ।

(कक्षा में बालिकाओं के लिए बेन्चें, अध्यापिकाजी के लिए कुर्सी तथा अन्य आवश्यक सामान जैसे ब्लेक-बोर्ड घड़ी आदि यथा स्थान लगे हुए हैं। विदुषी कक्षा की एक छात्रा सुनीता अपने स्थान पर बैठी हुई किसी पाठ्य - पुस्तक का अध्ययन कर रही है)

(प्रियम्बदा का प्रवेश)

प्रियम्बदा :—ओ हो ! आज आप इतनी देर पहले से ही विराज रही हैं ! क्या बज गया सुनीता ! तुम्हारी घड़ी में (कहती हुई पुस्तकों का बण्डल अपनी जगह रख देती है और खड़ी होकर रूमाल से पसीना पोंछती हुई और हवा करती हुई क्लास रूम के बाहर आजाती है)

सुनीता :—(प्रियम्बदा की ओर देखकर) मेरी घड़ी में आज कल के टाइम से ८ बजने में २० मिनट बाकी हैं।

प्रियम्बदा :—बाबा इतनी क्या पढ़ने में तन्मय हो रही हो ? जरा बाहर हवा में तो आओ। हम भी जानती हैं कि आप कक्षा में..........

सुनीता :—(खड़ी होती हुई) लो रहने दो, आप खुद किताब जैसे छूती ही नहीं हैं। (कहती हुई प्रियम्बदा के पास चली जाती है)

(एक तरफ़ से सुलोचना और दूसरी तरफ़ से चन्द्रप्रभा का प्रवेश)

प्रियम्बदा और सुनीता :—ओ ! आइये आइये आप ही का इन्तज़ार हो रहा था।

सुलोचना :—मास्टरनी जी साहब अभी तक नहीं आईं ?

(कहती हुई किताबें रख देतीं हैं और सुनीता तथा प्रियम्बदा के पास चली जाती है)

प्रियम्बदा :—अजी, मास्टरनी जी साहब क्या करेंगी आप आगईं न ?

चन्द्रप्रभा :—हाँ बात तो ठीक है (कहती हुई बेंच पर किताबें रखकर सुनीता और प्रियम्बदा के पास चली जाती है और सब हँसने लग जाती हैं।)

सुलोचना :—प्रियम्बदा को जब देखो तब मज़ाक ही सूझती है। (सुनीता की ओर लक्ष्य कर के) सुनीता, मैंने तो आज भूगोल की किताब छुई तक नहीं।

सुतीता :—और मैंने नकशा नहीं बनाया तुमने बना लिया प्रिया ?

प्रियम्बदा :—अरे कहाँ; हिन्दी, धर्म और समाज-शास्त्र के देखते देखते ही रात के साढ़े दस हो गये। पिताजी पानी पीने उठे तो देखा कि मेरे कमरे का लैम्प जल रहा है। बोले ऐसा क्या पढ़ना, बीमार पड़ोगी क्या ? अभी सो रहो सुबह जल्दी उठकर याद कर लेना—यह कहकर लैम्प बुझा दिया।

चन्द्रप्रभा :—और मैं आज लिखाई का काम किसी भी विषय का नहीं कर सकी। कल दोपहर से छोटे भैया को इतना ज़ोर का बुखार आ रहा है कि उसने अभी तक चेत नहीं किया। दवा-दारू करते जो बीच २ में थोड़ा बहुत वक्त मिला उसमें महादेवी वर्मा और सुभद्राकुमारी चौहान को देखा है।

सुनीता :—अरे सुभद्राकुमारी चौहान के लिये कब कहा था ? क्यों चन्दा ?

चन्द्रप्रभा :—क्यों नहीं, सुभद्राकुमारी चौहान और महादेवी वर्मा दोनों के लिये कहा था।

सुनीता :—मैंने तो केवल महादेवी वर्मा के लिये ही सुना था।

प्रियम्बदा :—जी हाँ पहले तो महादेवी वर्मा के लिये ही कहा था किन्तु उठते २ कहा था कि सुभद्राकुमारी चौहान को भी कल ही देख लाओ। परीक्षा के दिन बहुत ही नज़दीक हैं। कवियित्रियों की जीवनियाँ जल्दी ही समाप्त कर डालो। उनकी भाषा और कविताशैली पर टिप्पणियाँ मैं लिखा दूँगी।

सुलोचना :—अरे यह हज़रत पहले से ही पानी पीने के बहाने उठकर बाहर चली गई थीं।

चन्द्रप्रभा :—अच्छा उस वक्त प्रिंस टाकीज़ की एडवरटाइज़िंग कार जो नीचे से गुज़री थी।

प्रियम्बदा :—जनाब को संगीत का बड़ा शौक है।

सुलोचना :—ज़रा भी गाने की आवाज़ सुनाई पड़ी कि उधर बरबस खिंची चली जाती हैं।

चन्द्रप्रभा :—हाँ साहब, तभी तो संगीत में इतनी प्रवीण हैं।

प्रियम्वदा :—ओ हो ! मुझे तो वह मौसम वाला गाना बड़ी कोशिश के बाद भी नहीं आया। क्यों चन्दा, तुमको आ गया ?

चन्द्रप्रभा :—नहीं, बिल्कुल नहीं।

सुलोचना :—हाँ, हाँ मुझसे भी ठीक ठीक नहीं बैठा।

प्रियम्बदा :—मेरे तो इसकी धुन कुछ जची ही नहीं।

चन्द्रप्रभा :—तो सब सुनीता के सामने ही अभी क्यों नही निकाल डालो। जो भी कसर है वह अभी निकल जायगी। फिल्मों के गानों की तो यह चलती फिरती मशीन है।

सुनीता (मुँह बना कर) आप जैसे कोई मुझे बना रही हैं। (कहकर एक तरफ खड़ी हो जाती हैं)

चन्द्रप्रभा :—खूब तुम तुम्हारी तारीफ में ही ऐसी नाराजी प्रकट करने लगी तो सचमुच मजाक में तो न जाने क्या पहाड़ ढादो ?

प्रिय :—लो जरा से में बिगड़ भी गईं। (पास आकर उसको मनाने लगती हैं)

सुलोचना :—बिगड़ो नहीं बहिन तुम तो हमारी प्यारी सहेली हो।

प्रिय :—हाँ जरा निकलवा दो।

चन्द्रप्रभा :—सुनीता नाराज बड़ी जल्दी हो जाती है।

प्रिय :—नहीं नहीं, अभी निकलवा देती है। सुलोचना जरा बाजा तो उठा ला

(सुलोचना जाती है)

सुनीता :—नहीं इसमें बिगड़ने की कोई बात नहीं पर सच बात यह है कि मुझे गाना पूरा तैयार नहीं है ।

प्रियम्वदा :—बस यही तो तक़ल्लुफ़ की बात है । (सुलोचना हारमोनियम उठा कर ले आती है और क्लास रूम के बाहर रख देती है ।)

प्रियम्वदा :—लो यह बाजा आगया । देखो, अब विलम्ब न करो ।

सुनीता :—अच्छा मैं बजाती हूँ तुम लोग बोलती जाना ।

(चारों बैठ जाती हैं और सुनीता हारमोनियम के साथ गाती है तथा तीनों उसके साथ देती हैं)

गायन

यही सलौना मौसम आया, आओ सखि ! सरसायें ।
रिमझिम, रिमझिम बरसत पानी, नैनन प्यास बुझायें ॥
चम-चम चमकत बिजुली घन में, महिमाकाश बढ़ायी ।
क़लरव पंछी चहुँ दिशि बोले, मेघ घटा है छायी ॥
बालक नाच रहे उपवन में अपना मन बहलायें ।
सखियाँ कौन कहे किस कारण, अपना जी ललचायें ॥

(गायन समाप्त होते होते सुलोचना की नज़र अध्यापिका जी की तरफ़ पड़ती है और वह चौंक कर कहती है अरे ! मास्टरनीजी साहब आ गईं । सब लड़कियां घबराहट के साथ अपनी अपनी जगह पर खड़ी होजाती हैं)

अध्यापिका:—अरे ! महिलाओं की अवनति के अध्ययन काल में यह संगीत का साम्राज्य कैसा ! समाज की बर्बादी के

इतिहास के समय संगीत की मधुरध्वनि ! विधवाओं के करुण क्रन्दन के समय वीणा की मीठी झन्कार ! महिलाओं के परतन्त्र जीवन में सितार का बेसुरा तार ! समाज मन्दिर के नष्ट भ्रष्ट होने पर मातम पुर्सी की जगह यह आनन्द का जल्सा कैसा ? यह समय संगीत का नहीं संग्राम का है ! हँसने और हँसाने का नहीं रोने और रुलाने का है !

संगीत सरोवर का मधुर जल पान करने पर नारी-जीवन की दुःख भरी कहानी का खारा जल तुम्हारे गले कैसे उतरेगा ? सर सब्ज उपवन का फूल जेठ की कड़ी धूप को कैसे सहन करेगा ? मधुर रस पीने का अभ्यासी मुँह कुनैन का कड़वी घूँट कैसे उतारेगा ? नारी-जीवन की करुणा कहानी पढ़ने के लिये सरस मानस की जरूरत नहीं, उसके लिये वज्र का हृदय चाहिये। मधुर और सुरीले स्वर की आवश्यकता नहीं उसके लिये गगन भेदी बेसुरा चीत्कार चाहिये। हमें अभी दुनियाँ के झाड़-झंखाड़ पूर्ण बीहड़ जङ्गल में प्रविष्ट होना है, स्वर्ग के नन्दनवन में विहार करना नहीं। यह असमय में संगीत का राग किसने छेड़ा ?–(सुनीता की ओर इशारा करके) सुनीता तुमने ? (प्रिया की ओर इशारा करके) प्रिया तुमने ? (सुलोचना की तरफ इशारा करके) सुलोचना तुमने ? (चन्दा की तरफ इशारा करके) चन्दा तुमने ? बोलो ! बोलो ! जवाब दो (कुछ हट कर) सुनीता चुप क्यों हो ? प्रिया उत्तर नहीं देती, सुलोचना चुप चाप क्यों खड़ी है ? चन्दा क्या तुम्हें भी काठ मार गया ?

(चारों छात्राएँ गर्दन नीची करके चुप चाप खड़ी हैं और कुछ देर के लिये क्लास में सन्नाटा सा छा जाता है)

अध्यापिका:—(कुछ ठहर कर) जान पड़ता है तुम अपने अपराध के लिये मन ही मन पश्चात्ताप कर रही हो। सब बैठ जाओ। भविष्य में ऐसा भूल कर भी न हो। हर एक काम अपने समय पर ही अच्छा लगता है। (फिर भी सब को खड़ी देख कर) बैठ जाओ। (सब बैठ जाती हैं)

अध्यापिका : - आज कौनसी पुस्तक का पाठ चलेगा ?

सब :— महिलाओं की समस्या का। (एक बालिका का प्रवेश)

(बालिका अध्यापिका के हाथ में एक प्रार्थना पत्र ला कर देती है।

अध्यापिका:— क्या है ?

बालिका :—सावित्री की छुट्टी की दरख्वास्त है। एक लड़का अभी देकर गया है।

(अध्यापिका दरख्वास्त खोल कर देखती है और पढ़कर एक दीर्घ निश्वास छोड़ती है।)

अध्यापिका:—बेचारी प्रेमलता पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा।

प्रियम्वदा :—प्रेमलता पर कैसा पहाड़ टूट पड़ा ?

(सब विस्मय और किसी भयानक विपत्ति की खबर सुनने की आशंका से अध्यापिका जी की ओर देखने लग जाती हैं)

अध्यापिका :—सावित्री का भाई गुजर गया ?

प्रिया० :—ओ अभी छः महीने पहिले ही व्याह हुआ था।

सुलोचना :—मैं प्रेमलता को रोज मन्दिर में देखती हूँ। अभी फेरों की मेंहदी भी उसके हाथों से नहीं छूटी है।

सुनीता :—मैंने तो रात ही छोटे भाई से सुना था कि साँझ से डाक्टर पर डाक्टर बुलाये जा रहे हैं।

चन्द्रप्रभा :—बेचारी कितनी सीधी लड़की है।

पटाक्षेप

दूसरा दृश्य

स्थान—रास्ता

(रास्ते में सुनीता और प्रभा ये दो सहेलियाँ मिलती हैं और बात चीत करती हैं)

पहली सहेली :—ओ, सुनीता बहिन नमस्कार ।

दूसरी :—नमस्कार ।

पहली (प्रभा) :—आज सुबह ही सुबह खूब मुलाकात हुई । कहाँ से आ रही हो और कहाँ जा रही हो ?

सुनीता :—घर से आ रहीं हूँ और पाठशाला जा रही हूँ । १५ से महिला सम्मेलन का जल्सा है न । आज कल हम सब सहेलियाँ इसी तैयारी में लगी हैं ।

प्रभावती :—जल्से में क्या क्या होगा ?

सुनीता :—यही व्याख्यान, भजन, कुछ हाथ की बनी चीजों का प्रदर्शन और एक छोटासा संवाद भी

प्रभावती :—संवाद कैसा ?

सुनीता :—कोई छोटा सा नाटक समझिये ।

प्रभावती :—ओ ! नाटक भी ? खूब ! उसका विषय क्या है ?

सुनीता :—स्वतन्त्रता और नाम है भारत माता ।

प्रभावती :—विषय वास्तव में समयोप योगी है ।

सुनीता :—हाँ आज कल ऐसे ही विषयों की आवश्यकता है ।

प्रभावती :—नाटक के गानों का प्रबन्ध तो तुम्हारे जुम्मे ही होगा ।

सुनीता :—मैं इसके क्या काबिल हूँ, प्रभा। जो सेवा मुझसे हो सकती है कर देती हूँ। संगीत के सिवा और सब दिग्दर्शन अध्यापिका जी कराती हैं।

प्रभा :—गायन क्या, क्या रक्खे गये ?

सुनीता :—सब मिलाकर कुल ग्यारह गायन हैं। गायन भाव, तथा शिक्षापूर्ण हैं और ट्यूनें भी चलती हुई हैं।

प्रभा :—हाँ गायन होने भी ऐसे ही चाहिये। मैं खुद भी ऐसे वैसे गायन पसन्द नहीं करती।

सुनीता :—नहीं जी वह तो हमारा ध्येय ही नहीं। महिला सम्मेलन को नाटक खेलकर रुपया तो कमाना नहीं है। हमारा उद्देश्य तो लोगों की आँखें खोल देना है। वैसे नाटक खेलने की ऐसी आवश्यकता भी क्या थी किन्तु समाज और देश की दशा के चित्र खींचने और लोगों के हृदय में जोश भरने के लिये नाटक संवाद एक अच्छा जरिया है।

प्रभा :—हाँ लोग जमा भी काफ़ी संख्या में होते हैं और असर भी बहुत मानते हैं।

सुनीता :—दो चार जले भुने यह, वो अच्छा-बुरा ऐसी बातें भी बनाया करते हैं। किन्तु हमें इसकी पर्वाह नहीं!

प्रभा :—हाँ पर्वाह करने की जरूरत भी क्या? लोगों की बातें बनाने की तो आदत ही है। हमें अच्छी, बुरी सुनने के लिये सदा तैयार रहना चाहिए।

सुनीता :—हमारा सम्मेलन अच्छी, बुरी सुनने के लिये सदा तैयार रहता है। वह अपना काम करता चला जा रहा है। जो

करता है, वह सोच समझ कर करता है। जो काम होता है वह समाज सुधार के लिये होता है।

प्रभा :—इसपर कोई कुछ भी कहे या सुनावे ?

सुनीता :–हाँ झूठी कहा-सुनी से सम्मेलन कतई नहीं घबराता।

प्रभा :—सुना, गत सालभी कुछ आदमियों ने टीका टिप्पिणी की

सुनीता :—जी हाँ दो चार पुराने पंडितो ने।

प्रभा :—असल में वे लोग गाने बजाने से कुछ चिढ़े से रहते हैं।

सुनीता :—नहीं सो बात भी नहीं है। गाने की तो यह लीजिये कि अपनी ही बहू बेटियों से आपके वे पंडित अश्लील गीत-गाल बड़े चाव से सुनते हैं।

प्रभा :—सचमुच यही बात है सुनीता! हमारे गानों में तो होता ही क्या है। ईश्वर स्तुति और देश–सुधार।

सुनीता :—ज्यादा हो तो बाल विवाह और वृद्ध–विवाह की बुराइयों या सामाजिक कुरीतियों पर आघात।

प्रभा :—बस यही सब तो उनकी चिढ़ का कारण है।

सुनीता :—हाँ उनका स्वभाव ही तो ठहरा प्रभा। तुम हमारे रिहर्सलों में क्यों न आया करो। गाने ही क्या हर एक चीज़ अच्छी है—बात-चीत, भाव, भाषा, विषय।

प्रभा :—फुरसत मिली तो मैं भी कभी आऊँगी।

सुनीता :—फुरसत क्या मिलेगी। तुम खुद ही आकर मिलो।

प्रभा :—(हँसती हुई) बड़ी चुटकियाँ ले रही हो।

सुनीता :—अच्छा तो अब मुझे देर हो रही है।

प्रभा :—माफ़ करना मैंने तुम्हारा काफ़ी समय ले लिया है।

सुनीता :— ख़ैर! यह तो हुआ ही करता है। समय कोई मिठाई नहीं है जो आपस में ले दे कर बाँटी जाती हो।

प्रभा :—अच्छा, नमस्कार।

सुनीता :—नमस्कार।

(दोनों जाने को उद्यत होती हैं)

सुनीता :— (वापिस मुड़कर) हाँ यह तो बतओ तुम अभी जा कहाँ रही हो ?

प्रभा :—प्रेमलता के घर जा रही हूँ।

सुनीता :—ओ! ऐसा (एक दीर्घ निश्वास छोड़ती है) कौन जानता था कि बेचारी प्रेमलता के भाग्य में यह बदा था।

प्रभा :—उसकी सूरत देखते ही मेरा तो कलेजा मुँह को आने लगता है।

सुनीता :—मेरी तो वह बचपन की सहेली है प्रभा।

प्रभा :—बेचारी को किसी तरह का सुख नहीं। सुहाग सुख तो गया ही पर सास भी बेचारी की रातदित जान खाती रहती है।

सुनीता :—हाँ मुझे मालूम है। सावित्री से मुझे सब बातें मालूम होती रहती हैं। वह पढ़ने आती है न।

प्रभा :—और उसके पीहर में भी उसकी ख़ास माँ तो है नहीं विमाता है।

सुनीता :—और भाई भौजाई इस जमाने में तुम जानो——

प्रभा :—हाँ जी भाई भौजाइयाँ आज कल किसकी हैं। उनमें से तो कोई भी बेचारी से हमदर्दी नहीं रखता। ब्याह भी जो उसका धूम धाम से हुआ वह उसके पिताजी की महरबानी समझो।

सुनीता :—हाँ तुम ठीक कहती हो प्रभा। तुम किसी काम से जारही हो ?

प्रभा :—उसने कह रक्खा है मुझसे कभी-कभी मिल जाया करो।

सुनीता :—तुम बहुत अच्छा करती हो। जल्सा खतम होने पर मैं भीं उससे मिला करूँगी।

प्रभा :—हाँ दुखी आदमी के साथ कोई दो चार मीठी बातें करले इसी में उसको सब कुछ मिल जाता है।

सुनीता :—अच्छा चलती हूँ। नमस्कार

प्रभा :—नमस्कार

सुनीता :—देखो रिहर्सल में जरूर आया करो।

प्रभा :—अच्छा — — — ।

(दोनों चली जाती हैं।)

पटाक्षेप

तीसरा दृश्य

स्थान—एक जिन-मन्दिर

(जिन-मन्दिर में कुछ महिलाएँ दर्शन कर रही हैं कुछ माला फेर रही हैं, कुछ स्वाध्याय कर रही हैं और कुछ बालिकाएँ भगवान के सम्मुख खड़ी हुई प्रार्थना कर रही हैं)

प्रार्थना—

जय अरि-नाशक कर्म-विनाशक जग नायक जय जग-ज्योति।
जय मंडन-जग सुरनर मोहत प्रबल पराक्रम शीलगति॥
वीर्य-अनंत अनंत ज्ञान युत संकट-मोचन शुद्धमति।
गावें ध्यावें मन हरषावें चित्त लगावें ऊर्ध्वगति॥

(प्रार्थना बोलने के पश्चात् कुछ महिलाएँ जिन-मन्दिर में से बाहर आजाती हैं और बातचीत करने लग जाती हैं।)

पहली स्त्री:—सुलोचना बाई चाल्या कांई म्हांन भक्तामर जी तो ख जाओ।

सुलोचना:—अभी तो आप माला फेर रही हैं। भक्तामर जी कैसे सुनेंगी ?

पहली स्त्री:—अजी, मैं तो भक्तामर जी और माला दोन्यों काम साथ-साथ कर लेस्यूँ।

सुलोचना: या तो आप भक्तामरजी ही सुन लीजिये या माला ही फेर लीजिये। दोनों कामों में एक साथ मन कैसे लगेगा ?

पहली स्त्री—अजी मन न तो भक्तामरजी में ही छै और न माला में ही छै, मन तो रसोई में जारियो छै। खिचड़ी चढ़ार आई छी। जाए डेगची क चेंट गई होली कांई, फुरती करो सट-सट बाँच डाल ज्यो।

सुलोचना—देखिये, इस तरह भक्तामरजी कह कर मैं पाप भाग नहीं लेना चाहती। आप जानती हैं इस तरह देव और शास्त्र दोनों का अनादर होता है।

पहली स्त्री—अजी, थे भी कांई पाप पुण्य को झगड़ो टण्टो ल्याया बाईजी

(दूसरी स्त्री का प्रवेश)

दूसरी स्त्री—अजी कांई छै, साँगानेर हाला बाईजी !

पहली स्त्री—अजी झांको तो सही। मैं आं बाईजी ने खियो भक्तामरजी खजाओ तो जाए बी में पाप पुण्य को कांई टंटो गेर दियो।

दूसरी स्त्री—अजी खो क्यों न।

सुलोचना—मैंने इनसे यह कहा कि आप या तो माला फेर लीजिये या भक्तामरजी ही सुन लीजिये।

दूसरी स्त्री—हा जी हा थे आ कांई बात खही। मन्दिरजी का काम तो जतरा कर्‌या जाय बंतरा ही थोड़ा छै। साथ बिना साथ को ईमें कांई पचड़ो ल्याया। देखो म्हें तो एक ही भगत में पूजा भी सुणल्याँ माला भी फेर ल्यां, भक्तामरजी भी सुण ल्यां और कोई शास्त्रजी को पन्नों बाँच वालो, ह तो बीन भी सुणल्यां। हर और सुणों; दो-चार लुगायाँ हो लो घर-धंधा की बातां भी करल्यां, म्हां के तो इसी लाग लपेट को न बाबा।

पहली स्त्री—अजी ईम अपणा कांई नुकसान पड्यो। ईम तो आपां फायदा में ही रिया, भगत भी थोड़ो लाग्यो ओर काम भी दो की जगां च्यार कर लिया।

सुलोचना—अभी मुझे पाठशाला जाने के लिये जल्दी है। नहीं तो मैं आपको अच्छी तरह समझाती कि आप लोग जो यह ढंग पकड़े हुए हैं, वह कितना बुरा है।

पहली स्त्री—ल्यो आ और ल्यो। अ काल का निपजोड्या म्हां को ढंग ही बुरो बतावा लाग गया। म्हां को ढंग थे कांई बुरो देख्यो। म्हां की दादेर सासूजी जी गल चाली बी गल ही म्हां की सासू चाली और म्हां की सासू जी गल चाली बी गल म्हें चालरिया छां।

दूसरी स्त्री—ढंग तो थां को, आज कल की छोरयाँ को देखो जो धोली धोती पहन जगत में ढोल्याव। क्यों लाज शरम ही कोन। म्हां को देखो, म्हां का सासूजी पूरो १० गज को घाँघरो पहन छां।

सुलोचना—अच्छा साहब, आपके सासूजी १० गज का पहनते थे तो आप १५ गज का पहनिये। मेरे पास आप लोगों से जिदने का समय नहीं है।

दूसरी स्त्री—अजी म्हें कांई थां के वासतें ही थोड़े खियो छै। देखी जसी खांला।

सुलोचना—बहुत अच्छा, आप जो कुछ भी कहें, कहती रहिये। (कह कर चली जाती है)

पहली स्त्री—थे आं की कोनी सुणीं कांई बेचारो आं को दादाजी एक चोख ठिकाणा आँ की सगाई कर रह्यो छो, जो रो

रीठ कर कोन होवा दी। बोल्या लड़को पढ्यो गुणों कोन। मैं तो ब्याह करूँ तो कोई पढ्या लिख्या सूँ करूँ।

दूसरी स्त्री—राम राम, बाप-दादा की लाज-शरम तो सारी ही खोदी।

पहली स्त्री—अजी थे देखजो, आँ छोरयाँ का अही ढंग रिया तो आसमान टूट कर धरती पर पड़ जायलो!

दूसरी स्त्री—एक पापी नाव में बैठ और सबन ले मर, सो आसमान आं छोरयां की करतूतां सूँ गिरेलो और साथ में आपां लोगाँ ने भी गिरनो पड़ेलो।

पहली स्त्री—खैर जी, अब जो-जो होसी आपाँ भी देखता जासाँ। अजी थे माला फेर आया काँई।

दूसरी स्त्री—हाँ, मैं तो फेर आई।

पहली स्त्री—अब जारिया छो कांई! थोड़ी देर ऊबारो जद तो मैं भी अवार माला फेर कर आई। अजी, दो नाम लेणा छै, कितनीक देर लागे छै।

दूसरी स्त्री—नहीं भाया, मैं तो घरां जार अब चोको-बरतन करूँ ली। जेठजी आज ही नो बज्यां की गाड़ी सूँ चौमूं जायला।

(एक निज मन्दिर और एक घर की ओर चली जाती है)

(चन्द्रप्रभा और प्रियम्वदा निज-मन्दिर के बाहर बातें करती हुई निकलती हैं)

चन्द्रप्रभा—मैं तो इसे बेमेल विवाह और बाल-विवाह का दुष्परिणाम समझती हूँ।

प्रियम्बदा—तुम्हारा ख़याल बिलकुल ठीक है। सावित्री के भाई को मुश्किल से १५ वां साल जा रहा होगा।

चन्द्रप्रभा—मैंने सुना जब से विवाह हुआ बेचारा लड़का घुन की तरह घुला जा रहा था।

प्रियम्बदा—एक तो बाल-विवाह और दूसरे लड़की लड़के से बड़ी ढूंढ़ी गई।

चन्द्रप्रभा—बस यही तो लड़के के लिए घातक हो गया।

प्रियम्बदा—पता नहीं माता पिता जान बूझकर भी अपने लड़के लड़कियों को ऐसे बेजोड़ विवाह के बन्धन में क्यों बाँध देते हैं। इधर लड़के का पिता अपने पुत्र सुख से गया और उधर लड़की जन्म भर अपने कर्मों को कोसती रहेगी।

चन्द्रप्रभा—अजी, रुपये का लोभ जो है।

प्रियम्बदा—रुपये का लोभ कैसा ?

चन्द्रप्रभा—रूपचन्दजी को लड़की के दान-दहेज़ में काफ़ी रक़म मिली है।

प्रियम्बदा—बस यह लोभ ही आदमी का गला काटता है।

(पहली स्त्री का एक तीसरी स्त्री के साथ प्रवेश)

पहली स्त्री—आजी चाँदवाई ! कांई वाता चाल रही छै ?

चन्द्रप्रभा—जी कुछ नहीं, यही कोई रूपचन्दजी के लड़के के ब्याह की बात थी।

पहली स्त्री—अजी, रूपचन्दजी का लड़का को ब्याह अब कुण करलो। वो तो बड़ो आवारा छै।

प्रियम्बदा—जी नहीं, हम तो अभी जो उनका छोटा लड़का गुजरगया था, उसकी बात कर रहे थे।

तीसरी स्त्री—अजी तो वो गुजर गयो सो आपक घर गयो बीका ब्याह की अब कांई बात छी।

चन्द्रप्रभा—कुछ यह जिक्र चल रहा था कि लड़के का ब्याह थोड़ी उम्र में किया और लड़की लड़के से बड़ी ढूंढ़ी गई।

पहली स्त्री—सो ई में कांई बात हुई ?

चन्द्रप्रभा—इससे यह हुआ कि वेचारी प्रेमलता को इतनी छोटी उम्र में वैधव्य का दुःख देखना पड़ रहा है।

दूसरी स्त्री—अजी थे भी खूब बाल-ब्याह और वृद्ध-ब्याह को पचड़ो ल्याया।

पहली स्त्री—अजी आं लोगां के तो रात दिन याई लागी रहे छै। बाल-ब्याह, बेमेल ब्याह, बाल ब्याह, बेमेल ब्याह, बाल ब्याह, बेमेल ब्याह।

दूसरी स्त्री—हाँ जी, ठीक तो छै। सुहाग-दुहाग तो कर्मों का खेल छै। कोई को करयोड़ो कोन होव। जीं का भाग में जो लिखी वा होर रही। कोई को टाल्योड़ो टल कोन।

पहली स्त्री—म्हें तो बड़ा-बूढ़ा का मुँह सूं या बात सुणता आया छां।

"छोटा बना बड़ा सुहाग, बड़ा बना बड़ा ही भाग"

दूसरी स्त्री—सांगानेर हाला ! थे तो सांची-मांची बात ख दी। यां लोगां को तो आज कल की पढ़ाई सूँ माथो बिगड़ गयो छै।

पहली स्त्री—अजी ये तो हाल कोरा किताबां का कीड़ा छै। घर गृहस्थी में कांई जाणला। इतरा पढ़ गुण कर हाल घर में ई कांई कोन जाण।

दूसरी स्त्री—अजी, धरम करम का नाम सूं तो या लोगाँ न बीछू काट खावे छै।

पहली स्त्री—न यासूँ क्यों धरम करम है और ना आसूँ क्यों शोध अन्तराय सध।

प्रियम्वदा—मैं यदि आप लोगों से यह पूछूँ कि शोध अन्तराय किस चिड़िया का नाम है, तो उसका भी आप लोगों के पास कुछ जवाब है या नहीं।

दूसरी स्त्री—देखो जी म्हें तो शोध अन्तराय या जाणां छां कि हर एक चीज मर्जादा सूँ बरते नहा कर पानी ल्याव और नहा कर चोको बरतन करे।

चन्द्रप्रभा—(बीच ही में व्यंग्य से) और दिन भर धोती धोवे और निचोड़े। क्यों यही न ?

पहली स्त्री—अजी थे कांई धोती धोवोला और निचोवो ला। म्हन देखो दिन में दस बार न्हानो पड़े छै। शोध यूँ ही थोड़े ही सधे छै। धरम-करम बड़ी मुश्किल से सधे छै।

प्रियम्वदा—तो बस आप लोगों की शोध अन्तराय नहाने धोने में ही पूरी हो जाती है।

दूसरी स्त्री—नहाने धोने में ही क्यों ? रसोई में कोई ने घुसवा कोन द्यां। परिण्ड कोई न लागवा कोन द्यां।

चन्द्रप्रभा—और बालकों से भिड़ें नहीं और मर्दों को छुयें नहीं !

प्रियम्बदा :—(व्यंग्यसे) और मर्दों को रसोई में घुसने नहीं दें !

पहली स्त्री—थे तो म्हान चुटक्यां में ही उड़ा रहा छो। ल्यो आवो जी आवो चान्द बाई। (नाराज़ होकर दोनों का जाना)

चन्द्रप्रभा—(पहली स्त्री को छू कर) अजी साहब ! आप इतने बिगड़ते क्यों हो ?

पहली स्त्री··अजी, म्हान छूओ क्यों छो। मैं तो बार ही बार मन्दिर का टुफा कपड़ा पहन कर आई छी, घर जाता ही म्हान तो फेर नहानों पड़े लो न।

प्रियम्बदा :—अजी साहब यह तो अच्छा ही हुआ आप जितना नहायेंगे उतना ही पवित्र होते चले जायेंगे।

पहली स्त्री :—अजी तो फेर म्हें कांई न्हावा-धोवा में ही थोड़ा ही बेठ्यां रालां। रोटी भी तो आज तीन बार करनी पड़ली। पली तो बाल बच्चा के तांई रोटी करांला। फेर मोट्यारां के तांई रोटी करांला। फेर म्हांके तांई शोध की रोटी न्यारी करांला।

चन्द्र प्रभा :—तो साहब अभी क्या हुआ अभी तो छः भी नहीं बजे।

दूसरी स्त्री :—अजी थे बजबा की तो रहबा द्यो। म्हांको में काल शोध की रोटी तीन बार बनाई जद जार कोई रोटी हाथ लागी।

प्रियम्बदा :—अजी तीन बार क्यों बनानी पड़ी

दूसरी स्त्री :—अजी भांको पहली म्हांक छोटो भायो चोका में घुस गयो और दूसरां गुलाबी बिना हाथ धोयाँ चून क हाथ लगा दिया।

चन्द्र प्रभा :—अजी तो क्या आप लोगों के बात बात में चौका उतर जाता है क्या ?

पहली स्त्री :—अजी थे तो हाथ लगावा की खो छो और म्हाक तो कोई कुत्तो बिल्ली बोल जाय तो बीमें भी अन्तराय पड़ जाय।

दूसरी स्त्री :—भांको परसों म्हांका सासूजी रोटी खाता हीं छोटो भायो बिल्ली को नाम लेदियो जो बिचारा रोटी खाता ही ऊठ गया।

प्रियम्बदा :—अजी साहब आप लोगों की शोध तो बड़ी विचित्र है।

पहली स्त्री :—अजी जिद ही तो खां छा थां सूँ म्हांकी शोध अन्तराय कोन सवेलीं ल्यो आवोजी आवो आपांतो चालां। आज नानमल जी क गीता में न्यारो जाणो छै।

(दोनों जाती हैं)

प्रियम्बदा :—पता नहीं परमात्मा इन लोगों को कब बुद्धि देगा ?

चन्द्र प्रभा :—तुम भी क्यों इनसे माथा पचाती थीं। साक्षात् बृहस्पति भी समझाने को आजांय तो ये इस ढोंग को छोड़ने के लिये तैयार नहीं है।

प्रियम्बदा :—धर्म का वास्तविक रूप क्या है इस से तो ये बिल्कुल अनजान हैं।

चन्द्र प्रभा :—खैर ! जाने दो चलो पाठशाला जाने में देर हो रही है।   (दोनों चली जाती हैं।)

पटाक्षेप

चौथा दृश्य

स्थान-- रूपचन्द जी का घर ।

(रूपचन्द जी के छोटे लड़के की विधवा स्त्री प्रेमलता अपने घर के आंगन में बुहारी निकालती हुई गायन गा रही है ।

गायन

मोरा मन तनिक न पाये चैन ।
यह संसार असार जान, भज ईश्वर गुण दिन रैन ॥
सास ननद भाई भौजाई, विपद पड़े बोले नहिं भाई ।
धिक, धिक डाइन, लाज शरम नहिं सुनत पड़े ये बैन ॥१॥
जो बोले काटत ही बोले, झिड़की दे सगरा तन छोले ।
उतर देत पीटत तन फरकत ज्यों पंछी का डैन ॥२॥
घर में घुल घुल कर मर जाना, दुख दिल नहीं किसी ने जाना
बाहर निकसत यह वो विधवा लोग बतावें सैन ॥३॥
विपद घटा मंडरावे गरजे, हे भगवन क्यों विधवा सरजे ।
तन मन पल पल छीजत, पर हारे नहिं आँसू नैन ॥४॥

(नेपथ्य में सास की आवाज़ बहू-अरी ओ बहू । बहू आवाज़ सुन कर सतर्क होकर झाड़ू लगाने लगती है । अरी बहू-बहू)

बहू :—हाँ आई ।

(इतने में सास आती हुई) अरे कहाँ मर गई ?

सास :—(स्तम्भित हो कर) अभी तक झाड़ू ही लगा रही हो ? चौका बर्तन पड़ा है। गाय भैंसों का दूध निकालना है। विमला, चमेली को नहलाना है। एक क्या लाख काम पड़े हैं और अभी तक तुम इस बुहारी देवी को ही नहीं मना चुकी।

बहू :—साहब निकाल रही हूँ आखिर इतना बड़ा चौक है।

सास :—अजी देखा तुम्हारा इतना बड़ा चौक। इतनी देर में इससे पचगुने चौक में झाड़ू लगा दूँ। काम कौन करे ? काम काज करते हाथ पाँव घिसते हैं। अभी मुश्किल से १० सेर गेहूँ पीसे उसमें आधा दलिया और आधा आटा पीसा है। कहा था अँधेरे अँधेरे ही परिण्डे का पानी छान देना, सो अँधेरे अँधेरे पानी छानने की कौन कहे सूरज निकले तो बहूजी पलंग पर से उठीं। अरे इस लम्बे चौड़े डील डौल का करोगी क्या ?

बहू :—यह भी मेरे कोई बस की बात है। आपको नहीं सुहाता है तो छील डालिये।

सास :—अरी रहने दे मुझ से यह तर्क करना। बदन छील डालिये ! मैं मेरे माथे कोई तुम्हारी हत्या लेने जा रही हूँ। तुम्हें मरना है तो खुद ही मर जाओ। मुझसे बदन छिलवा कर मुझे नरक भेजोगी क्या ?

(बहू रोने लग जाती है।)

सास :—बड़ी जल्दी आँसू छलक आये। रोकर मुझे डराती हो क्या ? इस घर में रहना है तो घर का सब काम काज करना होगा। बहूजी को पलंगों पर ही पोढ़े रहना था तो किसी बड़े घर गई होती। यहाँ मेरे घर को बर्बाद करने क्यों आई ? मेरे कलेजे

को तो तूने आते ही निकाल लिया। मेरा तो अब ढाँचा ही ढाँचा बचा है।

(विमला का दौड़ते हुए प्रवेश)

विमलाः—माँ कल से मेरी धोती गुसलखाने में बिना धुली पड़ी है। पाठशाला जाने का समय होगया, अब मैं क्या पहन कर जाऊँ ?

सासः—लो यह और सुनो (माथे पर हाथ रख कर) अरे ईश्वर तुम्हें कब समझ देगा।

बहू :—मैं क्या करूँ, मैंने तो गुसलखाने के सारे गीले कपड़े समेट धोकर सुखा दिये थे। बाईजी की धोती तो मुझे कहीं दिखलाई पड़ी नहीं।

सासः—विमला धोती कहाँ रक्खी थी ?

विमलाः—माँ धोती परनाले में धँसी पड़ी है। जाने किसने धँसाई है ?

सासः—और कौन धँसा सकता है ? तेरी भाभी ने ही धँसाई होगी। सोचा होगा एक धोती की धुलाई ही हल्की हुई। कल सुबह से धोती परनाले में पड़ी पड़ी गल गई होगी। अरी तुम्हें धोती धोना ही नहीं था तो नहीं धोती पर उसे परनाले में क्यों चलाई ! मेरी तो सारी गृहस्थी चौपट किये जा रही है ! जानती हो आज एक हल्कीसी धोती बाजार में मोल लेने आओ तो दूकानदार कितना बड़ा मुँह फाड़ते हैं। पूरे पाँच रुपये के तांबे के गंडे उनके मुँह में समा जायँ। इधर तो कपड़ों का भाव पर भाव बढ़ता जारहा है और इधर तुम इस तरह नये २ कपड़ों को चिथड़े बनाती जारही हो !

बहू :—पर मैं कहती हूँ परनाले में धोती मैंने चलाई ही कहाँ ?

सासः—नहीं और कौन आगया ? ये छोटी बच्चियाँ तो ऐसा करने ही क्यों लगीं ? सावित्री बेचारी को पढ़ने लिखने से ही फ़ुरसत नहीं मिलती। तुम्हारा मतलब है मैंने ऐसा किया।

बहू :—मैं कब कहती हूँ आपने ऐसा किया।

(चमेली का दौड़ते हुए प्रवेश)

चमेली :—माँ, माँ, मेरे बटवे में से पैसे चोरी चले गये।

सास :—पैसे चले गये ? कितने पैसे थे ?

चमेलीः—एक दुअन्नी, दो अन्नी, तीन पैसे और चार कौड़ियाँ जिनमें दो फूटी और दो साबत।

सासः— राम ! राम ! अब यह गृहस्थी कितने दिन चलेगी ? विमला पैसे तूने लिये ?

विमला :—(उदास मुंह से) नहीं तो, मैं क्यों पैसे लेने लगी ?

सास :—हाँ ठीक तो है, यह पैसे क्यों लेने लगी ? मेरे घर में तो आज तक कोई ऐसा निकला नहीं। चमेली तूने बटवा कब रक्खा था ?

चमेली—कल दस बजे स्कूल से आकर।

सास—बहू; कल तुम भी तो दिन ढले कल छोटे कमरे में गई थी न।

विमला—इसके पीछे से मैं भी गई तो देख रही हूँ कि भाभी चमेली को किताबें ढूँढ रही है।

चमेली—माँ, बटवा किताबों के बीचों बीच पड़ा हुआ था।

सास—पैसे और कौन ले सकता है ? (बहू की ओर कड़ी निगाह से देखती है।)

बहू—मैं कमरे में घुसी अवश्य थी किन्तु..........

सास—चमेली की किताबों को टटोलने से क्या मतलब था ?

बहू—मैं जी बहलाने के लिये कोई कहानी की किताब ढूँढ रही थी।

सास—यह कहो न किताब ढूँढने के बहाने पैसों की तलाश कर रही थी।

बहू—(गिड़गिड़ा कर) मैं बिल्कुल सच कहती हूँ पैसे मैंने नहीं लिये।

सास—झूँठी कहीं की। चलो विमला चमेली नहा-धोकर स्कूल जाने की तैयारी करो।

(विमला, चमेली, सास चली जाती हैं)

(बहू सिसकियां भरती हुई रोने लग जाती है)

(सावित्री का हाथ में किताबों का बण्डल लिये प्रवेश)

सावित्री—भाभी यह क्या! तुम रो क्यों रही हो ?

बहू—नहीं तो, झाड़ू निकाल रही हूँ। कोई फूँस आँख में चला गया था उसे निकाल रही थी।

सावित्री—नहीं, तुम मुझसे छिपा रही हो। तुम्हारी सूरत तो साफ़ कह रही है कि तुम रो रही थी। अभी माँ, विमला और चमेली की आवाज क्यों आ रही थी। (बहू रोने लगती है)

सावित्री—माँ ने तुमसे कुछ कहा ?

बहू—जी नहीं, मैं क्या उनका कहा बुरा मानती हूँ। वे मेरी पूज्य हैं। मैं उन्हीं की नहीं सुनूँगी तो भला किसकी सुनूँगी।

सावित्री—क्या बात थी ?

बहू—कुछ नहीं, यूँ ही।

सावित्री—आखिर बताओगी भी, मुझसे तो तुम कोई बात नहीं छिपाती।

बहू—आपसे छिपाऊँगी तो फिर कहूँगी किससे ?

सावित्री—तो फिर कहो न।

बहू—बात यह थी कि छोटे बाई जी की धोती परनाले में धँसी मिली और मँझले बाई जी के बटुवे से कुछ पैसे चले गये।

सावित्री—तो इन बातों से तुम्हारा क्या सरोकार था ?

बहू—सासजी का कहना है कि ये दोनों काम तुम्हारे किये हुए हैं।

सावित्री— (आवाज़ लगाती है) चमेली—विमला

(नेपथ्य में से आवाज़ आती है—आती हैं)

(चमेली और विमला का किताबों का बण्डल लिये प्रवेश)

सावित्री—चमेली ! कल सुबह नहा-धो लेने के बाद तुम गुसलखाने में क्यों गई थी ?

चमेली—मेरा एक दस्ती रुमाल नहीं मिल रहा था उसे ढूँढने गई थी।

सावित्री—मैं जब छत पर खड़ी कबूतरों को अनाज डाल रही थी तो मैंने देखा-तुम कमरे के बाहर निकल कर अपने हाथों से पानी छिटका रही हो और खूँटी टके तौलिये से हाथ पौंछ रही हो। दस्ती रुमाल ढूँढने के लिये पहले हाथों को भी गीला करना पड़ता है ?

चमेली—माथे पर बिन्दी लगाने के लिये केशर की कटोरी में पानी मिलाया था।

सावित्री—गुसलखाने में घुसी तब मैंने देखा था तुम्हारे माथे पर बिन्दी लगी थी।

चमेली—पहले हींगलू की बिन्दी लगी थी, वह मुझे कम पसन्द है।

सावित्री—झूँठ बोलती है! बिन्दी केसर की लगी हुई थी।

बहू—रहने दीजिये न आप जबरदस्ती इनको क्यों तंग कर रहे हैं?

सावित्री :—नहीं भाभी! इस तरह इनकी आदत खराब होती है।

(चमेली चुपचाप नीचा मुँह किये खड़ी है)

सावित्री :—बताती है या नहीं अभी चाँटा लगाँऊ।

बहू :—आप इनको क्यों तंग किये जा रहे हैं। कहती हूँ न कि परनाले में धोती मैंने ही चलाई थी।

सावित्री :—बता बता, बोलती नहीं

चमेली - धोती मैंने ही धँसाई थी।

सावित्री—देखा भाभी इन लड़कियों की शरारत। (विमला की ओर लक्ष्य करके) विमला कल तुमने अम्मा से कितने पैसे लिये?

विमला—दो पैसे।

सावित्री—तुमने कल पंजाबी खिलौने वाले से एक खिलौना लिया था न?

विमला—जी हाँ।

सावित्री—कितने पैसे का लिया ?

विमला—दो पैसे का।

सावित्री—चार पैसे से कम का तो कोई खिलौना यह बेचता ही नहीं है। दोपहर को आइसक्रीम भी तो खाई थी।

(विमला नीचा मुँह कर लेती है।)

सावित्री—कितने पैसे वाली आइसक्रीम थी ?

विमला—चार पैसे वाली।

सावित्री—तुमने अम्मा से तो दो ही पैसे लिये। बाकी पैसे कहाँ से लाई ?

विमला—गये इतवार को बड़े भैया से लिये थे।

सावित्री—झूँठ! बड़े भैया तो गये इतवार को गाँव में खेत सँभालने गये थे।

विमला—तो सोमवार को लिये होंगे।

सावित्री—झूँठ पर झूँठ बोलती जा रही है। (चमेली से) चमेली तुम्हारे कितने पैसे खोये ?

चमेली—एक दुअन्नी ! दो अन्नी, तीन पैसे और चार कौड़ियाँ जिनमें दो फूटी दो साबुत।

सावित्री—ओह ! कौड़ियाँ भी थीं ! विमला ब्यालू करने के पहले तुम तुम्हारे क्लास वाली कमला के साथ कौड़ियों से चंगापो खेल रही थी न।

विमला—(गरदन से हामी भरती है)

सावित्री—कौड़ियाँ कहाँ से लाई ?

विमला – मेरे अपने ही पास पड़ी हुई थीं।

सावित्री—झूठी कहीं की, चोरी तो सब खुलती चली जा रही है और फिर भी तू इन्कार करती जा रही है। तू ने दो पैसे अम्मा से लिये और चमेली तेरे कितने पैसे हुए ?

चमेली—पौने पाँच आने और चार कौड़ियाँ।

सावित्री – पौने पाँच आने और दो पैसे सवा पाँच आने। चार पैसे का खिलौना, चार की आइसक्रीम, बाक़ी सवा तीन आने और चार कौड़ियाँ कहाँ गई।

बिमला—मुझे क्या मालूम ?

साबित्री— (चाँटा उठाकर) बताती है या नहीं।

बहू—अभी आप इनको स्कूल जाने दीजिये। घंटा बजने ही वाला होगा।

सावित्री—तेरी जेब बता, (जेब की तलाशी लेती है) तेरा बस्ता बता (एक एक किताब देखती है) (बस्ते में एक रूमाल के पल्ले में बँधे हुए सवा दो आने और चार कौड़ियाँ मिलती हैं) एक आना कहाँ है ?

विमला—एक आने की आइसक्रीम कमला ने खाई थी।

सावित्री— (चाँटा मारकर) चोर कहीं की! देख चल तू आज स्कूल में मास्टरनीजी साहब से कह कर तुझे मार पड़वाऊँ।

(तीनों स्कूल चली जाती हैं। बहू अन्दर चली जाती है)

पांचवाँ दृश्य

स्थान—स्थानीय बालिका-विद्यालय

(बालिका-विद्यालय की छात्राएँ 'भारतमाता' नाटक का रिहर्सल कर रही हैं। बालिका-विद्यालय की अध्यापिका 'भारतमाता' के वेष में एक ऊँचे सिंहासन पर विराजमान है और उसके सम्मुख चार बालिकाएँ उसकी स्तुति करने के लिए उद्यत हैं। प्रभा एक तरफ खड़ी रिहर्सल का निरीक्षण कर रही है और सुनीता रिहर्सल की व्यवस्था कर रही है। कुछ अन्य बालिकाएँ अपने पार्ट की इन्तजारी में एक तरफ बैठी हैं। पर्दा उठने के साथ ही बालिकाएँ भारतमाता के सम्मुख उसका स्तुति-गान करती हुई दिखाई देती हैं।)

गायन

भारत मां को हम बालाएँ सब शीश झुकाती हैं।
यह भारत देश हमारा, धन-धान्य पूर्ण उजियारा।
है सकल विश्व का प्यारा, नयनों के बिच में तारा॥
गंगा-जमुना की छटा निराली हमें लुभाती है॥१॥

(भारतमाता स्तुति गान समाप्त होने के जरा पहले ही क्रोध के साथ अपने सिंहासन से उठकर बालिकाओं के सम्मुख आजाती है और बालिकाओं को एक रोषपूर्ण फटकार सुनाना चाहती है। बालिकाएँ भारतमाता की इस भयावनी मूर्ति को देखकर कांपने लग जाती हैं और बहुत ही विनीत-भाव से उसको प्रणाम करती हैं।)

सब बालिकाएँ :—मातेश्वरी प्रणाम।

भारतमाता :—(कठोर और आकाशभेदी शब्दों में) आज तुम

किस मुँह से मेरी प्रशंसा का गीत गा रही हो ! किन अकर्मण्य हाथों से मुझे नमस्कार करने जा रही हो ! आज जहाँ मेरे करोड़ों बच्चे भूख से तड़प, तड़प कर मर रहे हैं वहाँ मुझे धन धान्य से पूर्ण बता रही हो ! जहाँ मेरे लाखों बच्चों के खून की नदियाँ अविश्रान्त होकर बह रही हैं वहाँ तुम गंगा और यमुना की शोभा बखान रही हो ! मुझे स्तुति-गान सुनाने के पहले मेरे दोनों कानों को बन्द करदो। तुम्हारा नमस्कार झेलने के पहले मेरी आँखों को नष्ट करदो।

एक बालिका :—मातेश्वरी ! आज तुम्हारी आँखों से ये आग चिनगारियाँ कैसी निकल रही हैं ! भृकुटियाँ चढ़ी हुई हैं ! ओंठ क्रोध से काँप रहे हैं ! तुम्हारी यह आकृति करुणामयी माता की सी न होकर प्रकोप युक्त रणचण्डी की सी क्यों दिखाई दे रही है। और तुम्हारे स्नेह-पूर्ण आशीर्वाद के बदले यह तिरस्कार पूर्ण फटकार क्यों सुनाई जा रही है ?

मातेश्वरी :—बालिकाओ आज मैं सचमुच तुम्हें एक तिरस्कार पूर्ण फटकार सुनाने जा रही हूँ।

दूसरी बालिका :—मातेश्वरी हमारे लिये क्या आज्ञा है ?

मातेश्वरी :—बालिकाओ ! आज तुम किस गहरी नींद में सो रही हो ? मेरे हज़ारों लाल लोहे के सींकचों में बन्द पड़े हैं ! तुम्हारी सैकड़ों बहिनों का गौरव पद-दलित किया जा रहा है। जगह जगह आग की लपटें दिखाई दे रही हैं ! मेरे शरीर के हर एक हिस्से पर दुःख और दीनता की काली रेखायें खिंची हुई हैं ! कहीं बालकों की करुण चीत्कार सुनाई पड़ती है ! कहीं विधवाओं की मर्मभेदी पुकार मेरे तन को जला रही है ! मेरा सोने का संसार

मिट्टी हो गया। कला-कौशल मिटा दिया गया! बुद्धि-विज्ञान भ्रष्ट कर दिया गया! गुण-गौरव भुला दिया गया! क्या तुम सब इस भीषण काण्ड से कतई अनजान हो जो आज मेरी सैकड़ों वर्ष पहले की अवस्था का गुणगान कर रही हो।

तीसरी बालिका:— मातेश्वरी हमारे अक्षम्य अपराध के लिये हमें अत्यन्त खेद है। आप जल्दी से मार्ग-प्रदर्शन कीजिये और हमें आज्ञा दीजिये कि हम क्या करें ?

मातेश्वरी—तुम आज तुम्हारी माँ को भूल चुकीं। उसके दुःख दर्द का ख्याल तुम्हारे हृदय से जाता रहा। तुम मेरी पुत्री लक्ष्मी-बाई को याद करो जिसने मेरे लिये एक महाशक्ति का बड़ी वीरता से मुक़ाबला किया। मेरी प्यारी पुत्री दुर्गावती का स्मरण करो जिसने मेरी रक्षा केलिये अपना शरीर तक छोड़ दिया। आज तुम ऐसी पुत्रियां पैदा हुई जो तुम्हारे देखते देखते तुम्हारी माँ की यह दुर्दशा होगई और तुम अब भी आराम का सांस ले रही हो!

चौथी बालिका—मातेश्वरी अब हमें अधिक लज्जित न करो! और जल्दी से जल्दी तुम्हारी आज्ञा सुनाओ।

मातेश्वरी—अगर तुम्हें मेरी दशा पर खेद है तो जाओ! घर की चहार दीवारी को छोड़ दो; आभूषणों का मोह त्याग दो; घूँघट और पर्दे को तोड़ फेंको और मेरी स्वाधीनता के लिये संग्राम में कूद पड़ो। लड़ो और रणचण्डी की भाँति लड़ो; वीराङ्गना की भाँति लड़ो; 'देहं वा पातयामि, कार्यं वा साधयामि' के अनुकूल या तो मुझे आज़ाद करो या लड़कर अपने प्राणों का त्याग करो। बस यही मेरी आज्ञा है। बोलो, तैयार हो ?

सब—(एक स्वर से) हम सब तैयार हैं।

पहली बालिका—मातेश्वरी, किन्तु इस स्वाधीनता-संग्राम के लिये हम कौनसा रास्ता ग्रहण करें और हमारा कार्य-क्रम क्या होना चाहिये ?

मातेश्वरी—कल प्रभातकाल में तुम सब मुझसे मिलना। मैं तुम्हें इस आजादी की लड़ाई के लिये बहुत ही सफल कार्यक्रम बतलाऊँगी।

पहली बालिका—भारतमाता—

सब—आज़ाद हो।

पहली बालिका—भारतमाता की—

सब—जय हो।

(दोनों नारे तीन तीन बार लगाये जाते हैं)

सुनीता—(कुछ आगे बढ़कर) प्रभा यह हमारे नाटक भारतमाता का पहला दृश्य है।

प्रभा—(खड़ी होकर) नाटक वास्तव में तुमने समय के अनुकूल तैयार कराया है। इस समय ऐसे ही नाटकों की आवश्यकता है।

सुनीता—इससे आगे के दस स्सीन और भी प्रभावपूर्ण हैं। क्या गायन और क्या स्पीचें। सुनकर देश का चित्र आँखों के सामने घूम जाता है।

प्रभा—अभी मुझे समय नहीं है, नहीं तो मैं आज ही पूरा रिहर्सल देख कर जाती।

अध्यापिका—(अपना मुकट उतारती हुई आगे बढ़कर) और प्रभा, इसका खुद का पार्ट भी ऐसा ही जोशीला है कि सुन कर

रोंगटे खड़े हुए बिना नहीं रह सकते। सुनीता ! तुम तुम्हारी स्पीच तो जरा सुनाओ।

प्रभा—हाँ सुनीता तुम्हारी स्पीच तो मैं अवश्य सुनकर जाऊँगी।

सुनीता—किन्तु अभी मैंने इसे ठीक तैयार नहीं किया है।

प्रभा—जितनी भी तैयार हो उतनी सुना दो न, अभी तो हम ही हम हैं, कोई स्टेज पर तो सुनाना नहीं है जो हिचकिचाहट हो।

[सुनीता स्पीच सुनाती है]

"ऐ खेती करने वाले किसान, हल चलाना बन्द कर। अनाज पैदा करके किसको खिलावेगा। तू सैकड़ों वर्षों से अनाज का ढेर का ढेर पैदा करता आ रहा है। किन्तु फिर भी तुम्हारा यह पेट खाली क्यों दिखाई दे रहा है ? तुम्हारे बच्चे रोटी रोटी क्यों पुकार रहे हैं ? तुम्हारी घरवाली को एक बार रोटी खाकर ही क्यों गुजारा कर लेना पड़ता है। इस कड़ी धूप से बचने के लिये तुम्हारे पास कपड़ा नहीं ! तुम्हारी झोंपड़ी बरसात में टप, टप चूती हुई दिखाई देती है ! तुम्हारे बच्चे सर्दी में सिसक रहे हैं ! आओ ! आओ। मेरे साथ आओ, तुम्हारे इन सब दुःखों को दूर करने का उपाय मैं बताऊँ।"

"ऐ मजदूरो ! तुम्हारी यह मजदूरी कैसी विचित्र है ! दिन भर मजदूरी करते हो, धन्धे में पिले रहते हो, लोहे की भारी भारी मशीनों से मुकाबला करते हो, बड़े, बड़े पत्थर उठाते हो, पहाड़ की चोटी पर पहुँचते हो, समुद्र के गर्भ में प्रवेश करते हो, जमीन के अधोभाग में घुसते हो, किन्तु तुम्हें तुम्हारी इस मजदूरी का मिला क्या ? केवल पाँच आना ! सात आना, नौ आना ! यह तो

तुम्हारे बाल-बच्चों का पेट भरने के लिये भी काफ़ी नहीं है। तुम और तुम्हारी घरवाली क्या खाते होंगे? क्या तुम तुम्हारी इन कठिनाइयों को दूर करना चाहते हो? यदि हाँ तो आओ! मेरे साथ आओ! तुम्हारी इन सब तक़लीफों का उपाय मैं बताऊँ।"

"ऐ विद्यार्थियो। आपको यह कैसी शिक्षा मिली है? बदन इतना दुबला क्यों दिखाई दे रहा है? आँखों पर यह चश्मा क्यों लगा है? आप लोगों को पोथियों का बोझ ढोते ढोते बरस बीत गये। परन्तु आपकी यह प्रतिभा और मेधा शक्ति कैसी अनोखी है! परसों की बात कल भूल गये और कल की आज भुलाये जा रहे हैं। सैकड़ों कहानियाँ पढ़ीं लेकिन तुममें से कोई कहानी लेखक नहीं हुआ। सैकड़ों नाटक पढ़े किन्तु कोई नाटककार नहीं हुआ। सैकड़ों कविताएँ पढ़ीं किन्तु कोई कवि नहीं हुआ। अर्थ-शास्त्र की बड़ी बड़ी पोथियाँ पढ़ीं किन्तु सदा धन बरबाद करने का ही मार्ग ग्रहण किया; धन को सुरक्षित और एकत्रित करने का उपाय कभी नहीं किया गया। आपने विज्ञान पढ़ा किन्तु आविष्कार आपके मस्तिष्क से एक भी नहीं निकला। आप बी० ए० और एम० ए० पास करके उन्नति की जिस चरम सीमा तक पहुँच सकते हैं वह है बेकारी और नो वेकेन्सी का महक़मा। अगर खुशामद और गौरव की अवहेलना आपकी उस सीमा को और भी धक्का लगा कर बढ़ाने की कोशिश करे तो उसका अन्त जिस जगह जाकर होगा वह है सरकारी दफ्तरों की कुर्सियाँ। बस इससे आगे नहीं बढ़ा जा सकता। आप हज़ारों की पढ़ाई पढ़कर थोड़े से रुपयों की नौकरी के पीछे अपना अमूल्य जीवन समर्पित करते हैं, यह पहाड़ खोद कर चूहा निकालने के बराबर नहीं है तो और क्या है? आप हज़ारों पुस्तकें पढ़कर सरकारी काग़ज़ों की नक़ल

करना सीखते हैं यह महासमुद्र का मंथन कर कीचड़ हासिल करने के बराबर नहीं है तो और क्या है ?

बराबर देखा जा रहा है कि आप अपनी शिक्षा पद्धति से बिल्कुल ऊब चुके और इस पढ़ाई में आपको कतई दिलचस्पी नहीं है। आप आशा भरे नेत्रों से एक आदर्श शिक्षा-प्रणाली की बाट देख रहे हैं। यदि आप चाहते हैं कि उस शिक्षा प्रणाली का आपके सामने जल्दी से जल्दी आगमन हो तो आइये, आइये और हमारे स्वतन्त्रता-संग्राम के कार्य-क्रम में निर्भय होकर हाथ बँटाइये।"

"अय दूकानदारो आप यह कैसा अनोखा व्यवसाय करते हैं। हज़ारों के व्यवसाय में कौड़ियों का मुनाफा कमाते हो ! आपको उद्यम करते करते युग बीत गये लेकिन फिर भी आपके व्यवसाय से आपको और आपके देश को कोई लाभ नहीं हुआ। आपने यह विचार कभी नहीं किया कि आप जितना भी व्यवसाय करते हैं वह ऐसी वस्तुओं का करते हैं जो विदेश से बनकर आती हैं। उद्योग आप करते हैं और उसका नफा दूसरों के हाथों में जाता है। न आपको पूरा नफ़ा मिलता है और न उससे आपके देश-वासियों का ही भला होता है।

आप अपनी व्यवसाय-प्रणाली में एक आमूल परिवर्तन अवश्य देखना चाहते हैं किन्तु उस परिवर्तन का मार्ग भूल रहे हैं। आप अपनी दूकानों के ताला लगा दीजिये और जिस महाशक्ति के कन्धों पर यह व्यवसाय-प्रणाली खड़ी है, उसको दूर करने के लिये अपना नाम लिखा दीजिये।"

अध्यापिका—बस बन्द करो सुनीता। यह हमारे नाटक में सुधांशुबाला देवी का पार्ट करती हैं प्रभा ! आप गांव, गांव में,

शहर, शहर में, मोहल्ले, मोहल्ले में स्कूल और कालेजों में घूम घूम कर उपदेश देती हैं और जनता को आजादी की लड़ाई के लिये तैयार करती हैं। आपकी स्पीच का थोड़ा भाग करके सुनाया गया है।

प्रभा—अध्यापिका जी, मैं आपके कार्य की कहाँ तक प्रशंसा करूँ ?

सुनीता—ओ, नहीं प्रशंसा करने की कौनसी बात है। यह तो हमारा कर्त्तव्य है।

प्रभा—अच्छा अब जाती हूँ सुनीता तुमको धन्यवाद है।

सुनीता—धन्यवाद किस बात का। हाँ अभी दो एक गाने तो और सुन जाओ।

प्रभा—नहीं सुनीता, अब मैं और अधिक समय नहीं दे सकूँगी। किसी जरूरी काम से मुझे शीघ्र ही घर पहुँच जाना चाहिये। वक्त मिला तो फिर कभी सेवा में उपस्थित होऊँगी।

(जाने को उद्यत होती है)

सुनीता—नमस्कार।

प्रभा—(अध्यापिका की ओर मुड़कर) अध्यापिकाजी नमस्कार।

अध्यापिका—नमस्कार।

(प्रभा चली जाती है)

सुनीता—क्यों मास्टरनीजी साहब, अब आज का कार्य समाप्त करें ?

अध्यापिका—हाँ और क्या, सब चीजें अपने अपने ठिकाने पर रक्खो लड़कियो।

(लड़कियाँ सामान उठाकर यथा-स्थान रखने लगजाती हैं)

पटाक्षेप।

छठा दृश्य

स्थान—रूपचन्दजी के घर का आँगन।

(प्रेमलता खम्भे के सहारे बैठी हुई सो रही हैं। उसके सामने मूसल और ऊँखली पड़ी हुई है)
(नेपथ्य से आवाज़ आती है)

बहू-बहू-बहू-बहू-बहू—(अरी कहाँ मर गई कहती हुई सास का प्रवेश) वह उसको एक टक दृष्टि से देखती हुई गुस्से में भर जाती है। उसकी आँखें लाल पीली हो जाती हैं और पास ही पड़ी हुई झाड़ू उठाकर मारना चाहती है कि सावित्री आकर उसके हाथ से झाड़ू छीन लेती है।)

सावित्री—माँ यह क्या कर रही हो ?

सास—मैं उधर रसोई में बैठी खिचड़ी की बाट देख रही हूँ और यह राधा रानीजी इधर नींद ले रही हैं।

सावित्री—तो क्या हुआ माँ! बड़े भैया की दवा-दारू और उपचार में बेचारी रात भर नहीं सोई। आख़िर यह भी तो इन्सान ही है, जानवर तो है नहीं।

सास—मैं उसका इन्सानपना तीन मिनिट में उड़ा दूँगी। उधर तो बड़ी देर से बटोही में पानी उबाल खा रहा है। और यह इधर ऊँघ रही है। मेरा सारा ईंधन बेकार चला गया। जानती हो आजकल लकड़ी कितनी मँहगी आती है ? तू बड़ी दया दिखाने वाली आई है। ला इधर झाड़ू मैं अभी उसकी नींद, बींद उड़ा देती हूँ।

(प्रेमलता चौंककर उठ बैठती है और हड़बड़ाकर मूसल हाथ में लेकर कूटने लगती है)

सास—अजी राधा रानी जी यह बाजरे की कुटाई हो रही है क्या ?

सावित्री—(कुछ सोचती हुई सी ।) माँ देख तो दूध जलने की बास आ रही है। रसोई में जाकर दूध सँभालो, उफन जायगा तो बड़े भैया को क्या पिलाओगी ?

(सास बल खाती हुई वापस चली जाती है)

सावित्री—ला तू फटक मैं जल्दी से कूट देती हूँ। (कहकर बहू से मूसल ले लेती है ।)

सावित्री—चमेली, ओ चमेली ।

(नेपथ्य में से आवाज़ आती है-आती हूँ)

(चमेली का प्रवेश)

सावित्री—(कुटे हुए बाजरे की थाली हाथ में देती हुई) ले यह जाकर अम्मा को दे दे ।

चमेली—(थाली हाथ में लेती हुई) भाभी कंघी कहाँ रक्खी है ? मुझे बाल ओंछना है ?

प्रेमलता—मैंने तो कहीं नहीं रक्खी । विमलाजी से पूछिये ।

सावित्री—अरे तू खुद ही क्यों नहीं ढूँढ लेती। तुम्हारी हर एक चीज़ भाभी ही ढूँढ़ेगी क्या ?

(चमेली चली जाती है)

(सावित्री जाने को होती है)

प्रेमलता—आज तो आपकी छुट्टी है न सुबह ही सुबह कहाँ जा रही हैं ?

सावित्री—तुम्हें मालूम नहीं भाभी, आज कल महिला सम्मेलन की तैयारी हो रही है, इसलिये जा रही हूँ।

प्रेमलता—मैं आपसे एक बात कहना चाहती थी।

सावित्री—हाँ कहो न क्या बात है ?

प्रेमलता—अभी आप जाइये, आपको देर हो रही होगी। लौटने पर कह दूँगी।

सावित्री—नहीं, नहीं अभी कह दो। अभी सुनीता देवीजी तो आई भी नहीं होंगी। हमें सबसे पहले गाने तो उन्हीं से सीखने हैं।

प्रेमलता—आप रोज़ पाठशाला तो जाती ही हैं······

सावित्री—हाँ हाँ·····

प्रेमलता—मैं चाहती थी········पर पता नहीं आप पसन्द करें या नहीं।

सावित्री - नहीं, नहीं, तुम हिचकिचाती क्यों हो। मैं तुम्हारी बात को अवश्य पसन्द करूँगी।

प्रेमलता—मैं कई दिनों से यह कहना चाहती थी पर·····

सावित्री—फिर कह क्यों नही डालती हो।

प्रेमलता—कोई समय भी तो नहीं मिला।

सावित्री- अब तो मिल गया न, कहो।

प्रेमलता—अच्छा आप पहले जल्से के काम से निबट आइये। आनेपर कह दूँगी। तब आप भी फ़ुरसत में होंगी और मैं भी। अभी सासजी रसोई में इन्तजार कर रही होंगी।

सावित्री—नहीं, तुम्हारी बात सुने बिना मैं कहीं नहीं जाऊँगी। लो यहीं खड़ी हूँ।

प्रेमलता—अच्छा कहती हूँ बाबा। आप बुरा न मानें तो मैं भी आप के साथ पाठशाला चला करूँ। ✓

सावित्री—पाठशाला !

प्रेमलता—हाँ, यहाँ घर में दिन रात उदास रहती हूँ। मन सदा खेद खिन्न सा रहता है। न जाने कितने ही तूफ़ान उठते और मिटते रहते हैं। सोचा पाठशाला जाने से कुछ तो जी हल्का होगा ! वहाँ अच्छी अच्छी किताबें पढ़ूँगी। नई नई सहेलियों से मिलूँगी, अध्यापिकाजी की सीख सुनूँगी।

सावित्री—बात तो ठीक है; पर भाभी, अम्मा कैसे मानेंगी। वह तो हम लोगों के पढ़ने से ही चिढ़ी सी रहती हैं। यह तो पिता जी की महरबानो समझो जो मेरा अब तक पढ़ना लिखना नहीं छुड़वाया गया ।

प्रेमलता—हाँ अम्माजी ही की तो बात हैं। उन्हें आप किसी तरह समझालें तो·······

सावित्री—पिताजी इस बात को कैसा पसन्द करेंगे ?

प्रेमलता—मेरा ख्याल है कि उन्हें यह बात आसानी से समझाई जा सकती है; और वे मान भी जायेंगे।

सावित्री—पर ख़ास बात तो अम्माजी की है न।

प्रेमलता—हाँ उन्हीं का तो डर है।

(सावित्री कुछ सोचकर)

सावित्री—मेरे एक बात समझ में आती है।

प्रेमलता—वह क्या ?

सावित्री—मैं अम्माजी से कहूँगी–'अम्मा भाभी मशीन बहुत अच्छा निकालना जानती है। यहाँ तुम दोनों दिन भर में मुश्किल से एक आध कपड़ा सीं पाती हो।' तुम्हें बसन्त के पहले पहले काफ़ी कपड़े सीने हैं भाभी।

प्रेमलता—जी हाँ आपको जो देने होंगे।

सावित्री—कहूँगी–'भाभी को तुम मेरे साथ पाठशाला भेज दिया करो। वहाँ से वह ढेर के ढेर कपड़े निकाल लाया करेगी। कपड़े सीने के साथ, साथ रेशमी कब्जे सलूके आदि पर सल्मे, सितारे का काम भी निकाल लिया करेगी।' हमारे यहाँ नयी मास्टरनी जी को सल्मे सितारे का काम बहुत अच्छा आता है भाभी।

प्रेमलता—हाँ मैंने निर्मलाजी से सुना था।

सावित्री—और कहूँगी 'बहुत से कपड़ों पर कसीदा भी निकालना पड़ता है। वह भी वहाँ सिखाया जाता है।' हमारे यहाँ दो एक खत्रियों की लड़कियाँ कसीदे का काम बहुत अच्छा जानती है भाभी।

प्रेमलता—बिल्कुल ठीक है। सासजी यह बात कहते ही मान जायेंगी। आपकी सूझ बड़ी अच्छी है।

सावित्री—तो मैं आज ही अम्मा से बात करूँगी। अच्छा अब मैं जाती हूँ। (जाती है)

प्रेमलता--मैं बनी के लिये बहुत सुन्दर पोशाक तैयार करूँगी।

(पाठशाला जाने की खुशी में एक गाना गाती है।)

मैं कल से मदरसे जाऊँगी, सखियों से मेल बढ़ाऊँगी। ✓
हिन्दी, धरम हिसाब पढ़ूँगी, भूविद्या का मैं पाठ सुनूँगी ॥
बुनना सीना सूत कतूँगी, रंग विरंगे फूल बुनूँगी।
दुलहिन की ड्रेस सजाऊँगी ॥१॥
विद्या को पढ़के विदुषी बन जाऊँ, लेक्चर दे उपदेश सुनाऊँगी।
गाँव गाँव में मैं प्रीति बढ़ाऊँ; महिमा विद्या की बतलाऊँगी ॥
जिनवर को फूल चढ़ाऊँगी ॥२॥

सातवाँ दृश्य

स्थान—रास्ता।

(रास्ते में सूरजबाई, निहाल बाई और शान्ताकुमारी मिलती हैं। सूरजबाई और निहालबाई एक डिस्पेन्सरी से आ रही हैं। सूरजबाई के हाथ में एक दवा की शीशी है और निहालबाई पेट-दर्द से कराह रही है।)

शान्ताकुमारी—सूरजबाई नमस्ते।

सूरजबाई—म्हें तो थांका नमस्ते वमस्ते में कोन समझां। थे तो आजकल पढ़र जाए कांई अंगरेजी बोलवा लाग गया।

शान्ता—अजी मैंने अंग्रेजी कौनसी बोली। नमस्ते कहकर नमस्कार ही तो किया है। हाँ यह तो बताइये अभी आप कहाँ जाकर आरही हैं।

सूरज—अजी डाक्टरजी के जाकर आरी छूँ। आं जिठानीजी के रात सूँ पेट में दरद हो रह्यो छे दवाई लेर आ रही छूँ।

शान्ता—अजी साहब पेट कैसे दुखने लगा।

सूरज—अजी कांई बताऊँ। काल सारा घर का गुलाबबाड़ी गया छा। चूरमो दाल बाटी करयो छो। आंके मन्दागिनी तो पहली सूँ ही हो रही छै फेर वो चूरमो बाटी खा लियो, सो पच्यो को न।

निहाल—अजी चूरमों बाटी कांई म्हारो मूँड खायो छो कांई। भूख तो लागी को न मैं तो खाली सैल देखवा ने ही चली गई छी। झांको घणी से घणी खाई होवली तो पाँच तो बाटी खायी होली हर कोई चार लाडू दल का चूरमा का खाया होला, मिरच्याँ का टपोरया तो म्हांसे चल्या ही को न। दाल को आधो कचोल्यो तो खायो अर आधो भूँठो छोड़याई। (अर राम अर राम कराहती हुई)

शान्ता—अजी आइये मैं आपको पहुँचा आऊँ।

सूरज—अजी नहीं जी होल्या होल्या अबार मैं ही ले जाऊँ छूँ। थाने पाठशाला जावा ने देरी होती होली थे तो जाओ। जिठाणीं जी थे थोड़ी सी श्यावस ले ल्यो। अँड सी बैठ जाओ।

शान्ता—अच्छा नमस्ते (कहकर चली जाती हैं)

(सावित्री प्रेमलता, चमेली और विमला का स्कूल जाते हुए प्रवेश)

सूरज—अजी सावतरी बाई सुवांर ही सुवांर बहू ने लेर कोड़ चाल्या।

विमला—(बीच ही में) अजी हमारी भाभी हमारे साथ आज कल रोज पाठशाला में······

सावित्री—(बीच ही में रोक कर) *अजी नहीं पाठशाला में भाभी* को मास्टरनी जी से जरा बेल बूँटे निकालना सीखना है, इसीसे माँ ने भेजा है। लो आओ विमला, चमेली।

(कह-कर चारों चली जाती हैं)

सूरज—जिठाणी जी देख्या।

निहाल—अजी बींनणी जी कलजुग आगयो कलजुग।

सूरज—अब आ रूप चन्द्र जी की घर की राख उड़णीछ जो उड़र रहसी।

निहाल—अजी ये आज कल की छोरयां तो इयांई बिगड़ली।

सूरज—ये लक्खण बिगड़वा का ही छै, नहीं तो अब आ रूप-चन्द जी की बहू पढ़ लिखर कोड़े कमांबा ने जायली कांई।

निहाल—थे थोड़ा दिनां में देखजो। ल्यो चालो।

(प्रेमलता की सास का प्रवेश)

सास—अजी सूरज बाई कोड़े सूँ जार आया छो।

सूरज—अजी डाक्टरजी के जार आई छूँ आ जिठाणी जी के रात सूँ दरद हो रियो छै।

सास—अजी आजकल का मौसम अस्याही छै।

सूरज—अजी सावतरी बाई की माँ थे नाराज न हो तो थांन एक बात खां।

सास—अजी खो क्यों न कांई बात छी। मैं थांस भी नाराज हो बा लाग गई।

निहाल—झांको म्हांने तो बहू ने पाठशाला में जावो चोखो कोन लाग्यो।

सूरज—झांको आपणा घरां को अस्यो कायदो कोन छै।

निहाल—लोग तो न्यारा आंगल्या सू बताबा लाग जाय और बहू न्यारी पढ़ लिखर आपणां बस की कोन र ?

सास—अजी मैं तो बावा कोई कब्जा सलू का के मशीन का-

ड़वा न भेज दीनी छी नहीं म्हार पाठशाला भेजवा सूँ कांई काम।

निहाल—नहीं साब म्हांक तो पाठशाला भेजवा की बिल्कुल कोन जची। मशीन वशीन तो बाबा घरां ही घणी निकाल ले सी।

सूरज—म्हांको थे तो मशीन निकलबा ने भेजी और म्हें म्हांकी आंखांसूँ देखी बहू का हाथ में दो चार पोथ्यां भी छी।

सास—बाबा मैं तो पढ़वा तांई कोन खियो। अबार ल्यो आज बीनें आबाद्यो घरां।

सूरज—अजी तो थे तो समझो कोन। सीवंणा टोबणा को तो बहानो छै। मूल बात तो पढ़बा लिखबा की छै।

निहाल—भाई मैं पढ़र चिट्ठी लिखवो सीख जाऊँ। म्हांक तो सा जची ही कोन। ओ पाठशाला में जाबो ही झगड़ा की जड़ छै।

सास—थां लोगा के कोन जची तो मैं बीन कोन भेजसूँ।

सूरज—हाँ जी आपणा बड़ा बूढ़ा खता आया छै। घर सुहाती खाणी और गाँव सुहाती करणी

सास—बाबा मैं तो बार ल्यो बहू न आताँ ही खदयूँली और ई को जबाब और ल्यूँली कि हाथ में किताबां लेर क्यूँ जाय छी।

निहाल—ल्यो आओ जी आओ चालां। अजी थे मन्दिर जारिया छो कांई।

सास—हाँ जी आज थोड़ी देर होगई। नहीं तो जल्दी ही ऊठर जायाऊँ छूँ।

(एक तरफ़ सास और दूसरी तरफ़ देवरानी जिठाणी चली जाती हैं)

पटाक्षेप

आठवाँ दृश्य

स्थान—रूपचन्द जी का घर

(प्रेमलता रोग ग्रस्त सावित्री के बड़े भाई के लिए एक सिगड़ी पर दवा औटा रही है। उसके पास ही दवा छानने और तैयार करने के लिए जरूरी बरतन, शर्बत की शीशी, ग्लास आदि यथा स्थान रक्खे हैं। सावित्री उसके पास से कहीं बाहर जाने के लिए गुजरती है। प्रेमलता उसको बाहर जाते हुए देखकर खड़ी हो जाती है और उसको रोकते हुए कहती है।)

प्रेमलता—बाईजी ठहरिये, आप कहाँ जा रही हैं?

सावित्री—मैं किसी काम से सुनीता के घर जा रही हूँ। कहो कुछ काम है?

प्रेमलता—आपके भाई साहब को दवा पिलाकर चले जाइयेगा।

सावित्री—इसमें मेरी क्या जरूरत है भाभी? तुम्हीं पिला देना। (कह कर जाने को उद्यत होती है)

प्रेमलता—सुनिये तो!

सावित्री—(वापस मुड़कर) हाँ, कहो न?

प्रेमलता—आप ही पिला जाइये।

सावित्री—अभी तो दवा औटाने में देर लगेगी।

प्रेमलता—कोई देर नहीं, दवा अभी तैयार हो जाती है। उफ़ान पर उफ़ान आ रहे हैं।

सावित्री—फिर भी अभी जरा देर औटने में लगेगी। छानना है, शर्बत मिलाना है, ठण्डी होना है। हमेशा तुम्हीं तो पिलाती हो।

प्रेमलता—तो फिर एक काम कीजिये, चमेली बाईजी को कहते जाइयेगा।

सावित्री—भाभी! भैया को दवा पिलाने में आज तुम्हें इतनी हिचकिचाहट क्यों हो रही है।

प्रेमलता—जी नहीं, हिचकिचाहट की तो इसमें कोई बात नहीं।

सावित्री—तुम कोई नई बहू भी नहीं हो, जो भैया के सामने जाते शर्म लगे।

प्रेमलता—मुझे लाज शरम क्या लगेगी बाईजी! वह तो परमात्मा ने मुझ से पहले ही छीन ली।

सावित्री—भैया तुम्हारे ऊपर खीझते तो नहीं? बीमारी में आदमी का स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाया करता है।

प्रेमलता—नहीं बाईजी, खीजते तो मेरे ऊपर वे बिल्कुल नहीं।

सावित्री—तो फिर तुम्हीं पिला देना भाभी। दवा-दारू का काम कुछ बढ़ अवश्य जाता है, पर कौन रोज़ देनी पड़ेगी। एक दिन, दो दिन, ज्यादा से ज्यादा तीन दिन।

प्रेमलता—मैं कब चाहती हूँ कि आपके भैया को रोज दवा देनी पड़े। मैं भी तो यही चाहती हूँ कि आपके भैया को परमात्मा शरीर और मन दोनों से स्वस्थ करे।

सावित्री—शरीर और मन दोनों से स्वस्थ करे! (सावित्री सोच में पड़ जाती है और अपनी गर्दन नीचे किये चुपचाप खड़ी रहती है)

प्रेमलता—(कुछ ठहरकर) मेरा तो उनके सामने जाते ही दिल काँपने लगता है, बाईजी!

सावित्री—पर, भाभी तुमने यह क्या बात कही! क्या भैया का मन ख़राब है ?

प्रेमलता—बाईजी! जाने आजकल उनकी आदत ऐसी कैसी हो गई है, जो वे मुझे देखकर कुचेष्टा-सी करने लगते हैं।

सावित्री—भाभी तुम मेरे भैया पर दोष लगा रही हो ? हमारे घर में तो आज तक कोई ऐसा आदमी नहीं पैदा हुआ।

प्रेमलता—बाईजी! मैंने तो आपको अपना आदमी जान कर अपना हृदय सौंपा है। आप अपने मन में कुछ भी समझें।

सावित्री—तू हमारे घर पर कलंक लगाकर मुझे भी उसमें शरीक़ करना चाहती है।

प्रेमलता—(गिड़गड़ा कर) बाईजी!

सावित्री—भाभी! मेरे पास अगर चीमटा होता तो अभी तुम्हारी जीभ निकाल लेती। आख़िर है तो तू उसी बाप की बेटी, जिसने कई घरों की आबरू पर पानी फेरा है। कुल का असर कहीं जा सकता है क्या ?

प्रेमलता—बाईजी ! आप मेरे बाप और कुल तक क्यों जा रही हैं, मैं अपना कहा वापिस लेती हूँ । मैं आपके पाँव पकड़ कर कहती हूँ कि आप मेरी बात बिना कही मानिये ।

सावित्री—मेरे पाँव छूने से पहले तू पानी में डूब कर मर क्यों नहीं जाती ? कुलकलंकिनी ! अम्मा ने तो मुझे पहले ही कहा था—तू इसकी जितनी हमदर्दी करती है, उतनी ही यह सर पर चढ़ती जाती है । मैं अभी अम्मा से जाकर कहती हूँ ।

प्रेमलता—(गिड़गिड़ा कर) नहीं, नहीं ईश्वर के लिए आप मुझे माफ़ करें । मैं अब ऐसी ग़लती कभी नहीं करूँगी ।

सावित्री—अभी तो मैं जाती हूँ । सुनीता के घर से वापिस आने पर तुम्हारी खबर लूंगी ।

(प्रेमलता सन्नाटे में खड़ी रहती है और कुछ ठहरकर एक गायन गाती है)

गायन

विपदा आवे दूनी दूनी !

किसने किया फल भोगत कोई, बुरी दशा इस जग की ।
पल-पल जीना भार लगत है, लाज गई पुरखन की ॥१॥
जिसके दया दिल नाहिं समावे, बुरी भली करमन की ।
सुन सुन मोरे आह उठत है, कौन सुने निरबल की ॥२॥

(गाना समाप्त होने के बाद प्रेमलता चुपचाप एकटक दृष्टि से देखते हुए खड़ी है)

(नेपथ्य से 'बहू ! बहू !!' की आवाज़ आती है और सास की तीन-चार आवाज़ सुनने के बाद प्रेमलता चौंक कर दवा सँभालती है)

(सास का प्रवेश)

सास—अरी! दवा अभी तक नहीं औट चुकी क्या? (दवा की तरफ देखकर) अरे, यह तो सब जल चुकी।

(प्रेमलता भीगी बिल्ली की तरह चुपचाप खड़ी है)

सास—अरी जबाब नहीं देती गधी! (झिंझोड़ कर) बता यह दवा कैसे जली? जबाब देती है या नहीं? अब सुरेश को तुम्हारा सिर पिलाऊँ क्या? (झांई पीट कर) मेरे तो इस निगोड़ी के कारण नाक में दम आ गया। (प्रेमलता को दो चांटे मार कर, एक जोर का धक्का देती हुई) जा, अभी का अभी दूसरा काढ़ा चढ़ाकर तैयार कर।

(सास अन्दर चली जाती है)

(प्रेमलता दूसरा काढ़ा अन्दर से लाकर चढ़ा देती है और सिगड़ी के पास बैठ जाती है)

(दो मुसलमान स्त्रियों का प्रवेश)

हमीदा—लो! यह रूपचन्दजी का मकान आ गया।

जरीना—यही रूपचन्दजी का मकान है?

हमीदा—हाँ, यही है।

जरीना—क्योंरी, रूपचन्दजी के बेटे की बहू तुमको पहचानती भी है क्या?

हमीदा—अरी! जारी, तूने योंही जन्म गँवाया। रूपचन्दजी के बेटे की बहू मुझे पहचानती हो तो मौक़े-बे-मौक़े फंसा नहीं दे। हमारा काम बने भी और नहीं भी बने। बन जाय तो ठीक, नहीं बनने पर तो मेरा नाम लेकर मुझे फ़ौजदारी के हवाले कर देना।

जरीना—तो फिर यह तुम्हारे साथ चली कैसे जायगी?

हमीदा—अरे, तभी तो मैंने प्रेमलता के पीहर की मालन के से कपड़े पहने हैं। देखो अब तुम्हारे सामने ही उसको और उसकी सास को कैसा चकमा देती हूँ।

जरीना—अरी, यह तो बता। यह करीमखाँ इतनी लड़कियों को उड़ा-उड़ा कर उनका क्या करता है ?

हमीदा—अरी, यह तो उसकी रोजी है रोजी। इतनी लड़कियों को उड़ा-उड़ा कर घर में थोड़े ही रखता है।

जरीना—तो फिर क्या करता है ?

✓ हमीदा—पञ्जाब में मुसलमानों के हाथ बेच देता है।

जरीना—क्यों जी ! एक लड़की का क्या दाम बैठता होगा ?

हमीदा—अरी यह तो सौदा है सौदा। जैसा माल होता है वैसा ही बाजार में मोल लगता है।

जरीना—इस सौदे में तुझे क्या मिलेगा ?

हमीदा—अगर हमारा काम बन गया तो मुझे पूरे ५०) रु० मिलेंगे।

जरीना—पूरे पचास मिलेंगे ?

हमीदा—नहीं तो और क्या जरीना ! ऐसे कामों में जान हथेली पर रख कर काम करना पड़ता है।

जरीना—अगर तू चूक गई तो !

हमीदा—अरी जारी, मेरा भी नाम हमीदा है ! ऐसे छोटे-मोटे कामों में ही चूक जाऊँगी क्या ?

जरीना—क्यों तुमको इसके घर का और पीहर का हाल कैसे मालूम हुआ ?

हमीदा—इनके यहाँ जो मनिहारिन आती है, उससे इनके घरों का रत्ती-रत्ती हाल मालूम हो जाता है। अच्छा, अब आवाज देती हूँ।

जरीना—अरी, सुन तो सही, तू अभी इसको साथ ले जाकर जायगी कहाँ ?

• हमीदा—अब तुम देखती जाओ मैं क्या-क्या करती हूँ ? (मकान को देखकर) अरे वह सामने ही बैठी है।

जरीना—(उधर झाँकती हुई) कहाँ ?

हमीदा—चुप चुप, उधर हो जा।

(खंखार कर)

अजी ओ—पसारयाँ वाला बाईजी !

प्रेमलता—(खड़ी होकर) अजी कौन है ?

हमीदा—अजी आ तो मैं छूँ थाँ की मालण । थे मने कोन पिछाण्या कांई । अजी मैं नाराणजी माली का बेटाँ की बहू छूँ । अबार गया साँवा पर तो म्हारो व्याव हुओ छोही । अजी थे आं दिनां में थांक पीर तो आया कोन मन कियां पिछाणता ?

प्रेमलता—बोलो कैसे आये हो ?

हमीदा—अजी बाईजी ! थां का भाई के गाढ़ी तकलीफ़ हो री छै। मने बुलावा भेजी छे। थांकी भौजाई म्हारी सासू ने और बुलाई और बोल्या बाईजी न अबार ही बुलाइ ल्यावो बा दवादारू का काम में भी बहुत होशियार है। म्हारी सासू को तो माथो दूख छै सो मने ही भेजी छै।

प्रेमलता—अजी, तो अभी का अभी ऐसा क्या होगया ?

हमीदा—अजी जाणें बार ही बार कांई हो गयो । चक्कर तो न्यारो आ गयो और उल्टी न्यारी हो रही छै, और अब बेसुध पड़्या छै ।

प्रेमलता—अच्छा तो लो मैं देखो सासजी को जाकर कहती हूँ, वे भेजें तो अभी चलती हूँ। (घबड़ाती हुई जाने को होती है)

हमीदा—हाँ जी ! इस्या बखत माल ही कोन भेजेला तो कद भेजेला। (प्रेमलता चली जाती है)

हमीदा—(ज़रीना की ओर झुक कर) देखो मैंने कैसा चकमा दिया है ?

ज़रीना—तू वाक़ई पक्की चालाक औरत है, हमीदा !

हमीदा—ज़रीना ! देख तुम हम दोनों के पीछे थोड़ी दूरी पर चलती रहना और मैं जहाँ जैसा इशारा करूँ उसके लिए फ़ौरन तैयार रहना।

(सावित्री का प्रवेश)

हमीदा—अरे यह कौन आई ? तू छुप जा ज़रीना ! इधर।

सावित्री—(एक तरफ़ कुछ टहलती हुई अपने आप बोलती है) "मैंने तो आपको अपना आदमी समझ कर मेरा हृदय सौंपा है।" क्या सचमुच मेरे भाई का मन ख़राब है ? बेचारी भाभी को मैंने बिना सोचे समझे कितना फटकार दिया। लेकिन अब मैं क्या करूँ ? एक तरफ़ मेरे भाई की इज्ज़त पर अविश्वास करना पड़ता है और एक तरफ़ बेचारी दुखियारी भाभी पर रहम आता है। मैं भाभी से अभी जाकर सब हाल खुलासा पूछती हूँ।

(प्रेमलता का प्रवेश)

प्रेमलता—नारायणजी की बेटा की बहू मेरे सासजी आ रहे हैं। मैंने उनको कह तो दिया है। बाक़ी आप उनको और समझा देना जो उनके दिल को पूरी तसल्ली हो जाय और वे मुझे भेजने में आना-कानी न करें।

हमीदा—अजी थे सोच मत करो, मैं थां का सासूजी ने घणा ही समझा ल्यूंली।

(इन बातों को सावित्री एक तरफ़ खड़ी हुई ध्यान से सुन लेती है)

सास—देखो, नाराणजी के बेटा की बहू ! बहू ने चोखी तराँसू पीर ले जाजो, रात को बखत हो गयो छै ।

सावित्री—(कुछ आगे बढ़ कर) माँ क्या बात है ? भाभी को रात को कहाँ भेज रही हो ?

सास—अरे सावित्री ! आज तू इतनी जल्दी कैसे आ गई ?

सावित्री—मैं रास्ते ही से लौट आई माँ ! मेरा जी मिचलाने लगा और घबराहट सी पैदा होगई ।

सास—तुम्हारी तबियत तो कल से ख़राब है । दिन भर इधर से उधर घूमती रहती है, जा कर सो रह ! बहू का भाई बीमार है । यह नारायणजी के बेटे की बहू बुलाने आई है । इसलिये पीहर जा रही है ।

सावित्री—रात को अकेली जायगी क्या ! नीचे से नन्दू ब्राह्मण को साथ भेज दे न !

सास :—जाने वह नौकरी से आया भी होगा या नहीं । क्यों बहू, किसी को साथ भेजूँ क्या ?

हमीदा :—अजी सा थे भी आछ्यो वहम कर्यो । म्हारे साथ होंता अशी काँई डर की बात छै ।

प्रेमलता :—हो ऐसी डर की तो क्या बात है । अभी तो आठ भी नहीं बजे हैं ।

सास :—अच्छा तो जाओ ! (कह कर सास प्रेमलता की साड़ी हमीदा को देदेती है ।)

प्रेमलता :—यह दवा आधी तो औट गई है ।

सास—अरी तू दवा की क्या फिकर करती है, मैं औटा दूंगी ।

प्रेमलता (सास के पाँव लग कर) अच्छा मैं जाती हूँ ।

प्रेमलता और हमीदा चली जाती हैं)

पटाक्षेप ।

नवाँ दृश्य

स्थान—रास्ता

(प्रेमलता हमीदा और उनके पीछे पीछे जरीना रास्ते में चलरही हैं।)

प्रेमलता—अरे यह कौनसा रास्ता है ? यह तो मेरे घर का रास्ता नहीं। इधर तो मैं कभी नहीं आई ?

हमीदा—बाईजी ! ई गली में सूं थाँका पीर को रस्तो और भी जल्दी आजाव छै।

प्रेमलता—लेकिन इधर तो मुसलमानों ही मुसलमानों की बस्ती मालूम होती है।

हमीदा—अजी, दो पग और उठाओ बार वाम्हण बाण्यां को म्होलो भी आजाय छै।

प्रेमलता—नहीं, मैं इधर नहीं जाऊँगी। पता नहीं यह कैसा रास्ता है ?

हमीदा—अजी ई गली में सूं निकल्या पाछ बाजार आजायलो।

(एक स्त्री का प्रवेश)

प्रेमलता—(हड़बड़ा कर) अजी यह रास्ता किधर जायगा ?

स्त्री—यह रास्ता सीधा मोचियों के मुहल्ले में जायगा।

(कह कर चली जाती है)

प्रेमलता—लो, तुम तो कह रही थीं कि इधर बाजार निकलेगा और वह कह रही है मोचियों का मुहल्ला आवेगा। बस

तुम मुझे वापस ले चलो, मैं इधर एक पग भी आगे नहीं बढ़ा सकती।

हमीदा—(ठहाका मार कर हँसती हुई) बड़ी भोली है प्रेमलता ! तुमने नहीं पहचाना तुम किसके साथ बात कर रही हो।

प्रेमलता—(घबड़ा कर) क्यों तुम कौन हो और तुम्हारी यह बोली कैसे बदल गई ? तुम नारायणजी माली के बेटे की बहू नहीं हो।

हमीदा—नहीं, बिल्कुल नहीं।

प्रेमलता—तुमने मेरे साथ धोखा किया।

हमीदा—(हाथ पकड़ कर) यह तो हमारी रोजी है रोजी। आज तुमको फँसाया है, कल और किसी चिड़िया को फँसायेंगे।

प्रेमलता—(हाथ छुड़ाने की कोशिश करती हुई) बस छोड़ दो, जाने दो मुझे—शैतान कहीं की !

हमीदा—क्यों अब तुम हमारे चंगुल से बच कर जा सकती हो ? अरी, यह तो हमारा मोहल्ला है। यदि तुम यहाँ से भाग भी जाओ तो हमें वो जाल-साजी याद हैं, जो तुमको तुम्हारे घर से वापिस बुलालें।

प्रेमलता—(हाथ छुड़ाने की कोशिश करती हुई) बस छोड़ दो मुझे !

हमीदा—प्रेमलता ! सीधे सीधे मेरे साथ चलो, वरना···

प्रेमलता—वरना क्या ?

हमीदा—वरना मैं तुमको यहीं फँसाती हूँ। ज़रीना !

(ज़रीना आती है)

प्रेमलता—ईश्वर के लिए तुम मुझे छोड़ दो। मेरा भाई बीमार है।

हमीदा—प्रेमलता! तुम्हारा भाई बिल्कुल मजे में है। उसकी तुम फिक्र मत करो, यह तो हमारी एक चाल थी।

प्रेमलता—अच्छा, मैं तुम्हारे साथ चलती हूँ, पर मेरा हाथ तो छोड़ दो। लेकिन, तुम मुझे लेकर जाओगी कहाँ?

हमीदा—(हाथ छोड़ देती है) कोई ज्यादा दूर नहीं।

प्रेमलता—अच्छा, मैं तुम्हारे साथ चलती हूँ, मुझे जरा सुस्ता लेने दो।

हमीदा—हाँ, बहुत शौक के साथ।

प्रेमलता—(रूमाल से पसीने पोंछती हुई कुछ सोच रही है और मुख उधर करके अँगूठी अँगुली में से निकाल कर जेब में रख लेती है) अच्छा, अब चलो। किधर चलूं?

हमीदा—नाक के सीध चली चलो।

प्रेमलता—(अपने दाँये हाथ से माथा खुजलाती हुई अकस्मात्) ओ! गजब हो गया।

हमीदा—क्यों, क्या हुआ?

प्रेमलता—मेरी अँगूठी गिर पड़ी!

हमीदा—(प्रेमलता का हाथ अपने हाथ में लेकर) देखें, तुम्हारी अँगूठी घर से चलते समय तो मैंने भी देखी थी। किन्तु रास्ते में मुझे याद नहीं।

प्रेमलता—इसी पिछले चौराहे तक तो मैं पहने हुए थी। अँगूठी उसके बाद गिरी है।

हमीदा—अच्छा, तुम यहीं रुको, मैं अभी जाकर तलाश करती हूँ। जरीना! (इशारे से कुछ समझाती हुई) तुम प्रेमलता

के पास ही रहो। देखना कहीं यह डर न जाय (कह कर चली जाती है)

प्रेमलता— स्वगत) चलो एक से तो पीछा छूटा। अब दूसरी से कैसे पिंड छुड़ाऊँ।

प्रेमलता—(जेब में हाथ डाल कर) अरी, यह लो, अँगूठी तो मेरी जेब में ही पड़ी है। जरीना जा तू उसको बुलाला, कहना अँगूठी मिल गई। फ़िजूल उसे हैरानी उठानी पड़ेगी।

(ज़रीना दौड़ कर जाती है)

(एक तरफ प्रेमलता जाने को उद्यत होती है)

(दूसरी स्त्री का प्रवेश)

दूसरी स्त्री—कौन प्रेमलता बाई ?

प्रेमलता—(चौंक कर स्वगत) कौन गंगा व्यासन ?

दूसरी स्त्री—प्रेमलता बाई, आप इतनी रात गये कहाँ ?

प्रेमलता—व्यासन माँ ! इधर (कुछ हिचकती हुई) पीहर जा रही थी, रास्ता भूल गई। (जाने को होती है)

गंगा—ठहरो तो सही बाईजी ! आपके साथ पहुँचाने वाला कोई नहीं है क्या ?

प्रेमलता—पहुँचाने वाली आई तो थी। लेकिन वह रास्ते में रह गई। (जाने को होती है)

गंगा—बाईजी ! ठहरिये तो मैं पहुँचा आऊँ।

प्रेमलता—मेरे पीहर का रास्ता अब किधर से निकलेगा ?

गंगा—इधर से जाने पर बाजार आ जायगा, फिर आप सड़क-सड़क सीधे चले जाइये।

प्रेमलता—तो कोई डर नहीं है, मैं अकेली चली जाऊँगी। तुम अभी कहाँ से आ रही हो ?

गंगा—मैं शान्तिनाथ स्वामी के मन्दिर को बन्द करके आ रही हूँ। अब घर जा रही हूँ।

प्रेमलता—बहुत अच्छा। (चली जाती है)

(हमीदा और ज़रीना का प्रवेश)

दोनों—अरे! वह तो नहीं है!

हमीदा—(गंगा से) तुमने इधर एक औरत को जाते हुए देखा?

गंगा—कौनसी औरत ?

हमीदा—अभी अभी गई है। कोई नीली सी साढ़ी पहने थी और लाल चद्दर ओढ़े थी।

गंगा—कौन, प्रेमलता बाई ?

हमीदा—हाँ, प्रेमलता बाई। तुम उसे कैसे जानती हो ?

गंगा—मैं उनके जात की व्यासन हूँ। उसको क्या, उसके जात वालों को सब को जानती हूँ। मुझसे उनकी जात का कोई मर्द-औरत छिपा नहीं है।

हमीदा—(स्वगत) बाईजी भाग कर जायगी कहाँ ? मैं अभी उसको बदनाम करती हूँ। देखें, फिर इसको इसकी जात वाले अपनी जात में कैसे रखते हैं ? आखिर अपनी बदनामी कराके भी तो हमारे पास आयेगी।

गंगा—लेकिन तुम उसको क्यों पूछ रही हो ?

हमीदा—मुझे उससे काम है।

गंगा—तुम्हें उससे क्या काम हो सकता था ?

हमीदा—(अपने हाथ में रक्खी साड़ी दिखा कर) यह देखो यह साड़ी उसे देना है।

गंगा—अरे! यह साड़ी तो उसी की है। मैंने कई बार उसको पहने देखा है। लेकिन यह तुम्हारे पास कैसे आई?

हमीदा—करीमखाँ ने भेजी है।

गंगा—करीमखाँ कौन और उसके पास यह साड़ी कैसे पहुँची?

हमीदा—तुम करीमखाँ को नहीं जानतीं? वह तो बड़ा मशहूर आदमी है। प्रेमलता अभी उसी के मकान से निकल कर आई है। जाते समय अपनी साड़ी छोड़ गई। पीछे से करीमखाँ ने हमें दौड़ाया है।

गंगा—तुम उसकी कौन हो?

हमीदा—हम उसकी नौकरानियाँ हैं।

गंगा—[स्वगत] राम! राम! यह मैं क्या सुन रही हूँ! लेकिन प्रेमलता को करीमखाँ के घर आने से क्या काम था?

हमीदा—यह मुझ से क्या पूछती हो। पूछो करीमखाँ से और तुम्हारी प्रेमलता से। वह तो यहाँ महीने में १५ बार आती है।

गंगा—(कुछ सोच कर) अगर यह साड़ी ही उसको देना हो तो लाओ मुझे दे दो। सुबह उसके घर में पहुँचा दूंगी।

हमीदा—हाँ, अगर पहुँचा दो तो बड़ी महरबानी होगी।

(साड़ी देती है)

गंगा—(हाय रे कलजुग कहकर चली जाती है।)

हमीदा—देखा, मैंने भी क्या चाल चली है? तू समझी है या नहीं जरीना!

जरीना—क्या?

हमीदा—अरे ! यह उनकी जात की ब्यासन है। सबेरा होने के पहले पहले यह व्यासन इनकी जात बिरादरी वालों में यह ख़बर बड़ी दिलचस्पी के साथ फैला देगी कि प्रेमलता बाई रात को करीमख़ाँ के घर छिप छिप कर जाया करती है।

ज़रीना—गायत्री ! तू वाकई में पक्की चालाक औरत है।

हमीदा—लो आओ, करीमख़ाँ को यह ख़ुशख़बरी सुनावें।

(दोनों चली जाती हैं)

दसवाँ-दृश्य

स्थान— रूपचन्द्‌जी के घर का बाहरी भाग

[पर्दा उठता है और सावित्री किताबों का बण्डल लिए और उसकी माँ मन्दिर जाकर आती हुई घर के दरवाज़े पर मिलती हैं]

माँ—सावित्री ! ले, तू बार-बार कहती थी बेचारी भाभी, बेचारी भाभी।

सावित्री—क्यों, क्या हुआ माँ !

माँ—क्या हुआ माँ ! तूने ही उसको सर चढ़ाया है।

सावित्री—पर कोई बात भी हुई होगी।

माँ—अरी और क्या बात होती थी। अपने घर की सारी इज्ज़त-आबरू को तो तुम्हारी बेचारी भाभी ने धूलमें मिला दिया।

सावित्री—इज्ज़त-आबरू को धूल में मिला दिया !

माँ—हाँ, हाँ, हमारे घर को तो ऐसा बट्टा लगाया है कि मैं तो अब पाँच लुगाइयों में मुँह दिखाने लायक़ भी नहीं रही।

सावित्री—भाभी ने ऐसा कौनसा अपराध कर लिया, माँ।

माँ—मुझसे सुनोगी अभी।

सावित्री—हाँ, हाँ तो सुनाओ न। मैं भी तो इतनी देर से यही कह रही हूँ, आखिर मामला क्या है ?

माँ—मुझसे क्या सुनती है। घर से बाहर जाकर जगत से सुन, जो तुम्हारी अक्ल ठिकाने आ जाय।

सावित्री—लेकिन माँ! कहो तो सही, आखिर भाभी ने कर क्या लिया ? रात को आठ बजे तक तो यहाँ दवा बना रही थी। फिर पीहर चली गई।

माँ—बस, यह पीहर जाना क्या था हमारे सिर बदनामी का ठीकरा फूटना था। अगर उसको गढ़े में गिरना ही था तो और किसी शहर में जाकर गिरी होती। यहाँ हमारे धुले-धुलाये दूध से घर पर उसने क्यों कालिख पोती ?

सावित्री—माँ! यह मैं क्या सुन रही हूँ ? तुम धीरज के साथ सब बातें समझाओ।

माँ—सावित्री! हमारा घर ही कलंकित हुआ जा रहा है, तो मैं अब कहाँ से धीरज रक्खूँ। तुम्हारी भाभी की मुझे क्या चिन्ता है, वह चाहे जिस जगह डूबे या मरे। पर मैं तो अपने घर की फिक्र कर रही हूँ। मेरी भरी पूरी गृहस्थी है। तुम तीनों बहिनों का विवाह करना है। सुरेश भी अभी कौनसा बड़ा है। उसके लिए भी तुम्हारे पिताजी रात दिन कोशिश किया करते हैं। खैर बाबा, उसको जाने दो लेकिन तुम्हारी भाभी की इन करतूतों से तुम दोनों बहिनों को अच्छे ठिकाने लगाना ही मुश्किल हो जायगा। और तुम्हारा भी अभी कौनसा ब्याह होगया है। अभी

सगाई ही तो हुई है। तुम्हारे सपुराल वालों के कानों में जाकर ये बातें पड़ेंगी तो जाने उनका विचार भी क्या से क्या हो जाय। बेटी ! यह विवाह सगाइयों के मामले ऐसे ही हैं। इनके लिये ही हमें हमारे घर की इज्जत को बटोर कर बड़ी हिफ़ाजत के साथ रखना पड़ता है।

सावित्री—तो रात को भाभी पीहर नहीं गई क्या ?

माँ—ऐसा सुनने में आया कि पीहर जाने के पहले वह किसी मुसलमान के घर ठहर गई।

सावित्री—(आश्चर्य से) किसी मुसलमान के घर ठहर गई !

माँ—हाँ, गंगा व्यासन अपनी आँखों देखी घटना सारे शहर में सुना रही है।

सावित्री—लेकिन इसका सबूत क्या ? गंगा व्यासन भी झूठ बोल सकती है।

माँ—अरे उसने अपनी धोती जो साथ ले गई थी उस मुसलमान के घर में छोड़ दी थी, वह गंगा व्यासन ने उसकी विमाता को ले जाकर दिया है। यह समाचार उसकी बड़ी भौजाई ने ख़ुद मुझसे मन्दिर में कहा है।

सावित्री—लेकिन इसके साथ नारायणजी के बेटे की बहू जो थी।

माँ—अरे, बस वही तो फ़िसाद की जड़ है। वह नारायणजी के बेटे की बहू नहीं थी। वह तो तुम्हारी भाभी की मिली हुई और ही कोई औरत थी।

सावित्री—तो उसके भाई की बीमारी की बातचीत बनावटी ही थी।

माँ—भाई की बीमारी कौनसी ? बाबा, उसका तो माथा भी नहीं दूखा। अभी मैंने देखा वह बेचारा नीची नाड़ किये मन्दिर के नीचे से जा रहा था।

सावित्री—माँ! तुम भी नारायणजी के बेटे की बहू को पहचानती नहीं थीं।

माँ—बाबा, मुझे उसको पहचानने से क्या वास्ता। आज तक भी हमारे घर में नारायणजी के बेटे की बहू बुलाने नहीं आई। मुझे तो खुद ही बहू ने आकर रोते रोते कहा था कि सास जी! मेरा भाई बीमार है। नारायणजी के बेटे की बहू बुलाने आई है।

सावित्री—[कुछ सोचती हुई] मैं भी रात को जब सुनीता के घर जाते हुए बीच ही से लौट कर आई थी तो वह इस तरह बात कर रही थी जैसे इससे वह बहुत कुछ हिली मिली हो। उस वक्त तो मुझे कोई वहम होता ही क्यों ?

माँ—तुमने कुछ सुना था! क्या बात की थी उन्होंने।

सावित्री—भाभी कह रही थी, देखो तुम मेरे सासजी को अच्छी तरह से समझा कर कह देना ताकि उनको पूरी तसल्ली हो जाय और वे मुझे भेजने में आना-कानी न करें।

माँ—लो इससे और क्या झलकता है। यही न, कि वह मुझे भी धोखा देने जा रही थी।

सावित्री—हाँ, इससे तो ऐसा हो मालूम होता है।

माँ—यही क्यों ? तुमने इसके साथ नन्दू को भेजने के लिये नहीं कहा था ?

माँ—फिर उसने क्या जवाब दिया ?

सावित्री—उसने कहा अभी तो आठ ही बजे हैं। नन्दू को भेजने की ऐसी क्या जरूरत है ?

माँ—फिर क्या ? इन सब बातों से साफ़ मालूम होता है कि ....

सावित्री—पर मां ! भाभी से रूबरू बात करने पर झूठ सच का पता लगेगा। तू अभी भाभी को बुलाने भेज दे। मैं भी इतनी देर में पाठशाला जाकर आती हूँ।

(सावित्री पाठशाला की ओर और माँ घर की ओर चली जाती हैं)

ग्यारहवाँ दृश्य

स्थान—सुनीता का कमरा।

(सुनीता एक कुर्सी पर बैठी है। उसके सामने एक टेबिल है। उस पर टेबिल-पोश और इधर-उधर दो गुलदस्ते रक्खे हैं। एक तरफ़ एक अलमारी और चारों कोनों में चार तरह के फूलों के गमले रक्खे हैं। एक ओर एक श्रृङ्गार-टेबिल है, जिस पर एक बड़ा शीशा लगा हुआ है और तेल, कंघा, हिंगुली की शीशी आदि श्रृङ्गार का सामान यथा स्थान सजा हुआ है। सुनीता के हाथ में एक पेन है और वह कभी उसको माथे से लगाकर कुछ सोचने लग जाती है और कभी टेबिल पर पड़े हुए पैड में कुछ लिखने लग जाती है और साथ ही मन ही मन गुनगुना भी रही है)

सुनीता—(आवाज़ लगाती है) लीला ! लीला !

लीला—आती हूँ। [नेपथ्य से]

(लीला का प्रवेश)

लीला—क्या है, जीजी ?

सुनीता—जा, ज़रा मेरा बाजा उठा ला।

लीला—अभी तो तू लिख-पढ़ रही है। पढ़ेगी या बाजा बजावेगी ?

सुनीता—तू जान। मैं एक गाना बना रही हूँ और साथ ही उसकी धुन सोच रही हूँ। उसको बजा कर देखूँगी, देखें वह बाजे में ठीक बैठता है या नहीं।

लीला—अच्छा यह बात है, आप गाना निकाल रही हैं। जीजी! कौनसा गाना है ? मुझे भी तो बता!

सुनीता—लीला! जा, जल्दी से ले आ। बड़ी मुश्किल से धुन याद आई है, फिर दिमाग़ से निकल जायगी।

लीला—अच्छा, जाती हूँ बाबा, जाती हूँ।

सुनीता—देख तो वह लाल पर्दे वाला बाजा लाना।

लीला—अच्छा (कह कर चली जाती है)

(लीला का हारमोनियम के साथ प्रवेश)

लीला—लो जीजी! यह बाजा टेबिल पर रख दूँ।

सुनीता—रख दे। (लीला बाजा टेबिल पर रख देती है)

(सुनीता बाजा खोल कर बजाने लगती है)

लीला—अच्छा, मैं जाऊँ जीजी!

सुनीता—तू भी सुन जा, बड़ी अच्छी तर्ज़ है।

लीला—मुझे लिखाई का काम करना है।

सुनीता—अच्छा जा।

(सुनीता गाना गाती है)

प्रभु बिन शरण कौन इस जग में ।

(इसको दो-तीन बार बजाती है और इतने में लीला उतावली के साथ आ जाती है)

लीला—जीजी ! प्रभा जीजी आई है । बड़ी घबराई सीं है । तुम्हें पूछ रही है ।

सुनीता—क्यों, क्या हुआ ? घबड़ा क्यों रही है ? उसे यहीं बुला ला । (सुनीता बाजा बन्द कर प्रभा के आने की बाट देख रही है)

(लीला के साथ प्रभा का प्रवेश)

सुनीता—प्रभा, क्या है ? (खड़ी होकर) इतनी घबड़ाई क्यों हो ? लीला ! एक पंखा । (लीला पंखा लेने जाती है)

प्रभा—(सुनीता के हाथ में एक लिफाफा देकर) लो इसे पढ़ो ।

(सुनीता पत्र खोल कर पढ़ती है)

ता० ४–१०–४२

प्रिय बहिन प्रभा !

आखिरी नमस्कार ।

आज मेरी ऐसी अभागिन के कारण मेरे ससुराल वालों और पीहर वालों को जो शर्मिन्दगी और लानत उठानी पड़ रही है, यह तुम से छिपी नहीं है । मैं स्वयं समाज द्वारा पद-दलित होकर दूसरों के सुख, शान्ति और इज्जत के लिये क्यों काँटा बनूँ ! जब तक मैं मौजूद रहूँगी, मेरे कुटुम्बियों को न चाहते हुए भी यह सब सहना पड़ेगा । यही सोच कर मैं आज तुमसे सदा के लिये बिदा हो रही हूँ । क्या करूँगी, कहाँ जाऊँगी, किधर जाऊँगी,

मरूँगी या जीवित रहूँगी—यह कुछ नहीं कहा जा सकता । पर मुझे ढूँढ़ कर लाने के तुम्हारे सब उपाय व्यर्थ साबित होंगे ।

तुम्हारी—

प्रेम

(सुनीता पत्र पढ़ कर सोच में पड़ जाती है)

प्रभा - पढ़ लिया !

सुनीता—बैठो प्रभा, तसल्ली के साथ बात करो । यों इतनी घबड़ा क्यों रही हो ?

प्रभा—सुनीता, अब मैं तसल्ली किस तरह रक्खूँ । न जाने बेचारी प्रेमलता का क्या हुआ होगा ? वह किसी नदी में डूबी है या समुद्र के गर्भ में समा गई है । पहाड़ से गिर पड़ी है या रेल-गाड़ी के नीचे आकर चकनाचूर होगई है । (लीला पंखा लाकर देती है और वह उसको लेकर फेंक देती है) अग्नि की ज्वाला में जल कर भस्म होगई है या किसी भयंकर बन में शेर, चीता की शिकार हो चुकी है । भूख से व्याकुल हो रही है या प्यास से तड़प रही है ।

सुनीता—प्रभा, धीरज से बात करो । इतनी उतावली न हो ।

प्रभा—सुनीता ! मेरी आँखों के आगे प्रेमलता की महान् विपदाओं की छाया दिखाई दे रही है । मुझे ऐसा लगता है जैसे वह एक पहाड़ की चट्टान से गिर पड़ी है और उसकी तलहटी में उसकी हड्डियां बिखर कर जानवरों के खाने की बाट देख रही हैं । कभी ख़याल आता है—वह आवेश में आकर किसी बड़ी नदी में कूद पड़ी है और डुबकियाँ ले रही है और अपनी जान बचाने के लिये किसी को बुलाने का सकेत कर रही है, पर उस मौत की

दुष्टके जाल में धोखे से आ जाती है,उस समय समाज सिंहकी भांति गरजने लगता है। अपने हथियारों के धार लगाने लगता है। उस समय समाज अपनी भृकुटियाँ चढ़ाता है, आंखें लाल करता है, दहाड़ता है, फुँकारता है; किन्तु किसके सामने ! एक असहाय, दीन, निर्बल, बेजान, बेज़ुबान और निरपराध बाल-विधवा के सामने, तुम्हारा कायर समाज, तुम्हारा ढोंगी समाज, तुम्हारा निठुर समाज, तुम्हारा निर्लज्ज समाज ! समाज के सामने हज़ारों बाल विधवायें भूख और प्यास से तड़प-तड़प कर अपने प्राण दे रही हैं। लाखों विधवायें परिवार की कठोर यन्त्रणाओं से पीड़ित हो रही हैं। हमारे और तुम्हारे ही घरों में गधे और बैल की तरह वे बोझा ढोती हैं। घानी के बैल की तरह चक्की पीसती हैं ! तांगे के घोड़े की तरह दिन रात धंधे में पिली रहती हैं। सास-जिठानियों की झिड़कियाँ सुनती हैं। आस-पास वालों के बोल सुनती हैं। चाबुक की मार सहती हैं ! उनको मुट्ठी भर अन्न का सुख नहीं। सर्दी से बचने को कपड़ों का सुख नहीं। ठंडी सांस लेने को शुद्ध हवा का सुख नहीं। अपने शरीर का सुख नहीं। ससुराल का सुख नहीं। पीहर का सुख नहीं। वे सदा निरुत्साह, निरानन्द, नीरस, निश्चेष्ट जीवन व्यतीत करती हुई रोग, शोक, दुःख, दारिद्य और विपदाओं का मूर्तिमान स्वरूप बन कर समाज की आँखों के सामने खड़ी हैं; इसका समाज के पास कोई इलाज नहीं। लानत है तुम्हारे समाज पर और उसके फ़ैसलों पर !

सुनीता—प्रभा, तुम इतनी बे काबू क्यों हो रही हो ? मैं कब कहती हूँ कि समाज और पंचायतियों का रुख न्याय और जाति-हित के अनुकूल है; हमारा सम्मेलन तो ऐसी पंचायतियों का सदा से विरोध करता आ रहा है। किन्तु प्रेमलता के मामले में तो

हमारी तरफ़ भी तो एक दल जोर बाँधकर खड़ा हुआ था और साथ में हमारा महिला सम्मेलन भी तो प्रेमलता के पक्ष में काफ़ी यत्न कर रहा था।

प्रभा—ऐसी पंचायतियों में सुनीता, नये दल वालों और महिला-सम्मेलन ऐसे संगठनों की एक नहीं चलती। पंच लोग अपनी अपनी ढपली बजाकर न्याय और सत्य का निर्दयता के साथ गला घोंटते देखे जाते हैं। उस दिन सोमाबाई का कैसा फैसला किया। उसके नालायक जेठ को तो कुछ भी सजा नहीं जिसने अपराध और अत्याचार में मुख्य भाग लिया और बेचारी उस बेक़ुसूर सोमाबाई को दस वर्ष के लिये जाति से वहिष्कृत कर दिया।

सुनीता—ख़ैर प्रभा, जाने दो इन बातों को। इस समय हमारे सामने तो मुख्य सवाल प्रेमलता के ढूँढने का है।

प्रभा—सुनीता, तुम्हारा ख्याल क्या दौड़ता है? प्रेमलता जिन्दा है या किसी नदी तालाब में गिरकर मर गई।

सुनीता—उसके पत्र से तो ऐसी कोई बात नहीं झलकती कि वह कहीं जाकर डूब ही गई हो। मेरा अपना ख्याल तो कहता है कि वह अभी जयपुर शहर के बाहर भी नहीं गई है और अगर कहीं गई हो तो कहीं इधर उधर आस पास ही गई हो।

प्रभा—लेकिन मेरा दिल तो सुनीता जाने क्यों जब से यह पत्र मिला है मशीन की तरह धड़क रहा है।

सुनीता—असल में मोहब्बत में ऐसा ही होता है, प्रभा। हम अबभी उसको ढूँढकर लाने की कोशिश करेंगी। प्रेमलता कोई

इतनी होशियार और चालाक नहीं है जो एक ही दिन में जयपुर से सैकड़ों कोस दूर चली गई हो।

प्रभा—सुनीता, तुम बड़ी अच्छी हो। बताओ तो अब मैं क्या करूँ ?

सुनीता—मेरा तो ख्याल है, हम लोग पहले जयपुर शहर के बाहर बड़े-बड़े जल स्थानों को तलाश करायें। दूसरे बड़ी-बड़ी धर्मशालायें और कई एक खंडहर पुराने स्थानों की तलाशी लें।

प्रभा—स्टेशन पर हर एक रेलगाड़ी पर चौकसी रखने की भी खास जरूरत है !

सुनीता—हाँ स्टेशन पर मैं हमारे नौकर को भेजती हूँ। वह चौबीसों घंटे लगातार तीन दिन तक वहीं रहेगा और साथ ही पड़ोस के सब जंकशन स्टेशनों पर भी तार कराये देती हूँ। यदि वह किसी पहली गाड़ी से भी चली गई होगी तो पता लग जायगा।

प्रभा—मैं भी घर जाकर अपना काम शुरू करती हूँ। तुम भी अपना काम शुरू करो अच्छा। अब चलती हूँ।

सुनीता—देखो प्रभा, घर से निकलते समय प्रेमलता अपनी पोशाक बदल कर निकली होगी सो इस बात का भी ख्याल रखना।

प्रभा—बहुत अच्छा, नमस्कार।

सुनीता—नमस्कार।

बारहवाँ दृश्य

स्थान—रास्ता ।

(सात स्त्रियाँ नदी पर पानी भरने के लिये अपने माथे पर एक एक घड़ा रक्खे हुए रास्ते में गाती हुई जा रही हैं ।)

गायन

सखियाँ पानी भरन को जायँ ।
प्यास मिटन को जायँ, सखियाँ त्रास नमन को जायँ ॥
सखियाँ पानी भरन को जायँ ।

कलियाँ खिलीं कमल दल विकसे, भँवर करें गुञ्जार ।
कुसुम मनोहर फूल रहे हैं, पवन करें झंकार ॥
मग में गाती बजाती जायँ ॥१॥

द्रुम-दल शोभ रहे उपवन में, पंछी करें पुकार ।
झुक, झुक डालियाँ बुला रही हैं, खेद हरे संसार ॥
पग-पथ जल्दी उठाती जायँ ॥२॥

मन-मयूर प्रमुदित मन माहीं, बदन झकोरे खाय ।
जल दरसन की आस लगी है, नदी नीर तट जायँ ॥
दिल की बातें बताती जायँ ॥३॥

पहली स्त्री—अजी आपने भी सुना ?
दूसरी स्त्री—क्या बात है ।
पहली स्त्री—अजी वह प्रेमलता बाई है न !

दूसरी स्त्री—हाँजी उसके बारे में तो सब सुन रक्खा है।

तीसरी स्त्री—बाबा बेचारी को झूठा ही बदनाम किया जा रहा है। वह तो इतनी भोली लड़की है कि एक की दो भी नहीं जानती।

चौथी स्त्री—हाँ जी एक तो तुम भोली हो और एक वह प्रेमलता बाई भोली है।

पाँचवी स्त्री—जो जितनी भोली होती है वह उतनी ही गजब की गोली होती है।

छठी स्त्री—बाबा उसने जो किया वह परमात्मा किसी भी भले घर की औरत से न करावे।

सातवीं स्त्री अरे यह कलजुग है कलजुग!

तीसरी स्त्री—लेकिम मैं आप लोगों से पूछती हूँ उस बेचारी ने क़ुसूर क्या किया ?

सब—वह रात के समय पराये और ऐसे वैसे घरों में जाती है।

पहली स्त्री—यह तो हुआ सो हुआ पर वह दो दिन से लापता है लापता।

सब– लापता है! (आश्चर्य से)

सातवीं स्त्री—अरे यह कलजुग है कलजुग!

छठी स्त्री—बाई जी मैंने तो पहले ही कह दिया था कि इसके लक्षण अच्छे नहीं हैं।

पाँचवीं स्त्री—मैंने तो जिस दिन यह सुना कि वह पाठशाला में पढ़ने के लिये भी जाने लगी है तभी यह सोच लिया था कि एक न एक दिन बाप दादों का मुंह काला करेगी!

चौथी स्त्री—अजी यह ज़माना जो कुछ भी करावे सो थोड़ा है।

दूसरी स्त्री—चान्दबाई आप इस जमाने की करतूतें देखते जाइये।

सातवीं स्त्री—अरे यह कलजुग है कलजुग!

छठी स्त्री—अभी थोड़े दिन पहले उस मनोहरबाई का किस्सा तो सुना ही था।

पाँचवीं स्त्री—अजी उसको पुलिस फौजदारी तक में जाना पड़ा था।

चौथी स्त्री—बाबा इन आजकल की छोरियों की तो बात ही मत पूछो।

दूसरी स्त्री—नित नई बातें सुनने में आती हैं।

सातवीं स्त्री—अरे यह कलजुग है कलजुग!

तीसरी स्त्री—अजी तो बेचारी के सासरे वालों ने और पीहर वालों ने कितनी बुरी मार मारी है। वह तो बेचारी कहीं जान बचा कर भागी है।

पहली स्त्री—अरी तू उस पर बड़ी दया दिखा रही है। ऐसी के मार ही क्या मेरे घर में कोई बहू बेटी ऐसी कुलच्छणा निकल आवे तो मैं उसकी आँख निकाल लूँ और काला मुहँ करके घर से निकाल दूँ।

दूसरी स्त्री—अजी यह गृहस्थी है गृहस्थी।

चौथी स्त्री—भरी पूरी गृहस्थी में ऐसी बहू-बेटी का क्या काम।

पाँचवी स्त्री—राम बचावे ऐसी स्त्री से।

छठी स्त्री—जिसका होनहार खोटा होता है उसके घर में ऐसी ही छोरियाँ उत्पन्न होती हैं।

पहली स्त्री—एक बात और भी सुनी कि जाते समय वह अपने साथ गहनों का डिब्बा भी ले गई।

सातवीं स्त्री—अरे यह कलजुग है कलजुग!

छठी स्त्री—क्यों जी कितने गहने होंगे?

पहली स्त्री—अजी बेचारों का सारा माल एक ही डिब्बे में रक्खा था।

पाचवीं स्त्री—ज्यादा नही तो २०० तोला तो सोना होगा ही।

पहली स्त्री--बेचारी उस ननद की दो चार रकमें भी उसी में थीं।

चौथी स्त्री—उसके सुसराल वालों ने डाली होंगी।

दूसरी स्त्री—अभी गई तीजों पर तो आई ही थीं।

तीसरी स्त्री—उसके ससुराल वाले तो उसे पूरा बदनाम करना चाहते हैं!

दूसरी स्त्री—अजी तो गहनों का डिब्बा ले जाने की बात कोई झूंठी थोड़े ही हो सकती है।

पहली स्त्री—उसकी सास तो गहनों के लिये दो रोज से माथा पीट रही है और उसकी ननद ने रो रो कर घर भर दिया।

तीसरी स्त्री—अगर गहनों का डिब्बा चला जाता तो रूपचंदजी बहू के पीछे चारों ओर आदमी दौड़ा देते।

पहली स्त्री—अजी वे तो अपनी तरफ़ से पूरी दौड़ धूप कर ही रहे हैं। अगर बहू मिल गई तो उसकी खाल उधेड़ हीं लेंगे?

दूसरी स्त्री—हाँ जी इतने सारे गहने क्या चले गये, बहू, बेचारी का कलेजा निकाल कर ले गई!

चौथी स्त्री—गहनों के सिवा उनके पास और रक्खा ही क्या था।

पाँचवी स्त्री—जो थोड़े नकद नारायण थे वह तो बेटे ने ऊल फैल में उड़ा दिये।

छठी स्त्री—बाई जी बेचारे रूपचन्दजी को अपने बेटों का सुख तो आया ही नहीं।

पहली स्त्री—हाँ जी आप का कहना बिल्कुल सही है। एक बेटा तो भरी जवानी में ही मर गया! दूसरा जुआ-चोरी पर उतर गया।

सातवीं स्त्री—अरे यह कलजुग है कलजुग!

छठी स्त्री—हाँ जी इस जमाने में वो जो भी सुनलें सो थोड़ा है।

पाँचवीं स्त्री—क्यों जी फिर जात बिरादरी वालों ने क्या फैसला किया?

चौथी स्त्री—अजी जात बिरादरी वालों में तो दो दल होगये।

पहली स्त्री—आज कल धोली टोपी वालों का ऐसा दल खड़ा हुआ है जो बेचारे बड़े बूढ़े पंचों की एक भी नहीं चलने देता।

दूसरी स्त्री—अजी वो तो है सो है लेकिन आज कल धोली धोती वाली छोरियों ने एक अलग ही माथा उठा रक्खा है।

सातवीं स्त्री—अरे यह कलजुग है कलजुग!

छठी स्त्री—क्यों जी फिर भी कुछ फैसला तो होगा ही।

पहली स्त्री—अब क्या फैसला होना है! आज कई दिनों से मन्दिर में पंचायत बैठ रही थी। रोज दोनों दलों में मुठ भेड़ होती थीं। बीच में वह फैसले वाली ही भाग गई तो अब फैसला किसका?

पाँचवीं स्त्री—मुझे तो उसके भागने में भी कुछ भेद दीखता है।

छठी स्त्री—हाँ, जरूर कुछ दाल में काला है।

सातवीं स्त्री—अरे यह कलजुग है कलजुग!

पहली स्त्री—जो आओ जी आओ, चलें। अपनी तरफ़ से कुछ भी हो।

दूसरी स्त्री—हाँ जी, इतना बड़ा शहर है, रोज नई-नई बातें होती रहती हैं।

तीसरी स्त्री—ठीक है बाईजी! हमको दूसरों की बुराईसे क्या मतलब। जाने क्या सच हो क्या झूँठ हो। हम पाप का भाग क्यों लें।

चौथी स्त्री—लो साहब अब चलें देर हो रही है।

सब—हाँ लो चलो जी चलें।

(सब चली जाती हैं)

तेरहवाँ दृश्य

स्थान—रास्ता

[प्रेमलता शहर के बाहर किसी सूने और अपरिचित रास्ते से होकर निरुद्देश्य चलती चली जा रही है। उसके माथे पर कपड़ों की एक छोटी सी गठरी है और तन पर बहुत मामूली हैसियत की पोशाक है। उसका मुह उदास और मलिन प्रतीत होताहै और कभी दु खित हृदय से गुन गुनाने लग जाती है और कभी अपने आप पीड़ित अन्त करण के भावों को प्रकट करने लगती है।]

*** गायन ***

रे मन मूरख क्यों रोता।
चल वृथा समय क्यों खोता॥

सुन नाहिं जगत क्या बोले, वचनों में कटु विष घोले।
मन मीत भ्रमत क्यों थोता, रे मन मूरख क्यों रोता॥१॥
कहिं बाघ शेर कहिं गरजे, पिक मोर गमन-वन बरजे।
कहि बोलत मैंना तोता, रे मन मूरख क्यों रोता॥२॥
कोइ करे भरे पर काई, जग रीत विपद मैं ढोई।
काटे नहि जो है बोता, रे मन मूरख क्यों रोता॥३॥
पितु मातु सखा कोइ नाहीं परिजन कटु बोल सुनाहीं।
क्यों खाय नदी नहि गोता, रे मन मूरख क्यों रोता॥४॥

"हे भगवन्! क्या विधवा होना तुम्हारा सबसे बड़ा अभिशाप है। ? क्या विधवा संसार की सब से बड़ी विपदा है ? क्या विधवा जल, थल और आकाश के समस्त प्राणियों में सबसे निकृष्ट है ? क्या विधवा होना आत्मा के पूर्व संचित कड़े से कड़े पापों का फल है ?"

"भगवन्! मैं सुनती थी तू बड़ा दयालु है। गरीबों का पालनहार है। पतितों का उद्धारनहार है। डूबे हुए प्राणियों का खेवनहार है। दुःखियों के लिये आश्वासन है। असहायों का सहायक है। निराशों की आशा है। निराश्रयों का आश्रय है। अशरणों का शरण है। गंगे की वाणी है। अन्धे की लकड़ी है। रोगी की दवा और अधीरों की सान्त्वना है। किन्तु यह सब झूँठ निकला। आज तुम्हारे सामने एक असहाय और निराश्रय विधवा अपनी करुण पुकार लिये खड़ी है; किन्तु तुम्हारा ध्यान उसकी ओर तनिक भी आकर्षित नहीं हुआ। आज तुम्हारी दीनबन्धुता कहाँ गई ? तुम्हारी रक्षाशक्ति कहाँ विलीन होगई ? तुम्हारी न्याय-परायणता को कौन कुल्हाड़ी मार गया ? तुम्हारी सर्वज्ञता पर किसने पर्दा डाल दिया ? तुम्हारी अनन्त शक्ति को किसने छिपा लिया!"

"सुनती थी, तुम्हारी छत्र-छाया में दुनियाँ का हर एक प्राणी शांति और सुखकी साँस ले सकता है। किन्तु मेरे लिये आज तुम्हारी छत्र-छाया कहाँ विलीन हो गई! सुनती थी तुम्हारी पृथ्वी विशाल और अपार है, किन्तु मेरी ऐसी दुखारिन को स्थान देने के लिये आज उसका छोटा सा टुकड़ा भी तैयार नहीं है! जिधर जाती हूँ उधर ही लानत उठानी पड़ती है। लोगों की अँगुलियाँ सहनी पड़ती हैं! गालियाँ सुननी पड़ती हैं! मैं नहीं सोच सकती अब

क्या करूँ, किधर जाऊँ, कहाँ जाऊँ ! एक तरफ़ भयानक जङ्गल है ! डरावनी नदियाँ हैं ! गरजते हुए समुद्र हैं ! दहाड़ते हुए पशु हैं ! ऊँचे पहाड़ हैं ! एक तरफ़ गाँव और शहर है ! मनुष्यों का वास है, ऊँची अट्टालिकायें हैं ! सुन्दर उपवन हैं ! सरस सरोवर हैं ! किन्तु एक तरफ़ अपमान और प्रतारणा है ! एक तरफ़ बलिदान और गौरव की रक्षा है !"

"क्या शहर वापिस चली जाऊँ ? जंगल की आफ़तों से बच जाऊँगी। भूख और प्यास की तकलीफ़ नहीं सहनी पड़ेगी। (कुछ ठहर कर) नहीं, शहर वापिस नहीं जा सकती। वहाँ निर्मम और निष्ठुर मनुष्यों का वास है ! वहाँ बेहया समाज और निर्लज्ज पञ्चायतें हैं ! अन्याय और धोखे का राज्य है ! आदमी आदमी का दुश्मन है ! इन्सान इन्सान की तकलीफ़ों पर हँसता है ! सुखी दुःखी को देखकर उसे चिड़ाता है ! सुखी को देखकर दुखी कुढ़ता है ! मेरा मार्ग जंगल ही निश्चित है। मैं शहर वापिस नहीं जा सकती। मेरा मार्ग कंटकाकीर्ण है, किन्तु संकल्प उत्तम है। रास्ता अपार है किन्तु थकान बिल्कुल नहीं है। मैं बे-पते, बे-ठिकाने और बे-निशाने चली जा रही हूँ। मेरा रास्ता कोई नहीं रोक सकता। जो रोकेगा उसका मैं शेरनी की भांति मुक़ाबला करूँगी। मैंने अपना सब साहस बटोर लिया है। मैं मौत से नहीं घबराती, जहाँ यह रास्ता ले जायगा चलती जाऊँगी, किन्तु इन्सान के सहवास में नहीं रहूँगी। (चली जाती है)

(नेपथ्य में से आवाज़ आती है)

प्रेमलता ! प्रेमलता !! प्रेमलता !!!

(प्रकाश में प्रभा का प्रवेश)

प्रेमलता, प्रेमलता, तुम कहाँ हो ? प्रेमलता, बोलो जवाब दो।

(एक लकड़ी लाने वाली स्त्री का एक छोटी लड़की के साथ प्रवेश)

प्रभा—तुमने प्रेमलता को देखा ? बोलो, जवाब दो। तुमने प्रेमलता को देखा ? (छोटी लड़की ताज्जुब से देखती है)

पहली स्त्री—अरी चल, कोई पागल है पागल !

प्रभा—(ताज्जुब से) मैं पागल हूँ ! अरे मैं मेरी प्रेमलता को ढूँढ रही हूँ, वह मेरी सहेली है।

पहली स्त्री—इस सूनसान जंगल में कोई भले घर की स्त्री आ सकती है। (चली जाती है)

प्रभा—प्रेमलता, प्रेमलता ! ओ, यह किसकी आहट है ? किसकी आवाज़ आ रही है ? [उधर झपटती है] तुमने प्रेमलता को देखा ? ओ, कोई नहीं।

[दूसरी तरफ़ से एक स्त्री का प्रवेश]

प्रभा—तुमने प्रेमलता को देखा !

दूसरी स्त्री—कौन ! प्रेमलता ?

प्रभा—मेरी सहेली है। [पकड़ लेती है]

दूसरी स्त्री :—किसी को नहीं देखा, छोड़ो।

प्रभा :—नहीं तुमने जरूर देखा है।

दूसरी स्त्री :—नहीं देखा, छोड़ो। (छुड़ाकर चली जाती है।)

प्रभा :—प्रेमलता, प्रेमलता ! यह प्रभा पुकार रही है। ओह 'प्रभा' यह आवाज़ किधर से आ रही है। हाँ यह प्रभा बोल रही है। तुम्हारी प्रभा बोल रही है। (जरा ठहर कर) क्या कहा मैं नहीं चलूँगी ! नहीं मैं तुमको जरूर ले जाऊँगी मैं अब तुमको कोई तकलीफ़ नहीं होने दूँगी।

(नेपथ्य में से आवाज़ आती है।)

"तुम विधवा को साथ मत लेजाओ ? विधवा कुल कलंकिनी है।"

प्रभा :—नहीं विधवा कुल की रक्षा करने वाली है

नेपथ्य में से आवाज	*प्रभा*
विधवा घर की डाइन है।	विधवा कुटुंबका पालन करनेवाली है।
विधवा घर के लिये भारस्वरूप है।	विधवा सेवा परायण और परिचारिका है।
विधवा मनहूस है।	विधवा तप और त्याग की मूर्ति है
विधवा अपशकुन है।	विधवा कल्याण मयी है।
विधवा अमंगल है।	विधवा दूसरों को सुख पहुँचाने वाली है।
विधवा कुल्टा है।	विधवा साध्वी है।
विधवा कर्कशा है।	विधवा सहन शील है।
विधवा दुःशीला है।	विधवा सदा चारिणी है।
विधवा अपकारिणी है।	विधवा परोपकारिणी है।
विधवा कलहकारिणी है	विधवा शान्ति और उदारता की मूर्ति है।
विधवा पापिन है।	विधवा तपस्विनी है।
विधवा पतित है।	विधवा पवित्र है।
विधवा दुनियाँ का कूडा कर्कट है	विधवा तपाया हुआ सुवर्ण है।
विधवा दलित है।	विधवा आदरणीय है।
विधवा का मुँह देखना पाप है।	विधवा की इज्जत करना धर्म है।
विधवा नारी जाति का कलंक है	विधवा मनुष्यजाति के लियेपूज्यहै।

"प्रेमलता! मैं तुम्हारी बहुत इज्जत करतीं हूँ। तुम किधर हो बोलो, बोलो, (नेपथ्य से कुछ भी आवाज न सुन कर) तुम्हारी आवाज क्यों नहीं आ रही है! आवाज दो! आवाज दो! प्रेमलता! प्रेमलता!! प्रेमलता!!! (मूर्छित होकर गिर जाती है)

ड्राप-सीन

पहला अंक समाप्त।

दूसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान—इलाहाबाद—विधवाश्रम

(विधवाश्रम के एक कमरे मे प्रेमलता रोग-शय्या पर पड़ी हुई है और उसके पास दो एक परिचारिकाएँ बैठी हुई उसको पंखा कर रही हैं।)

संचालिका का प्रवेश।

संचालिका :—कैसी तबियत रही ?

पहली परिचारिका :—जी वैसी ही है, कोई खास बात नहीं।

संचालिका :—डाक्टरनी जी को बुलाने भेजा ?

दूसरी :—जी, भेजदिया।

संचालिका :—दौरा कुछ कम हुआ।

पहली :—जराभी कम नहीं हुआ।

दूसरी :—अभी आपके आने के थोड़ी देर पहले ऐसी जोर का दौरा आया था कि हम दोनों से सँभालना मुश्किल हो गया।

संचालिका : (प्रेमलता के बदन का छूकर) बुखार बहुत तेज मालूम होता है। बुलाने किसको भेजा है ?

पहली :—पार्वती को।

संचालिका :- बड़ी सुस्त लड़की है। आज राधा कहाँ गई ?

पहली :—राधा त्रिवेणी स्नान करने गई है।

(प्रेमलता बुखार की तेजी में प्रलाप करती है।)

"मुझे छोड़दो ! मैं पापिन हूँ ! मैं विधवा हूँ ! मैं इन्सान के सहवास में नही रहूँगी। मेरा रास्ता कोई नहीं रोक सकता ! मुझे छोड़दो। छोड़दो। मैं नहीं रुक सकती !"

(संचालिका और दोनों परिचारिकाओं का बीच बीच में रोगिणी को सँभालने और सुलाने की कोशिश करना तथा संचालिका का परिचारिकाओं को 'हवा करो, इधर से पकड़ो कर सम्हालो' आदि कहते रहना ।)

संचालिका :—(दौरा कम होने पर, खड़ी हो कर) हवा धीरे, धीरे करते रहो और रोगिणी को अधिक से अधिक आराम पहुँचाने की कोशिश करो—(हाथ लगा कर) बुखार बहुत तेज होता चला जा रहा है। ओर यह पार्वती कैसी सुस्त है। अभी तक नहीं लौटी। मैंने तुमसे कितनी बार कहा कि जल्दी के काम में इस पार्वती को कभी मत भेजा करो। शर्मिष्ठा देवी को ही तो बुलाने भेजा है ?

पहली :—जी हाँ—

संचालिका :—फिर क्या, शर्मिष्ठा देवी का मकान कौन इतना दूर है जो इतना विलम्ब होना चाहिये। (दुःख भरी साँस लेकर) इसके प्रलाप से कोई बेचारी बहुत ही दुखियारी मालूम होती है—

पहली स्त्री :—लेकिन चेहरे से मालूम होता है किसी भले घर की है।

संचालिका :—लो ! यह डाक्टरनी जी साहिबा आगई—

(डाक्टरनी का प्रवेश)

संचालिका :—आइये डाक्टरनी जी साहब ! बड़ी देर से इन्तजार हो रहा था।

डाक्टरनी :—माफ़ कीजियेगा मुझे कुछ देर हो गई ! असल में आजकल बीमारों की बड़ी भीड़ रहती है। कुछ तो छोड़ कर आई हूँ। आज कौन बीमार हो गया ?

संचालिका :—पहले आप देखिये ! बात फिर होती रहेगी।

(डाक्टरनी का लगभग चार पाँच मिनट तक थर्मा,मीटर स्टेथिस्कोप से जाँच करना)

डाक्टरनी :– डबल निमोनिया है। १०३ डिग्री बुखार है। बुखार कब से है ?

संचालिका :—पता नहीं। बात यह है कि यह आश्रम की बाई नहीं है। मैं कल सुमित्रा देवी के साथ त्रिवेणी की तरफ़ घूमने गई थी। वहाँ पर यह बेहोश पड़ी पाई।

डाक्टरनी :—ओः ऐसा ! तब से होश बिल्कुल नहीं हुआ ?

(संचालिका एक परिचारिका की तरफ देखती है)

पहली :—जी बिल्कुल नहीं–

संचालिका :—ये दोनों रात भर इसके पास बैठी रही हैं।

डाक्टरनी :—किसी भले घर की मालूम होती है। त्रिवेणी स्नान करने आई होगी। असल में आज कल मौसम बहुत खराब है।

संचालिका :—कौन जाने, किन्तु औरत की जात त्रिवेणी के पास अकेली पड़ी मिली इससे ख़याल कुछ और ही जाता है।

डाक्टरनी :—असल में होश आने पर ठीक पता लगेगा–

संचालिका :—जी-हाँ,-होश कब तक आ जायगा ?

डाक्टरनी :—घबराने की कोई बात नहीं। होश जल्दी ही आ जायगा ! असल में डबल निमोनिया है। मैं दवा लिख देती हूँ। (जेब से पेन और एक स्लिप-बुक निकाल कर लिखना। २-२घंटे पर *M, B. 693.* सोडा बाई-कार्ब और ग्लूकोज के साथ मिला कर देना। प्लास्टर लगाने को मैं अभी नर्स भेजती हूँ।

सचालिका :—बीच-बीच में प्रलाप भी बहुत करती है।

डाक्टरनी :—कोई बात नहीं! असल मे बुखार तेज है न।

संचालिका :—खाने पीने को क्या दें ?

डाक्टरनी :—खाने को थोड़ा बहुत दूध दे सकते हैं। (परिचारिका को पंखा करते देख कर) पखा करने की ऐसी जरूरत नहीं है। असल मे निमोनियाँ है न।

(डाक्टरनी जाने को होती है)

संचालिका—[जेब मे से एक पाँच रुपये का नोट निकाल कर देती हुई] माफ़ कीजियेगा-आपको कष्ट हुआ।

डाक्टरनी :—फीस की ऐसी क्या जरूरत है ? असल में यह तो आश्रम है। [कहती हुई जेब मे रख लेती है।]

सचालिका :—आपकी मेहरबानी है—

डाक्टरनी :—थैन्क यू-[चली जाती है]

सचालिका :—[पास खड़ी हुई पार्वती से] अरे तूने इतनी देर कैसे लगाई ?

पार्वती :—डाक्टरनी जी घर पर नहीं थी। 'डिस्पेन्सरी' चली गई थीं।

सचालिका :—जाओ अन्दर जा कर काम करो—

[अन्दर चली जाती है]

———

दूसरा दृश्य

स्थान—जयपुर-महिला-वाचनालय

(वाचनालय में प्रभा, सुनीता, चन्द्रप्रभा, और सुलोचना, अख़बार आदि पढ़ रही हैं।)

प्रभा—(बहुत आह्लाद और उतावली के साथ खड़ी होकर) सुनीता, प्रेमलता का पता लग गया। (कह कर उसकी कुर्सी की ओर लपकती है।)

(तीनों एक दम से खड़ी होकर उसके पास जाकर) प्रेमलता मिल गई ?

सुनीता—देखें क्या है, बता तो।

प्रभा—(अखबार सीने से चिपका लेती है) नहीं बताती हूँ।

(तीनों उससे छीनने की कोशिश करती हैं।)

प्रभा—अच्छा पहले मिठाई की पक्की करो तब बताऊँगी।

सुनीता—(हल्का सा चाँटा लगा कर) लो यह मिठाई (अखबार छीनने का कोशिश करती हैं)

(प्रभा उछल कर दूर खड़ी हो जाती है।)

प्रभा—(मुँह फुला कर) अच्छा नहीं बताती हूँ।

सुलोचना—प्रभा, बोलो बर्फी या रसगुल्ला।

चन्द्रप्रभा—नहीं यह तो सन्देश खायेगी।

सुनीता—अच्छा बाबा मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ।

प्रभा—यह भी कहो माफ़ी माँगती हूँ।

(सुनीता अकड़ जाती है)

सुनीता—जाओ हमें अखबार नहीं देखना।

प्रभा—अच्छा लो बहिन मैंने तो यों ही मजाक में कह दिया।

सुनीता—नहीं लेती हूँ।

प्रभा—लीजिये मेरी प्यारी बहिन सुनीता देवी जी।

(इतने में सुलोचना प्रभा के हाथ से अखबार छीन लेती है।)

सुलोचना—लो आओ जी इनका रूठना मनाना तो यूँ ही होता रहेगा।

(सुलोचना और चन्द्रप्रभा एक ओर चली जाती हैं और अखबार देखने लगती हैं)

सुनीता—अरे! तुमने तो नाटक का मजा ही किरकिरा कर डाला।

प्रभा—हाँ देखो न कितना अच्छा अभिनय चल रहा था।

सुनीता—(दोनों की ओर बढ़ कर अखबार छीन लेती है।) लाओ मुझे दो, मैं पढ़ूँगी। क्यों प्रभा कौनसा समाचार है?

प्रभा—यह रहा।

(सुनीता अखबार ज़ोर से पढ़ती है।)

" इलाहाबाद २९ तारीख

ता० २७, २८ व २९ सितम्बर को श्री सरस्वती विधवाश्रम का वार्षिक महोत्सव बड़ी धूम-धाम के साथ मनाया गया। विधवा-श्रम की रिपोर्ट सुनने से मालूम हुआ कि विधवाश्रम ने १५ वर्ष के कार्य-काल में आशातीत उन्नति की है और हजारों विधवाओं को शिक्षा व शिल्प-कला में पूर्ण योग्य बना कर उनको विभिन्न क्षेत्रों में आजीविका के मार्ग पर लगा दिया है।

आश्रमकी संचालिका सरस्वती देवी और आश्रम सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रेमलता देवी जयपुर वाली तन-मन-धन से आश्रम को अपनी सेवायें अर्पण कर रही हैं।

... संवाददाता"

सुलोचना—यह जयपुर की प्रेमलता और कौन हो सकती है ?

प्रभा—हाँ और कौन हो सकती है ? यह हमारी ही प्रेमलता है।

सुनीता—आज पूरे दस वर्ष के बाद पता मिला है ।

प्रभा—मैं आज ही प्रेमलता को पत्र लिखूँगी कि तुम एक दम सेजल्दी से जल्दी पहली से पहली गाड़ी से··············

सुनीता—अरे ! गाड़ी नहीं, हवाई जहाज !

प्रभा—हाँ तुमने यह खूब पते की याद दिलाई ।

चन्द्रप्रभा—लेकिन हवाई जहाज में तो खतरा है ।

प्रभा—अरे नहीं, नहीं हवाई जहाज नहीं, बिल्कुल नहीं । तुमने चन्द्रप्रभा उससे भी पते की याद दिलाई ।

सुनीता—प्रभा, चिट्ठी जाने कब पहुँचे और प्रेमलता पत्र से आवे भी या नहीं। मेरी राय में तो हम दोनों को स्वयं ही इलाहाबाद चलना चाहिये ।

प्रभा—सुनीता, यह तुमने और भी पते की कही। मैं अभी तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ ।

सुनीता—अच्छी बात है। तुम आज दोपहर को आना । इलाहाबाद जाने का कार्य-क्रम ठीक करेंगे।

प्रभा—बहुत अच्छा ।

(सब जाने को उद्यत होती हैं ।)

प्रभा—सुनीता एक काम क्यों नहीं करें ? इधर निकल चलें जो उसके ससुराल भी खबर देदें ।

सुनीता—अरे उसके ससुराल में अब कौन बैठा है जो खबर दोगी। उसका जेठ और ससुर तो पहले से ही घर से बाहर हैं। सावित्री ससुराल बैठी है। सावित्री की माँ और दोनों छोटी

बच्चियों का आज तीन चार महीने से कुछ पता नहीं है। जाने कहाँ हैं? तीर्थ यात्रा करने के बहाने से गई थीं फिर आज तक कोई समाचार नहीं मिला।

चन्द्रप्रभा—सच तो यह है कि बेचारी ग़रीबी से बहुत अधिक तंग आ गई थी।

सुनीता—(एक दीर्घ साँस छोड़ कर) जो जैसा करता है वैसा ही पाता है। लो आओ चलें।

(सब चली जाती हैं)

तीसरा दृश्य

स्थान—इलाहाबाद–विधवाश्रम में सञ्चालिका का दफ़्तर

(दफ़्तर में सञ्चालिका एक कुर्सी पर बैठी है और कुछ लिख रही है, उसके सामने एक टेबिल पर बहुत से रजिस्टर काग़ज़ आदि रक्खे हैं और इधर उधर दो ट्रे पड़ी हुई हैं जिनमें सञ्चालिका इधर से उधर काग़ज़ डाल रही है। टेबिल पर खूबसूरत काच का कलमदान और घंटी आदि यथा—स्थान रक्खे हैं। टेबिल के इधर उधर चार-पाँच कुर्सियां आगन्तुकों के लिये रक्खी हैं। दफ़्तर के बाहर एक महिला-सेविका—चपरासी की पोशाक में खड़ी है।)

(एक स्त्री का प्रवेश)

एक स्त्री—(सेविका से) सञ्चालिकाजी का दफ़्तर यही है?

सेविका—हाँ यही है।

एक स्त्री—मैं अन्दर जा सकती हूँ?

सेविका—हाँ जाइये।

(आगे जाकर)

एक स्त्री—नमस्कार।

सञ्चालिका—(गर्दन ऊँची उठाकर) नमस्कार कहिये क्या काम है ?

एक स्त्री—मैंनेसुना है आपके वहाँ एक जगह खाली हुई है।

सञ्चालिका—कैसी जगह ?

एक स्त्री—हिन्दी अध्यापिका की।

सञ्चालिका—ओ ऐसा, बैठिये।

(आगन्तुका पास रक्खी हुई कुर्सी पर बैठ जाती है।)

सञ्चालिका—(अपने हाथ में पकड़ी हुई पैंसिल या क़लम अपने माथे से छूती हुई) आप कहाँ तक पढ़ी हैं ?

स्त्री—मैंने महिला विद्यापीठ की सरस्वती परीक्षा पास की है।

सञ्चालिका—हिन्दी साहित्य में ?

स्त्री—जी हाँ

सञ्चालिका—आपने पहले कहीं काम किया है ?

स्त्री—कहीं नहीं।

सञ्चालिका—यहाँ ही रहती हैं ?

स्त्री—जी नहीं ! कानपुर रहती हूँ।

सञ्चालिका—आपके आदमी इलाहाबाद में रहते हैं क्या ?

स्त्री—अभी तो नहीं। किन्तु मैं यहाँ काम करने लग गई तो वे भी यहाँ ही रहेंगे।

सञ्चालिका—क्या काम करते हैं आपके आदमी ?

स्त्री—(नीची गर्दन करके) असल में उनकी आँखें काम नहीं देती हैं।

सञ्चालिका—श्रो। क्या वेतन ले लेंगी ?

स्त्री जो भी मिल जाय।

सञ्चालिका—(कुछ सोचती हुई) अच्छा आप आश्रम सुपरिन्टेन्डेंट से बात कीजियेगा। मैं उनको एक चिट्ठी लिख देती हूँ। (घंटी बजाती है।)

(पार्वती आकर खड़ी होती है)

सञ्चालिका—(सावित्री के हाथ में एक चिट्ठी देती हुई) पार्वती इनको सुपरिन्टेन्डेन्ट का दफ्तर बताओ।

(दोनों बाहर चली जाती हैं।)

पार्वती—थोड़े सीधे जाकर बाँयी ओर मुड़ जाइये। वहीं आपको आश्रम सुपरिन्टेन्डेंट का दफ्तर मिलेगा।

(आगन्तुका चली जाती है)

सञ्चालिका—(घंटी बजाती है, किसी को नहीं आते देखकर दुबारा घंटी बजाती है।)

(पार्वती उतावली सी आती है)

सञ्चालिका—यह कागज़ ले जाओ।

(कागज़ उठाकर ले जाती है।)

(बाहर आते ही एक औरत दो लड़कियों के साथ फटे पुराने वेष में आती हुई दिखाई देती है।)

पार्वती—ऐ, ऐ माई इधर कहाँ आती हो ?

एक औरत—मैं नौकरी करना चाहती हूँ।

पार्वती—यह विधवाश्रम है या नौकरीखाना ?

एक औरत—कोई छोटी मोटी नौकरी, हम तीनों के पेट भरने लायक मिल जाय तो।

पार्वती—जाओ, जाओ यहाँ कोई नौकरी नहीं है।

एक औरत - कोई चपरासी वपरासी की जगह—

पार्वती - हैं चपरासी की जगह! अरे तुम्हारी ऐसी औरतों को चपरासी की जगह मिलती है क्या? उसके लिये तो कोई हमारी जैसी शिक्षित चाहिये।

(सञ्चालिका घंटी बजाती है)

(पार्वती दौड़कर जाती है)

सञ्चालिका—दावात में स्याही डालो।

(इतने में तीनों सञ्चालिका के पास आ जाती हैं)

एक औरत—हुजूर! मैं कोई नौकरी करना चाहती हूँ।

सञ्चालिका—क्या काम कर सकती हो?

एक औरत—जो भी काम मिल जाय।

सञ्चालिका—पार्वती इनको सुपरिन्टेन्डेन्ट से मिलने को कहो।

पार्वती—अरे इधर आओ।

(चारों बाहर आ जाती हैं।)

पार्वती—जाओ इधर सीधे जाकर बाँयी ओर आश्रम सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब के दफ्तर में चले जाओ। वे तुमको कोई काम बतायेंगी। देखो चपरासी की नौकरी के लिये भूलकर भी न कहना। यहाँ चपरासी का काम करना लोहे के चने चबाना है।

(चली जाती है।)

चौथा दृश्य

स्थान- इलाहाबाद-विश्वाश्रम में आश्रम-सुपरिन्टेन्डेन्ट का दफ्तर

[दफ्तर में आश्रम-सुपरिन्टेन्डेन्ट की कुर्सी खाली है और उसके बाहर एक महिला-सेविका चपरासी के वेष में खड़ी है।]

[एक स्त्री का प्रवेश]

एक स्त्री :—आश्रम सुपरिन्टेन्डेन्ट का दफ्तर यही है ?

महिला सेविका (राधा)—हाँ, यही है।

एक स्त्री-सावित्री :—[स्लिप देती हुई] मुझे उन से मिलना है। संचालिका जी ने भेजा है।

राधा :—आप यहीं बैठिये वे अभी आती ही होंगी। (आगन्तुका दफ्तर में एक कुर्सी पर बैठ जाती है)

[एक औरत का दो लड़कियों के साथ प्रवेश]

राधा :—ऐ, ऐ डोकरी माई कहाँ जा रही हो ? चने इधर नहीं मिलते, उधर भाण्डार की तरफ़ मिलते हैं।

औरत :—हमें चने नहीं चाहिये बाबा ! हमें तो सुपरिन्टेंडेन्ट से मिलना है।

राधा :—बड़ी सुपरिन्टेन्डेन्ट जी से मिलने वाली आयी। जा, उधर जा।

औरत—हम नौकरी करने आई हैं।

छोटी लड़की—हम भिखारी नहीं हैं जो चने माँगती फिरें।

राधा—तुमतो भिखारी नहीं, दातार हो !

छोटी लड़की—तुमने हमें चने माँगने वाली क्यों समझा ?

औरत—बेटी चुप रहो (राधा से) ईश्वर के लिये हमें सुपरिन्टेन्डेन्ट जी से मिलने दो।

(सुपरिन्टेन्डेन्ट का प्रवेश)

सुपरिन्टेन्डेन्ट—क्या है राधा ?

राधा—वे सुपरिन्टेन्डेन्ट साहिबा आ गईं। उनसे अर्ज करो।

औरत—सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब हमें कोई नौकरी चाहिये। (गौर से देखती हुई) ऐं कौन, बहू !

दोनो लड़कियाँ—माँ भाभी ! (आश्चर्य से)

सुपरिन्टेन्डेन्ट—(आश्चर्य से) कौन, अम्माजी आप यहाँ और इस वेष में !

(प्रेमलता पैरों में गिर पड़ती है। सास उठा कर छाती से लगा लेती है)

(राधा सावित्रीको इशारा करती है। सावित्री सुपरिन्टेन्डेन्ट से मिलने बाहर आती है।)

(राधा सुपरिन्टेन्डेन्ट को स्लिप देती हुई सावित्री की ओर इशारा करती है)

दोनों लड़कियाँ—(आश्चर्य से) सावत्री जीजी !

सुपरिन्टेन्डेन्ट—कौन, बाईजी। आप भी यहाँ ?

दोनों लड़कियाँ—माँ ! सावित्री जीजी भी यहाँ ही है।

सावित्री—(शोक और उद्वेग के साथ उसकी तरफ देखकर) अम्मा तुम इस हालत में !

माँ सावित्री और सुपरिन्टेन्डेन्ट रोने लगती हैं, और दोनों लड़कियाँ भी उनका साथ देती हैं।)

राधा एक ओर खड़ी बड़े आश्चर्य के साथ इस दृश्य को देख रही है)

सास—बेटी,(रुँधे स्वरसे और सुपरिन्टेन्डेन्ट की तरफ़ लक्ष करके) हमने तुम्हारा अपमान किया, तुमको घर से बाहर किया इसी का यह फल है कि आज हमारी यह दशा हो गई ! घर सब उजड़ गया और हम तीनों माँ बेटियाँ रोटी पानी के लिये भी दूसरों की मुँहताज हो गई ।

सावित्री—भाभी सचमुच यही बात है । मैंने भी तुम्हारे साथ जो व्यवहार किया उसका फल भोग रही हूँ ।

प्रेमलता—आप यह क्या कह रही हैं । अब भी आप मेरी वही माँ और आप मेरी वही बहिन हैं ।

माँ—बेटी मैं मेरे किये के कारण आज इतनी लज्जित हूँ कि माफ़ी भी अब किस मुँह से माँगूँ ।

प्रेमलता—अम्माँजी आप मुझे क्यों इतना लज्जित करती हैं । मैं तो मानती हूँ कि आप लोगों से मेरा महान उपकार ही हुआ है । अगर मैं जयपुर से न आती तो आज इस योग्य न होती ।

सावित्री—लेकिन इससे क्या भाभी ? हमेंतो हमारी करतूतों का फल मिला और तुमने तुम्हारी नेकी का लाभ उठाया ।

प्रेमलता—आप यह क्या कह रही हो बहिन, आपकी तो हमेशा से ही मेरे ऊपर कृपा दृष्टि रही है । खैर जाने दो इन बातों को । विमला के पिताजी का क्या हाल है ?

सास—बेटी बिमला के पिताजी पागलखाने में हैं ।

प्रेमलता— आश्चर्य से) हैं ! पागलखाने में हैं !

माँ—तुम्हारे आने के कुछ दिन बाद सुरेश एक जूआ-चोरी और हत्या के षड्यंत्रकारियों के साथ किसी मामले में फँस गया और उसको

७ वर्ष की सजा हुई। उसके पिताजी को इसका ऐसा सद्मा पहुँचा कि उनका दिमाग़ फिर गया और अब वे पागलखाने में हैं।

प्रेमलता—(एक दीर्घ निश्वास छोड़ती हुई) सच पूछिये तो मेरी ऐसी पापिन के कारण ही हमारे घर की यह दशा हो गई।

माँ—बेटी तुम यह क्या कह रही हो? यह कहो कि तुम्हारी ऐसी पवित्र आत्मा को हमने कलंकित किया, उसी का परिणाम यह भोग रहे हैं। असल में उस समय हमारी ही अक्ल पर पत्थर पड़ गया था जो हमने गंगा व्यासन के कहने पर विश्वास कर लिया। गंगा व्यासन को जिस औरत ने बहकाया था उसको कुछ दिन बाद ही गलित कोढ़ की बीमारी हो गई। तब से वह सारे शहर में हर स्त्री पुरुष बालक दरख्त, मकान और दूकान के सामने पुकार पुकार कर कह रही है कि प्रेमलता बिल्कुल निर्दोष है। मैं ही उसको थोड़े से रुपयों के लोभ में आकर धोखे से ले गई थी, और मेरे पंजे से बच कर निकल जाने पर मैंने ही उसको बदनाम करने की नीयत से गंगा व्यासन को बहकाया था।

प्रेमलता—(सावित्री की ओर लक्ष्य करके) आप अभी बनारस से आ रही हैं या जयपुर से?

माँ—बेटी बनारस वाली सगाई तो तुम्हारे आने के कुछ दिनों बाद ही छूट गई। कानपुर में एक पढ़ा लिखा लड़का था। उसी के साथ सावित्री का विवाह किया था। दैव योग से विवाह के कुछ दिनों बाद ही दामाद को चेचक निकल आई और उसमें उनकी दोनों आँखें जाती रहीं। बेचारी सावित्री भी पूरी दुखियारिन है। घर में और कोई कमाने वाला भी नहीं।

प्रेमलता—विमला, चमेली के व्याह सगाई का क्या हुआ?

माँ—बेटी, अभी दोनों कुँआरी ही हैं। मेरे पास क्या रक्खा था जो मैं इनको कहीं ठिकानेसिर लगा सकती थी। कुछ जेवर और रोकड़ थी वो तो तुम्हारे आने के दिन ही चोरी चली गयी। मकान सुरेश के मुकदमें में गिरवी पड़ा है।

प्रेमलता—गहनों का डिब्बा चोरी नहीं गया है। आते समय वह मैंने ही रंगमहल की बड़ी अलमारी की गुप्त दराज में छिपा कर रखदिया था। मैं जानती थी कि जेठजी रोज एक न एक जेवर जुंआ में लगाते हैं। अगर इसी तरह चलता रहा तो यह जेवर और रोकड़ चन्द दिनों में ही बरबाद हो जायगी।

माँ—जुग जुग जीओ बेटी! तुम्हारी सूझने इन दोनों लड़कियों का उद्धार कर दिया, अब उस धन से तुमही इनको ठिकाने सिर लगाना।

(एक नौकरानी का प्रवेश)

नौकरानी—(सुपरिन्टेन्डेन्ट से) आपसे दो तीन महिलायें मिलने आई हैं।

सुपरिन्टेन्डेन्ट—यहीं बुलाला।

(सुनीता और प्रभा का प्रवेश)

(प्रेमलता की सुनीता और प्रभा पर दृष्टि पड़ना और गले से गले लगा कर उनका मिलना और आँखों से प्रेम के आँसू निकलना तथा सावित्री की माँ का वहाँ से चुपके से निकल जाना)

सुनीता—(सावित्री की ओर देखकर) सावित्री! तुम यहाँ कब से हो?

सावित्री—मैं यहाँ कल ही कानपुर से आई थी।

प्रभा—तुमको प्रेमलता का पता कैसे मिला ?

प्रेमलता—दैवयोग इसी का नाम है प्रभा। हाँ, यह तो बताओ तुमको मेरी खबर कैसे मिली ?

सुनीता—तीस तारीख के हिन्दुस्तान में तुम्हारे आश्रम की खबर जो छपी थी।

प्रेमलता—ओ ऐसा ! उसमें मेरा कोई विशेष परिचय तो नहीं दिया गया था !

प्रभा—परिचितोंके लिये परिचयकी आवश्यकता ही क्या थी ?

सुनीता—वैसे फिर हमने मेरे भाई के किसी यहाँ के दोस्त से भी तुम्हारा हाल मालूम कर लिया था। मेरी आत्मा तो बराबर यह कह रही थी कि एक न एक दिन प्रेमलता से अवश्य भेंट होगी।

प्रेमलता—अच्छा, बातें फिर होती रहेंगी। पहले आप सब लोगों के लिये नहाने-धोने की और भोजन की व्यवस्था करती हूँ।

सुनीता—ठहरो प्रेमलता ! पहले हमारी एक शर्त पूरी करो, फिर सब काम होगा।

प्रभा—हाँ, हमने रास्ते में ही यह तय कर लिया है कि अगर प्रेमलता हमारी शर्त पूरी न करे तो हम उसके यहाँ अन्न और जल ग्रहण नहीं करेंगी।

प्रेमलता—ओ ऐसी भीषण प्रतिज्ञा ! हाँ, बताओ तो तुम्हारी यह कौनसी शर्त है ?

सुनीता—तुमको हमारे साथ जयपुर चलना होगा।

प्रेमलता—(कुछ सोच कर) सुनीता ! मैंने अपना सारा जीवन इस आश्रम ही को समर्पित कर दिया है। जयपुर चल कर अब मैं

क्या करूँगी ? मैं घर की सेवा के संकुचित क्षेत्र से निकल कर समाज-सेवा के विस्तृत क्षेत्र में आई हूँ।

प्रभा—हम कब कहती हैं कि तुम जयपुर जाकर अपनी सेवाओं का केन्द्र घर ही बनाओ। समाज-सेवा के लिये वहाँ भी बहुत विस्तीर्ण क्षेत्र पड़ा हुआ है।

सुनीता—जयपुर हमारी तुम्हारी जन्मभूमि है। तुम्हारी सेवाओं का अधिकारी पहले जयपुर है और पीछे इलाहाबाद है।

प्रेमलता—यह मैं भी मानती हूँ। किन्तु वहाँ ऐसे कौन से साधन हैं जिनसे मुझे समाज-सेवा का अवसर मिल सकेगा ?

सुनीता—साधन तो सब अपने आप जुट जायेंगे। आदमी के संकल्प के पीछे साधन तो स्वयमेव छाया की तरह दौड़े हुए चले आते हैं।

प्रभा—हमने यह तय किया है कि ऐसा ही आदर्श विधवाश्रम हम जयपुर में भी स्थापित करें।

सुनीता—और तुम्हें उसकी संचालिका बनावें।

प्रेमलता—आप लोगों का यही विचार है तो मैं बड़ी खुशी के साथ उसके दरवाजे पर उसकी चौकसी का भार अपने ऊपर लूँगी। संचालिका बनने की तो मुझमें क्या योग्यता है; किन्तु संचालिका जी मुझे आज्ञा देंगे तो मैं जाने के लिये तैयार हो सकूँगी।

सुनीता—सञ्चालिका जी से आज्ञा लेना हमारा काम है।

प्रभा—हमें तो जब तुम्हारी स्वीकृति मिल चुकी, बस वहाँ ही हमारा मनोरथ पूर्ण हुआ समझ लिया।

प्रेमलता—मैं स्वयं ही इसके लिये कई बार उत्कंठित होती थी कि मैं मेरी जन्मभूमि की विधवा बहिनों की स्थिति के सुधार में

कुछ हाथ बँटा सकूँ। किन्तु कोई उपयुक्त साधन न देखकर मेरे हृदय की उत्कंठायें वैसे ही मिट जाया करती थीं। किन्तु आज यह सोच कर मेरे हृदय में कितने अपार आनन्द का अनुभव कर रही हूँ, कि मुझे मेरी जन्मभूमि की विधवा बहिनों की सेवा करने का अवसर मिलेगा और साथही साथ एक महान गौरवका भी अनुभव करती हूँ, जो मुझे इस जन्म में आप दोनों ऐसी सच्ची सहेलियाँ प्राप्त हुई हैं।

सुनीता—हम क्या करने के लायक हैं, प्रेमलता!

प्रभा—हम तो खुद तुम्हारी सेवा से लाभ उठाने आई हैं।

प्रेमलता—[रोती हुई] मैं जानती हूँ, प्रभा और सुनीता! आपको मेरे प्रति कितनी सहानुभूति है? [रुमाल से आंसू पोंछती हुई] राधा, जाओ, इनके नहाने-धोने की तैयारी करो। चलो विमला, चमेली बहिन सावित्री जी—अरे! अम्माजी कहाँ गईं?

सुनीता—कौन, सावित्री की माँ!

प्रभा—सावित्री की माँ भी यहीं थी?

प्रेमलता—आपने उनको नहीं देखा? अभी तो यहाँ ही खड़ी थीं।

सावित्री—पता नहीं, कब यहाँ से चली गईं?

प्रभा—तलाश करो, यहाँ ही कहीं बाहर गई होंगी।

प्रेमलता—राधा! देखो तो इधर-उधर।

(राधा दौड़ती हुई जाती है)

(सब राधा के लौटने की बाट देख रही हैं और राधा तुरन्त ही एक नौकरानी के साथ उतावली सी लौट कर आती है)

राधा—यह जमुना कहती है कि अभी अभी एक बूढ़ी औरत फटे-टूटे कपड़ों में आश्रम के सामने एक मोटर के नीचे आ गई है।

जमुना—जी हाँ, यह औरत वही है जो अभी अभी यहाँ से निकल कर गई थी।

प्रेमलता—(उद्वेग के साथ) अम्माजी मोटर के नीचे आ गईं!

सावित्री—अम्माजी मोटर के नीचे आ गईं!

दोनों लड़कियाँ—अम्माजी मोटर के नीचे आ गईं!

प्रेमलता—चलो देखें, कहाँ हैं? मुझे बताओ!

(सब दौड़ती हुई चली जाती हैं)

पाँचवां दृश्य

स्थान—जयपुर टाउन-हाल

[महिला-सम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन हो रहा है। महिलाएँ हज़ारों की संख्या में उपस्थित हैं। इलाहाबाद-विधवाश्रम की संचालिका श्री शारदा देवी सभानेत्री का आसन ग्रहण किये हुए हैं। पर्दा उठता है और सभानेत्री खड़ी होकर बोलती हुई दृष्टिगोचर होती है]

सभानेत्री—[खड़ी होकर] मैं अब श्रीमती सुनीता देवी, प्रेमलता देवी, प्रभा देवी, अध्यापिका सुमित्रा देवी एवं सावित्री देवी ने आप लोगों के सामने जो-जो प्रस्ताव रक्खे हैं, उनको फिर दोहरा देती हूँ। प्रस्तावों के समर्थन व अनुमोदन में विभिन्न विदुषी बहिनों द्वारा काफ़ी प्रकाश डाला जा चुका है। इसलिये अब मैं समझती हूँ इनको अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं रही है। मैं एक-एक प्रस्ताव को आप लोगों के सामने पढ़ कर सुनाती हूँ। जिन बहिनों को किसी तरह का विरोध हो, वे कृपा करके अपना हाथ ऊँचा करके अपना विरोध प्रकट करें।

(सभानेत्री पहला प्रस्ताव पूरा पढ़ कर सुनाती है)

पहला प्रस्ताव

"एक अनिश्चित काल से समाज में जो विधवाओं की स्थिति चली आ रही है, वह बहुत ही शोचनीय है। विधवा स्त्रियों और सधवा स्त्रियों में कोई ऐसा अन्तर नहीं है, जो विधवाओं को सधवाओं से हीन और निम्न श्रेणी की समझा जा सके। सच तो यह है कि बहुत सी मानवीय सद्वृत्तियों में पूर्णता प्राप्त करने की दृष्टि से सधवा स्त्रियों से विधवा स्त्रियाँ कहीं ज्यादा उत्तम ठहरती हैं। अतः यह महिला-सम्मेलन प्रस्ताव रखता है कि समाज में विधवा और सधवा स्त्रियों की स्थिति में केवल उतना ही अन्तर समझा जाना चाहिये, जो अन्तर समाज के विधुर और सपत्नीक पुरुषों में है।"

प्रस्ताविका—सुनीता देवी

समर्थिका—अध्यापिका सुमित्रा देवी

अनुमोदिका—प्रभा देवी।

सभानेत्री—क्यों, आप सब बहिनों को मंजूर है!

सब सदस्यायें—मंजूर है, मंजूर है।

एक स्त्री—(खड़ी होकर) मुझे कुछ कहना है।

सभानेत्री—इजाज़त है।

एक स्त्री—पहले प्रस्ताव में विधवाओं की स्थिति को और उनके व्यक्तित्व को जो सधवाओं जैसा महत्व दिया गया है, वह शास्त्र और ईश्वरीय विधान के साथ संग्राम छेड़ना है। हम नारियाँ इस विशाल विश्व की क्षुद्र प्राणी होकर विधाता के विधान को उलटने का साहस करें, यह घटना नारी जाति के लिये एक महान् संकट की सूचना दे रही है।

अध्यापिका—(खड़ी होकर) मैं सभानेत्री महोदया का पंडिता शीलवती देवी के 'हम नारियाँ इस विशाल विश्व की क्षुद्र प्राणी' शब्दों की तरफ ध्यान आकर्षित करती हूँ । इन्होंने नारियों को क्षुद्र प्राणी कहकर नारी जाति का अपमान किया है ।

(बैठ जाती है)

सभानेत्री—मैं पंडिता शीलवती देवी से अपने शब्दों को वापिस लेने का अनुरोध करूँगी ।

शीलवती देवी—मैंने जो कुछ कहा है उसको मैं रत्ती-रत्ती प्राचीन ग्रन्थों और शास्त्रों से सिद्ध कर सकती हूँ । यदि नारी जाति का स्थान संसार के क्षुद्र प्राणियों में न होता तो तुलसीदास जी जैसे महान् संत यह कभी नहीं कह जाते कि—

' ढोल गँवार शूद्र पशु नारी ' ।

सब—(एक स्वर से) बैठ जाइये । बैठ जाइये । बैठ जाइये । बैठ जाइये । बैठ जाइये ।

सभानेत्री—(सब को शान्त करते हुए) मैं पंडिता शीलवती देवी से फिर अनुरोध करती हूँ कि वे प्रकरण के बाहर एक शब्द भी न बोलें । यदि वे मूल प्रस्ताव के सम्बन्ध में तर्क और दलीलों को सामने रखते हुए कुछ विरोध प्रकट करना चाहती हैं तो शौक़ के साथ कर सकती हैं । किन्तु इस बात का पूर्ण ध्यान रक्खें कि नारी जाति के लिये किसी तरह के आक्षेप या अपमानसूचक शब्द बिल्कुल न कहे जायँ ।

शीलवती—आप लोग विधवाओं को सर चढ़ा कर धर्म और समाज का गला घोंट रही हैं । यदि विधवा स्त्रियाँ सधवा स्त्रियों के सामने हीन और निम्न श्रेणी की न समझी जातीं तो परम्परा से विधवाओं की स्थिति और ही तरह होती । सुहाग के सामने

वैधव्य कंचन के सामने धूल है। सुहाग स्त्रियों के सुख सुषमा और शोभा का केन्द्र है और वैधव्य उनके पूर्व संचित पापों का फल है जो कर्म सिद्धान्त के अनुसार उनको सौभाग्यवती स्त्रियों से हीन और निम्न कोटि की माना ही जाना चाहिए। विधवा की स्थिति ही परमात्मा ने उसको उसके किये कठोर पापों का फल देने के लिये बनाई है। इसलिए विधवा और सधवा की स्थिति को एक करना शास्त्र-विरुद्ध लोक-विरुद्ध और समाज-विरुद्ध है।

(बैठ जाती है)

अध्यापिका—मैं सभानेत्री महोदया से दो शब्द बोलने की इजाजत चाहती हूँ।

सभानेत्री इजाजत है।

अध्यापिका—विधवा क्या है और सधवा क्या है और समाज में इन दोनों की स्थिति में परम्परा से क्यों इतना अन्तर चला आरहा है उसका बहुत सुनोता देवी ने अपने वक्तव्य में बहुत ही विस्तृत विवेचन कर दिया है किन्तु फिर भी पंडिता शीलवती देवी विधवाओं के सम्बन्ध में जो ऊट पटांग तथ्य हीन बातें कह रही हैं उनका प्रस्ताव के विरोध से कतई कोई सम्बन्ध नहीं है। पहले प्रस्ताव में हमने स्वयं ही इस बात को मंजूर किया है कि परम्परा से चली आरही विधवाओं की स्थिति शोचनीय है और उसमें अब सुधार होने की अत्यन्त आवश्यकता है। इस प्रस्ताव के पास करने और प्रचार करने का आशय ही यह है कि लोग विधवाओं की स्थिति को समझें और उसको सुधारें। पंडिता शीलवती देवी ने जो विधवाओं को सधवा स्त्रियों से इतना नीचा गिरा दिया है वह विवेक-बुद्धि में समाने की चीज नहीं है। क्या पंडिता शीलवती देवी जी इस प्रश्न का जबाब

देंगी कि विधवा स्त्रियाँ सधवा स्त्रियों से मनुष्य में पावे जा सकने वाले कौन से गुणों में कम ठहर सकती हैं जो विधवाओं को सधवाओं से हीन और नीच समझा जाय। सधवा भी एक स्त्री है, विधवा भी स्त्री है। सधवा भी इन्सान है. विधवा भी इन्सान है। फरक तो केवल इतना ही है कि एक का पति मौजूद है और एक का नहीं। पति का होना या न होना स्त्री के सदाचार संयम, शील सत्य, परोपकार, सेवा, विनम्रता, दया पवित्रता आदि किसी भी गुण से कोई सम्बन्ध नहीं रखता। बल्कि यह और है कि स्त्रियोचित गुणों का विधवा स्त्रियाँ जिस पूर्णता और तत्परता के साथ विकास कर सकती हैं उतना सधवा स्त्रियाँ नहीं कर सकतीं।

अगर कोई मनुष्य इसी आधार के ऊपर कि विधवा स्त्रियाँ एक संसारिक सुख से जो दूसरे शब्दों में आध्यात्मिक पतन कहा जा सकता है वञ्चित करदी गई हैं, विधवा स्त्रियों को ज़लील और तुच्छ समझता है तो यह उसकी क्षुद्र बुद्धि का नमूना है। किसी आदमी के ऊँचा और महान् होने में सांसारिक सुख और विलास सदा रोड़ा ही अटकाने वाले हैं, मदद पहुँचाने वाले नहीं। सधवा और विधवा स्त्रियों में अगर कोई मौलिक अन्तर है तो इतना ही है कि एक माता बन सकती है और एक नहीं। किन्तु इस अन्तर से एक को ऊँची और एक को नीची दृष्टि से देखने का मौका नहीं दिया जा सकता। इसके अलावा महिलाओं के जीवन में ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती जो उनमें कोई महत्त्व-पूर्ण भेद बताया जा सके। ऐसी हालत में पंडिता शीलवती देवी का विधवा होना पूर्व संचित पापों का फल और विधवाओं के लिये निरादृत और अपमानित होने का प्रमाण-पत्र देना क्या महत्त्व रखता है, यह वे ही जानें। यह तो हमने हमारी ही ग़ल्तियों से

विधवाओं की स्थिति को ऐसी दुःख और दीनता पूर्ण बना डाला है जो आज उनको इतनी यातनायें सहनी पड़ रही हैं और वे लोगों की निगाह में पद-दलित समझी जाती हैं। हमारा महिला-सम्मेलन आज अपना यह पहला प्रस्ताव पास कर समाज की इसी परम्परा गत विधवाओं की स्थिति में एक युग परिवर्तन करना चाहता है।

थोड़े दिनों में ही महिला-सम्मेलन संसार को दिखा देगा कि पहले विधवायें क्या थीं और अब क्या हैं ? विधवा और सधवा की स्थिति में सचमुच इससे ज्यादा अन्तर नहीं जितना एक विधुर और सपत्नीक पुरुष में। जो लोग सपत्नीक पुरुषों से विधुर पुरुषों के व्यक्तित्व में कोई ऊँच नीच का भेद मानने के लिये तैयार नहीं हैं उन्हें सधवा और विधवा स्त्रियों में भी इस भेद को भुला देना चाहिये। जो लोग यह मानते हैं कि किसी स्त्री को विधवा बना कर ईश्वर उसके किये कठोर पापों का फल देता है वे इंगलेण्ड, जापान, अमेरिका आदि देशों में ईश्वर की इस व्यवस्था को कैसे कायम रक्खेंगे जहाँ स्त्रियों में सधवापन और विधवापन कोई महत्त्व की चीज नहीं है। किसी स्त्री का पति न होना ही उस स्त्री को एक अक्षय और अनन्त विपदाओं की दयनीय अवस्था में डाल देता है यह हमारे भारतीय समाज में टिकने लायक चीज ही रही है जिसे विदेशी लोग सुन सुनकर हमारा उपहास करते हैं।

शीलवती देवी—(खड़ी होकर) अध्यापिका जी विधवाओं को धर्म और ईश्वरीय शासन के विरुद्ध एक विदेशी समाज का सब्ज बाग दिखा कर आप लोगों को धोखा दे रही हैं। बहनो ! धर्म डूबा जा रहा है ! महिला सम्मेलन धर्म-घातक संस्था है हे भगवान ! धर्म की रक्षा कर !

(कह कर चली जाती है।)

सभानेत्री—(खड़ी होकर) पंडिता शीलवती देवी ने आज की सभा में पहले प्रस्ताव के विरोध में जिस वाक् असंयम और उच्छृङ्खलता से काम लिया है उसके ऊपर सम्मेलन का ध्यान मैं उचित कार्रवाई के लिये आकर्षित करती हुई पहले प्रस्ताव के सम्बन्ध में फिर आप सब बहिनों की राय लेती हूँ। क्यों सबको मंजूर है ?

(मजूर है-मजूर है की आवाज आती है)

सभानेत्री—शीलवती देवी के विरोध का किसी ने समर्थन नहीं किया और स्वयं विरोध करने वाली मैदान छोड़कर भाग गई इसलिये उसका विरोध गिनती में नहीं आ सकता।

प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है।

दूसरा प्रस्ताव

प्रचलित पद्धति के अनुसार किसी स्त्री का पति मर जाने पर उसके पति की जायदाद या सम्पत्ति पर उसकी बेवा का अधिकार न होकर उसके भाइयों का या उसके निकटवर्त्ती कबीलेवालों का होता है। यह प्रथा विधवा स्त्रियों के हक़ में बहुत ही अनुचित है। महिला सम्मेलन इस प्रथा के साथ सख्त विरोध प्रकट करके सरकार का ध्यान आकर्षित करता हुआ सरकार से प्रार्थना करता है कि सम्बन्धित कानून में परिवर्तन किया जाय।"

प्रस्ताविका—विमला कुमारी
समर्थिका—कुमुद कुमारी
अनुमोदिका—सुलोचना देवी

समानेत्री - क्यों, आप लोगों को मंजूर है !

सब—मंजूर है; मंजूर है ।

सभानेत्री—प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है ।

तीसरा प्रस्ताव

"महिला सम्मेलन प्रस्ताव रखता है कि कन्याओं को विवाह के समय उनके पिता की तरफ़ से दान-दहेज में जो जेवर, रोकड़, नक़द आदि सम्पत्ति मिलती है उसपर एक मात्र अधिकार विवाहोपरान्त उनके ससुराल में भी उनका ही रहे। उनके ससुराल वालों में से कोई भी उनकी इच्छा के विरुद्ध उस सम्पत्ति का उपयोग न कर सके ताकि समय पड़ने पर वह सम्पत्ति उनके काम आ सके। प्रस्ताव की नकल गवर्नमेन्ट के पास भेजी जाकर गवर्नमेन्ट का ध्यान भी सम्बन्धित क़ानून में संशोधन करने के लिए आकर्षित किया जाय ।"

प्रस्ताविका—सुनीता देवी
समर्थिका—चम्पा कुमारी
अनुमोदिका—चमेली देवी

सभानेत्री—क्यों, आप लोगों को मंजूर है ?

सब - मंजूर है, मंजूर है ।

सभानेत्री—प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है ।

चौथा प्रस्ताव

"देखा जाता है कि विधवाओं के लिये लोग डाइन, कलंकिनी आदि बहुत ही भद्दे और गर्हित शब्दों का व्यवहार करते हैं । यह

प्रथा बहुत की निन्दनीय और अमानुषिक है। महिला सम्मेलन विधवाओं के साथ प्रयोग में लाये जाने वाले इस वचन व्यवहार को बहुत ही घृणा की दृष्टि से देखता है।"

प्रस्ताविका—चन्द्र कान्ता देवी
समर्थिका—शान्ता देवी
अनुमोदिका—स्नेहप्रभा देवी

सभानेत्री—क्यों, आप लोगों को मंजूर है?

सब—मंजूर है, मंजूर है।

सभानेत्री—प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है।

पांचवाँ प्रस्ताव

"जैसा कि हमारे समाज में रिवाज है—किसी विवाह सगाई आदि मगल के कार्यों में विधवाओं का सम्पर्क बुरा समझा जाता है तथा किसी यात्रा के लिये प्रस्थान आदि अवसरों पर उनका मुँह देखना भी अपशकुन समझा जाता है। महिला-सम्मेलन इस रिवाज को बहुत ही अवहेलना और तिरस्कार की निगाह से देखता है तथा साथ ही इसके साथ घोर विरोध प्रकट करता है।"

प्रस्ताविका—शारदा देवी
समर्थिका—शान्ति देवी
अनुमोदिका—विमला देवी

सभानेत्री—क्यों आप लोगों को मंजूर है?

सब—मंजूर है, मंजूर है।

सभानेत्री—प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास किया जाता है।

छठा प्रस्ताव

"देखा जाता है कि हमारे घरों में विधवा स्त्रियों की जो पारिवारिक स्थिति है वह बहुत ही दुःखपूर्ण और शोचनीय है। वे सदा ही घर के लोगों की दृष्टि में खटकती रहती हैं और उनके द्वारा तिरस्कृत और अपमानित होती रहती हैं। महिला-सम्मेलन घर वालों के इस रुख से घृणा प्रकट करता है और प्रस्ताव रखता है कि विधवाओं को परिवार में बहुत ही उच्च दृष्टि से देखा जाय तथा कुटुम्ब की शासन व्यवस्था का भार उन्हीं के ऊपर रहे ताकि वे अपने जीवन को सुख और गौरव पूर्वक व्यतीत कर सकें।"

प्रस्ताविका—सुशीला देवी
समर्थिका – संतोषकुमारी
अनुमोदिका—सावित्री देवी

सभानेत्री क्यों आप लोगों को मंजूर है ?

सब—मंजूर है, मंजूर है।

सभानेत्री—प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है।

सातवाँ प्रस्ताव

"महिला-सम्मेलन प्रस्ताव रखता है कि विधवा स्त्रियों को सामाजिक क्षेत्र मे काम करने की पूरी आजादी मिलनी चाहिये क्योंकि वे सामाजिक क्षेत्र में अपने जीवन का सदोपयोग भी कर सकती हैं और सधवा स्त्रियों की अपेक्षा समाज सुधार का

कार्य भी अधिक सफलता और संतोष के साथ सम्पन्न कर सकती हैं।"

प्रस्ताविका—सुलोचना देवी
समर्थिका—सुमित्रा देवी
अनुमोदिका—सुनीता देवी

सभानेत्री—क्यों आप लोगों को मंजूर है ?

सब—मंजूर है, मंजूर है।

सभानेत्री—प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है।

आठवाँ प्रस्ताव

"महिला-सम्मेलन प्रस्ताव करता है कि विधवाओं के लिये जगह जगह ऐसे आश्रम खोले जाने चाहिये जहाँ उनको पठन-पाठन, शिल्पकला आदि की पूर्ण शिक्षा मिल सके और वे आगे जाकर शिक्षिकायें, परिचारिकायें, आदि बन कर समाज सेवा के काम में भाग ले सकें।"

प्रस्ताविका—प्रेमलता देवी
समर्थिका—प्रभा देवी
अनुमोदिका—गीता देवी

सभानेत्री—क्यों आप लोगों को मंजूर है ?

सब—मंजूर है, मंजूर है।

सभानेत्री—प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है।

नवाँ प्रस्ताव

"महिला-सम्मेलन प्रस्ताव रखता है कि समाज के धनी मानी सेठों का एक ऐसे फण्ड की ओर ध्यान आकर्षित होना चाहिये जिसके बल पर विधवा बहिनों के हितों की रक्षा का प्रबन्ध बहुत ही समुचित रूप से किया जा सके। फण्ड इकट्ठा करने की व्यवस्था का भार फिलहाल श्री सुनीता देवी और अध्यापिका सुमित्रा देवी को सौंपा जावे।"

प्रस्ताविका—प्रभा देवी
समर्थिका—चन्द्रप्रभा देवी
अनुमोदिका—सुलोचना देवी

सभानेत्री—क्यों आप लोगों को यह मंजूर है?

सब—मंजूर है, मंजूर है।

सभा नेत्री—प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है।

दसवाँ प्रस्ताव

"महिल-सम्मेलन प्रस्ताव रखता है कि एक बड़े पैमाने पर शीघ्र से शीघ्र एक ऐसा महिला-उद्योग-मन्दिर स्थापित किया जाना चाहिये जहाँ सीने, पिरोने, कातने, कसीदा काढ़ने, मोजे, बनियान, गलीचे, शतरंज आदि तैयार करने की व्यवस्था की जा सके और समाज की विधवा बहिनों को स्वतन्त्र आजीविका प्राप्त करने का अवकाश मिल सके।"

प्रस्ताविका—चन्द्रप्रभा देवी

समर्थिका—सुनन्दा देवी

अनुमोदिका – कृष्णा कुमारी

सभानेत्री—क्यों आप लोगों को मंजूर है ?

सब —मंजूर है मंजूर है।

सभानेत्री—प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया जाता है।

सभानेत्री—अब सभा का कार्य क़रीब, क़रीब समाप्त हो चुका है। मैं मंत्रिणी प्रेमलता देवी के कार्य की जितनी प्रशसा करूँ थोड़ी है, जिन्होंने इस थोड़े वर्षों के समय में ही जयपुर समाज की विधवाओं की स्थिति में आशातीत सुधार कर दिया है। आज हजारों की संख्या में हमारे सब प्रस्ताव केवल थोड़े से विरोध के साथ सर्व सम्मति से पास हो गये, यह इस बात को जाहिर करता है कि जयपुर का महिला समाज विधवाओं की स्थिति में एक महान् क्रान्ति के लिये तैयार है। सम्मेलन की रिपोर्ट सुनने से पता लगा कि विधवाश्रम का कार्य सञ्चालिका प्रेमलता देवी बहुत ही सफलता के साथ चला रही हैं। मै उम्मीद करती हूँ कि भविष्य में यह सम्मेलन और आश्रम और भी अधिकाधिक उन्नति करते हुए चले जायँगे। बस अब समय अधिक हो गया है, इसलिये मैं आप लोगों को और अधिक कष्ट नहीं देना चाहती और अब सभा का कार्य समाप्त करती हूँ।

प्रेमलता—मैं श्रीमती सभानेत्री महोदया को अनेकानेक धन्य-वाद देती हूँ, जिन्होंने इलाहाबाद से यहाँ आकर हमारे अधिवेशन की शोभा बढ़ाई। आपका परिचय आप लोगों को पहले सुना ही दिया गया है। मैं जो आज आप लोगों की सेवा के क़ाबिल हुई हूँ वह सब आपही की कृपा का फल है। मेरा सौभाग्य था जो त्रिवेणी

के पास से मुझे डबल निमोनिया की दशा में उठाकर ले गये और मैं इनके आश्रम में करीब दस वर्ष रह कर इस योग्य हो सकी।

इस अवसर पर मैं मेरी बहिन प्रभा देवी अध्यापिका सुमित्रा देवी, बहिन सुनीता देवी को भी धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकती जिन्होंने अधिवेशन का अपने जुम्मे का काम तो किया ही पर मेरे काम में भी बड़ी दिलचस्पी के साथ सहयोग दिया।

ड्राप-सीन

समाप्त।

उत्सर्ग

(सन् १६४२ ई०)

पात्र-परिचय

१—सुधा—नौरंगीलालजी के छोटे लड़के की नवीन शिक्षित बहू और पारसलालजी की बड़ी लड़की।
२—सुधा की सास—नौरंगीलालजी की पत्नी।
३—मालती—सुधा की जिठानी।
३—विजया—सुधा की बड़ी ननद।
४—वीणा—सुधा की मँझली ननद।
५—प्रेम—सुधा की छोटी ननद
७—अरण्यबाला—सुधा की प्रधान सहेली।
८—शशि—सुधा की बहन।
९ पुष्पा—सुधा की दूसरी बहन।
१०—सुधा की माँ—पारसलालजी की बहू।
११—श्यामा राणी—स्थानीय पाठशाला की अध्यापिका।
१२—रमादेवी—सुधा की दूसरी सहेली।
१३—सुनीता देवी एक देश-सेविका।
१४—पाँची—नौरंगीलालजी के घर की नौकरानी।
१५—फूलाँ—सुधा के पीहर की नौकरानी।
१६—सौदागरनी—एक ईरानी सौदा बेचने वालीमहिला।
१७—मातृभाषा—सुधा की बड़ी ननद विजया।

अन्य नौकरानियाँ, सेठानी, धोबिन, प्राचीन स्त्रियाँ, किसान की बेटी, मालिन, नर्स, सुनारिन आदि।

——

भूमिका-परिचय

इस नाटक का सर्व प्रथम अभिनय श्री शारदा देवी भार्गवा बी० ए० की अध्यक्षता में किये गये श्री शारदा-सहेली संघ, जयपुर के सप्तम वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर तारीख ८ व ९ दिसम्बर सन् १९४३ ई० को जयपुर-श्री दारोगाजी के जैन मन्दिर में सहेली संघ की सदस्याओं व पद्मावती कन्या-पाठशाला की बालिकाओं द्वारा हुआ। भूमिका व कार्यकर्ताओं का परिचय निम्न तरह से है—

कार्यकर्ताओं का परिचय

लेखक व निर्देशक—श्रीमान् पं० कैलाशचन्द्रजी जैन शास्त्री।
व्यवस्थापक—श्रीमान् बाबू मोहनलालजी सोनी।
संगीत निर्देशक व स्थल प्रबंधक } श्रीमान् मास्टर स्वरूपनारायणजी शर्मा।
वेश-निर्देशिका—श्रीमती त्रिशला देवी पाटनी बी० एस० सी०।

भूमिका-परिचय

१—सुधा—श्री चन्द्रकला कुमारी प्रभाकर धर्मपत्नी श्री व कमल चन्द्रजी जैना एम० एस० सी०
२—सुधा की सास—कुमारी शान्ता सुपुत्री श्री केशरलालजी
३—मालती, ३—श्यामाराणी } कुमारी शान्ति 'विदुषी' सुपुत्री श्रीराजमलजी।
५—विजया, ६—सौदागरनी, ७—मातृभाषा } कुमारी इन्दिरा सुपुत्री श्री वल्लभरायजी औदिच्य।

८—वीणा—कुमारी सुशीला सुपुत्री श्री पुरुषोत्तमलाल जी
९—प्रेम—कुमारी सत्यवती सुपुत्री श्री केशरलालजी कटारिया।
१०—अरण्यबाला—कुमारी विमला विदुषी (आनर्स),
सुपुत्री श्री बाबू कपूरचन्द्रजी पाटनी।

११—शशि—तेजकुंवर काला सुपुत्री श्री मोहनलालजी काला।
१२—पुष्पा—सुलोचनाकुमारी सुपौत्री श्री दारोगा मोतीलालजी
१३—सुधा की माँ—कुमारी कान्ता सुपुत्री श्री बाबू हरिश्चन्द्रजी
१४—रमा देवी—कुमारी कंचन विदुषी सुपुत्री श्री बाबू मोहनलालजी
१५—सुनीता देवी—श्री छुट्टनकुमारी विदुषी धर्मपत्नी श्रीदुलीचन्द्रजी
१६—पाँची—कुमारी सुशीला सुपौत्री श्री रायसाहब घेवरचन्द्रजी
१७—फूलाँ—कुमारी सुभद्रा सुपुत्री श्री केशरलालजी कटारिया।

अन्य नौकरानियाँ, प्राचीन स्त्रियाँ, धोबिन आदि।

कुमारी क्षमावती गोधा, कमला गंगवाल, कंचन गोधा, शान्ति विन्दायक्या, दुर्गा वैश्य, कमला डागा, निर्मला पाटनी, शान्ति तोतूका, चमेली गोधा, सुशीला काशलीवाल, कंचन पाटनी, मुन्ना पाटणी, लच्छम काशलीवाल।

प्रवेश।

स्थान—एक छोटा सा साफ़ सुथरा कमरा।

(कमरे के बीचों बीच एक टेबिल, उसके ऊपर एक चान्दी का सिंहासन। सिंहासन पर एक दिव्य मूर्ति किसी देवी की तस्वीर है। मालती अपनी दो सहेलियों सहित आती है और वह उस तस्वीर को बहुत आदर के साथ प्रणाम करती है।)

पहली सहेली - क्यों मालती जिस तस्वीर को तुमने नमस्कार किया वह कौन है ? क्या तुम उसका कुछ परिचय दे सकती हो ?

मालती—बहन प्रभा ! यह तस्वीर किसी साधारण स्त्री की नहीं किन्तु एक देवी की है।

पहली सहेली—हां यह तो मैं पहले से ही समझ गई कि जिस तस्वीर की तुम इतनी श्रद्धा के साथ पूजा कर रही हो वह कोई असाधारण स्त्री रत्न ही होना चाहिये।

मालती—हां बहन, यह वास्तव में एक असाधारण स्त्री रत्न ही है। एक देवी में जो गुण होने चाहिये वे सब गुण इसमें मौजूद थे।

दूसरी सहेली—तो ऐसी देवी का परिचय मालती बहन, हमें भी तो सुनाओ।

पहली सहेली—हां जरूर सुनाओ मालती बहन ! क्योंकि ऐसी देवियों का चरित्र श्रवण करने से हमारा अन्तरात्मा पवित्र होता है ।

मालती—अगर तुम यही चाहती हो तो सुनाती हूँ बहनो, ध्यान से सुनना और साथ ही अपने कलेजे को भी मजबूत रखना।

पहली सहेली—क्यों कलेजे को मजबूत रखने की इसमें क्या बात है ?

मालती—क्योंकि इस देवी का अंतिम जीवन जितना ही बलिदान पूर्ण है उतनाही दुःख और दर्द से भरा हुआ है । बहिनो, इसका जीवन चरित्र सचमुच हमारे गृहस्थ जीवन के नारकीय दुःखों का प्रतिबिम्ब है और उसके जीवन की दर्द भरी कहानी का मुख्य आधार मैं ही हूँ जो अपने पापों का बोझ हलका करने के लिये रोज इस देवी की पूजा करती हूँ। लो हम सब यहां बैठें और इस देवी की जीवन गाथा से अपने अन्तरात्मा को उज्ज्वल करें ।

पटाक्षेप ।

———

❀ उत्सर्ग ❀

पहला-अंक

पहला दृश्य।

स्थान — पारसलाल जी का घर—बड़ी लड़की सुधा का पढ़ने-लिखने का कमरा

(कमरे में टेबिल कुर्सी, एक अलमारी आदि यथा स्थान रक्खे हैं। सुधा अपने पढ़ने-लिखने के सामान को व्यवस्था से रखती हुई हाथ में एक पुस्तक लेकर पुस्तक को लक्ष्य करके एक गायन गाती है)

गायन

चल चल सजनी उस देश।
वैर भाव का नाम नहीं हो, मन में माया मोह नहीं हो।
मद मत्सर का भाव नहीं हो, कभी न व्यापे क्लेश ॥१॥
जहाँ हम तुम दोनों वास करें, नर नारी नहीं कोइ विघ्न करे।
तुम पढ़ो मुझे मैं पढ़ूं तुम्हें, लें आपस में सन्देश ॥२॥

अपना घर बार निराला हो, निर्बाध न जिसके ताला हो ।
चोरों न लुटेरों का डर हो, पहनें अति उज्ज्वल वेश ॥३॥
टेबिल और कुर्सी सजी रहे, कागज़ और स्याही पड़ी रहे ।
मैं लिखा करूँ तेरी शिक्षा फिर फैलाऊँ हर देश ॥४॥

(गायन गाकर सुधा कुर्सी पर बैठ जाती है और किताब पढ़ने लग जाती है ।)

(एक बोझा उठाने वाली नौकरानी के साथ जिसके माथे पर एक संदूक है एक ईरानी सौदागरनी का प्रवेश)

सौदागरनी—मिस सुधा हैं क्या ?

सुधा—(बाहर की ओर देखकर) कौन ?

सौदा०—यह तो मैं हूँ—एक सौदा बेचने वाली औरत

सुधा—(उठकर उसके पास आ जाती है) कहो क्या काम है ?

सौदा०—(नौकरानी के माथे पर से संदूक उतारती हुई) मैंने मिसेज चटर्जी से आपकी बहुत तारीफ़ सुनी है। अप-टु-डेट डिज़ाइन और ख़ूब सूरती की आप ख़ूब क़द्रदान हैं–इसलिए एक उम्मीद लेकर आपके पास हाज़िर हुई हूँ ।

सुधा—ओ, तुम कोई विदेशी सौदागरनी मालूम होती हो ।

सौदा०—जी हां, मेरा वतन पेशावर से १२५ मील दूर है ।

सुधा—लेकिन तुम्हारी जात की स्त्रियां तो अक्सर चाकू छुरी बेचने का काम करती हैं ।

सौदा०–जी हाँ, लेकिन बाई साहब, आज कल उस सौदे में कुछ बचता नहीं है और लोग भी हमारे अक्खड़पन से सम्हल गये हैं, इसलिए मैं कोई चार साल से यही काम करती हूँ ।

सुधा—क्या क्या चीजें बेचती हो तुम ?

सौदा--बेचने को तो मैं वैसे लेडीज की शौक और पसन्द का सभी सामान बेचती हूँ पर अभी उनमें से दस पांच चीजें आपकी पसन्द के लिए लेती आई हूँ। (सामान दिखाती है) यह विलायती लवण्डर की शीशी है। लवण्डर की खुशबू और पेकिंग की खूबसूरती को मुलाहिज़ा कीजिये, मैं दर्जनों शीशियां लाई थी। अब सिर्फ दो चार बची हैं ।

सुधा—क्या कीमत है इसकी ?

सौदा०--कीमत क्या पूछियेगा साहब। आप तो सामान पसन्द करते जाइये। (सुधा शीशियों को अपनी तरफ उठा कर रख लेती है) एक से एक तोहफ़ा लाई हूँ। ये दो किस्म की क्रीमे हैं। इसे दिन को लगाइये-चेहरा सूरज की नाईं चमकने लगेगा, इसे रात को लगाइये चेहरा चाँद सा दिपने लगेगा। कील दाग, झांई मुँहासे ये तो चेहरे पर दो ही चार दिनों के इस्तेमाल से इस तरह काफ़ूर हो जायेंगे जैसे तपे हुए तवे पर से पानी की बूंद काफ़ूर हो जाती है। (सुधा उठाकर रख लेती है)

(सुधा की छोटी बहन शशि का प्रवेश)

शशि –जीजी क्या खरीद रही हो ? मैं भी माथे की टिकुलिया वालों की रंगीन क्लिपें और कानों के इयरिंग लूँगी।

सुधा--हाँ हाँ देखोना जो तुम्हारा जी चाहे पसन्द करो ।

शशि—(सौदागरनी से) तुम्हारे पास क्लिपें हैं ?

सौदा०—हाँ हाँ मेरे पास सब कुछ है, पहले रानी साहिबा को पसन्द करने दो। यह देखिए-ठेठ लन्दन की बनी हेयर-क्रीम इतनी ठंडी है किबालों में जरा लगाइये तो मालूम होता है—बरफ का

टुकड़ा रख दिया गया है। लगाते ही महक ऐसी फूट पड़ती है कि लगाने वाले की तबियत का तो पूछना ही क्या-पास पड़ोस वालों की तबियत भी महक से गूंज उठे। (सुधा उठा कर रख लेती है)

शशि—जीजी एक शीशी मैं भी लूँगी।

सुधा—यह तुम्हारे मतलब की चीज नहीं है शशि।

शशि--क्यों नहीं है जीजी ? मेरे क्लास वाली पद्मा के पास मैंने एक ऐसी शीशी देखी है।

सुधा--हाँ हाँ तो जब कभी तुम्हें जरूरत पड़े इसी में से लगा लेना।

शशि—नहीं मैं तो एक शीशी अलग से रक्खूंगी।

सौदा०--लो न बिटिया रानी! एक शीशी तुम भी ले रक्खो।

सुधा-- अम्माजी तुम्हारे पास देखेंगी तो लड़ेंगी। कहेंगी इतनी भारी कीमत की शीशी क्यों खरीदी है ?

सौदा०--साहब कीमत की ऐसी क्या बात है-अम्माजी लड़े तो कह दीजियो बिटिया-एक सौदागरनी मुझे इनाम में दे गई है।

सुधा—नहीं साहब व्यापार व्यवसाय में यह इनाम और भेंट कैसे चल सकती है। कीमत तो देनी ही पड़ेगी। खैर रखलो अम्मा को बताइयो नहीं।

सौदा०—यह जेस्मीन का तेल! निहायत खुशबूदार! एक ही आला दरजे की चीज है।

सुधा—दो शीशियाँ देदो। क्या क्या कीमत होगी एक एक की ?

सौदा०—कौन जवाहिरात है जो आप कीमत पूछ रही हैं। यह लीजिये चार शीशियां। यह तो रात दिन काम में आने वाली चीज है। दो से क्या होगा।

(सुधा उठा कर रख लेती है)

सुधा—कोई अच्छासा पाउडर भी है ?

सौदा०—हाँ हाँ यह देखिये परिस का बना। आज तो ऐसी चीज का मिलना भी कठिन है। चहेरे पर लगाते ही नूर बरस पड़ता है और किसी किस्म की फुन्सी या फूटनी तो पैदा ही नहीं होने देता।

सुधा—दो डिब्बी दे दीजिये।

(सौदागरनी दो डिब्बे देती है और सुधा उठाकर रख लेती है।)

सौदा०—यह देखिये दस्ती रूमालों के कुछ नमूने! एक से एक बढ़िया डिजाइन है। हाथ में जरा यों फैला कर रखिए-मालूम होगा कोई खूबसूरत गुलदस्ता रक्खा है।

सुधा—आधा दर्जन दीजिए।

शशि—एक रुमाल मैं भी लूंगी।

सुधा—एक रुमाल इसे भी दीजिए।

(सुधा की सहेली रमा का प्रवेश)

रमा—(सुधा से) ओः, तुम अभी तक तैयार नहीं हुई ?

सुधा—तुम आ भी गई! (हाथ की घड़ी देखकर) ओः साढ़े सात हो चुके।

मैं जरा यह सामान खरीदने में लग गई—(सौदागरनी से) अच्छा, देखो अब मुझे जानाहै। तुम्हारी कीमत जोड़ कर जल्दी बताओ।

सौदा०—अभी तो मेरे पास बहुत सामान पड़ा है। आप अभी चौथाया भी नहीं देख चुकीं।

सुधा—फिर कभी आना। अभी तो मैं किसी जरूरी पार्टी में जा रही हूँ।

शशि—अभी मुझे तो कुछ दिखाया ही नहीं।

सुधा—(सौदागरनी से) अच्छा जी इसे जरा टिकुलिया की डिब्बी और क्लिपें बता दो।

शशि—नहीं इयरिंग भी लूंगी।

सुधा - इयरिंग पीछे लेना।

सौदा०—ये क्लिपें लीजिए। (सुधा को देती हुई)

सुधा—शशि को बताओ। मैं जरा ये चीजें रख देती हूँ।

सौदा० – ये पसन्द है बिटिया रानी तुम्हें ?

शशि—यह बड़ी वाली और तरह की नहीं है क्या ?

सौदा०—हाँ है क्यों नहीं, ये देखो ये पाँच डिजाइन हैं। तुम्हारा जी चाहे वही पसन्द करो। (दिखाता है).

शशि—अच्छा आधा दर्जन यह बड़ी वाली और आधा दर्जन छोटी वालीं में से दो। और टिकुलिया ?—

रमा—अरे टिकुलिया का क्या करोगी ? आज कल तो कोई टिकुलिया लगाता ही नहीं।

शशि—मेरे क्लास वाली पद्मा जो लगाती है।

रमा –सुधा, जल्दी करो भाई! देर हो जायगी तो और सहेलियां और अरण्यवाला क्या कहेगी ?

सुधा—लो मैं तो यह तैयार हुई। हाँ तुम्हारे सब दाम कितने हुए सौदागरनी ?

सौदा० —यह टिकुलिया और इयरिंग लो बिटिया रानी।

शशि—टिकुलिया की दो डिब्बी दे दो और इयरिंग इनमें से कौनसा लूँ रमा जीजी ?

रमा—ये छोटे वाले लेलो।

सौदा०—(सुधा की ओर लक्ष्य करके) हाँ मैं अलग अलग बताती हूँ। आप एक काग़ज़ पर जोड़िये।

सुधा—(हाथ में क़ागज़ लेकर) हाँ बोलो मैं जोड़ती हूँ।

सौदा०—लवण्डर की शीशी दो ७ रु०।

सुधा—(कुछ रुक कर) सात रुपये! क्यों रमा, कीमत कुछ ज्यादा मालूम होती है।

सौदा०—(रमासे) बहनजी, आजकल विलायती चीज़ों का मिलना ही मुश्किल हो रहा है। आप किसी बड़ी दूकान से खरीदें तो मालूम हो कि इन चीज़ों का क्या से क्या भाव हो गया है। यह तो मेरे पास कुछ पहले का सामान था इस लिए मैं इतने सस्ते दामों में दे रही हूँ।

रमा—(सुधासे) कीमत तो ठीक ही मालूम होती है।

सुधा—खैर हाँ आगे।

सौदा०—क्रीम की डिबिया २, ५) रु०, हेयर क्रीम २ शीशी, ७) रु०, जेस्मीन का तेल ४ शीशी, ८) रु०, पाउडर के डिब्बे २, ३) रु०, दस्ती रुमाल ७, १०॥) रु०, आधा दर्जन छोटी क्लिपें, ३॥) रु०, आधा दर्जन बड़ी क्लिपें ३) रु०, दो डिब्बे टिकुलिया, १) रु०, इयरिंग की जोड़ी, १०) रु०, जोड़िये कुल कितना हुआ।

सुधा—(जोड़ कर) कुल ४६) रु०।

सौदा०—बाईजी ठीक से जोड़िये कुछ ज्यादा होंगे।

सुधा—अच्छा फिर से जोड़ती हूँ। (दुबारा जोड़कर) ओः मैं जोड़ने में ग़ल्ती कर गई। कुल ५६ रु०। शशि, इयरिंग की जोड़ी का बहुत दाम है वापिस कर दो।

शशि—ऊं हूं वापिस नहीं करूंगी।

सुधा--देखो इतनी कीमती चीज़ है। अम्माजी से पूछे बिना मैं कैसे ले सकती हूँ। मैं तुम्हें मेरी वाली छोटी जोड़ी पहनने को दे दूँगी।

शशि--अच्छा लाओ अभी दो।

सुधा--पार्टी से लौट कर बाक्स में से निकाल दूंगी।

रमा--हाँ दे दो शशि देखो डिज़ाइन भी कोई सुन्दर नहीं है।

शशि--लेकिन मेरे क्लास वाली पद्मा के पास भी तो ऐसे डिज़ाइन की जोड़ी है। डिज़ाइन अच्छा नहीं होता तो वह क्यों मोल लेती।

रता--ले लेने दो सुधा बेचारी की तबियत कुन्द हो जायगी। सौदागरनी, इसकी कीमत अलबत्ता कुछ ज्यादा है। कुछ कम करो।

सौदा०--तो मैं क्या आपसे अड़ती हूँ। आपका जी चाहे दीजिए। यह तो मेरी बिटिया रानी के लिए है।

सुधा--अच्छा आठ रुपये रक्खो, क्यों रमा ?

रमा--हाँ ठीक है।

सौदा०--तो कुल ५६ में से दो कम हुए तो सब ५४ रु० हो गये।

सुधा--लो यह ५४ रु०। देखो शशि ये चीज़ें उठा कर रख लो। पुष्पा को मत बताइयो वरना वह मूँड़ फ़ोड़ेगी।

शशि--अच्छा अच्छा नहीं बताऊँगी। मैं उसको एक भी चीज़ नहीं दूंगी।

(शशि क्लिपें आदि चीज़ों को कभी पहन कर, कभी उठा कर देखती है। क्रीम माथे पर लगाती है।)

सौदा०--लो बिटिया रानी यह बांसुरी मैं तुम्हें मेरी तरफ़ से इनाम में देती हूँ। (शाश बाँसुरी ले लेती है)

(सौदागरनी अपना सामान समेट कर नौकरानी के माथे पर रखती है और दोनों बाहर आजाती हैं।)

सोदा०--देखो जी मैं तुम्हारा नाम भूल गई।

नौकरानी--नर्मदा।

सौदागरनी--नर्मदा।

नौकरानी--हाँ कहिये।

सौदागरनी--आज तो सुबह उठते ही किसी भले आदमी का मुँह देखा है।

नौकरानी--कहीं शीशा ही तो नहीं देख लिया है।

सौदा०--बात बनाने में तो तुम खूब चतुर हो नर्मदा।

नौक०--आखिर रहती तो मैं भी आप ही की जैसी चतुर स्त्रियों की सोहबत में न।

सौदा०--हाँ तो देखा तुमने आज कितना अच्छा ग्राहक हाथ लगा है। एक के चार वसूल हुए हैं, नर्मदा।

नौक०--तक़दीर की बात है साहब,

सौदा० अच्छा आज तुम्हें भी आठ आनेकी जगह एक रुपया दिया जायगा।

नौक०--भगवान, आपको रोज ऐसे ही ग्राहक दे।

(दोनों चली जाती है)

(शशि सौदागरनी से खरीदी हुई चीजों को देख देख खुश हो रही है और सौदागरनी की दी हुई बाँसुरी को बजाती हुई एक गाना गाती है)

गायन

बांसुरिया रे बांसुरिया, बजरी बजरी बांसुरिया।
नहीं बिगड़ियो मन तन्त्री से नेक न डरियो हां ॥
मैं गाती रहूँ तू बजती रहे, मेरे मनके तार मिलाती रहे
आवाज़ करें हम तुम दोनों आबाद हमारा हिन्द रहे ॥
बहती रहे चहुँ दिशि धारा मधुर प्रेमकी बांसुरिया
बजरी बांसुरिया ॥१॥

आज अनोखा गीत सुनाना, चुपके चुपके बजते जाना
चली जायँ एक दूर नगरिया, बजरी बांसुरिया ॥२॥

(शशिकान्ता की छोटी बहन पुष्पकान्ता का प्रवेश)

(शशिकान्ता पुष्पा को देख कर सौदागरनी से खरीदी हुई चीज़ों को छिपाने की कोशिश करती है)

पुष्पा--जीजी लो आओ मन्दिर चलें।

शशि--तुम जाओ मैं तो अभी ठहर कर जाऊँगी।

पुष्पा--देखा, हमने आज भाभी से कैसा बढ़ियां रूमाल लिया है और दादा का कैसा बढ़िया तेल बालों में लगाया है।

शशि--देखें (सूँघ कर नाक भौं सिकोड़ती है) ऊंहूं बड़ा बदबू देता है।

पुष्पा—बड़ी नाक भौं सिकोड़ने वाली आयी। तुम्हारे माथे में जैसे बड़ी महक उड़ रही है। लगाती तो वही खोपरे का तेल ही ना।

शशि—ले सूंघ मेरे माथे में।

पुष्पा—(सूंघकर) अरे यह ऐसा तेल कहाँ से लाई ! ऐसा तेल तो भाभी और दादा के पास भी नहीं है।

शशि—अरे तू मेरी क्या होड़ करेगी। बोल महक मेरे माथे में उड़ रही है या तेरे में। तू ही बता यह कौनसा तेल है !

पुष्पा—(सोच में पड़ जाती है)

शशि—अरे सोच में क्या पड़ गई यह बालों की क्रीम है। अपने क्लास वाली पद्मा रोज लगा कर आती है न।

पुष्पा—वही है !

शशि—हां वही है !

पुष्पा—अरे तू कल पद्मा के घर गई थी उसी के यहाँ से चुराकर लगा आई दीखती है। मैं कहूँगीं आज अम्मा को !

शशि—मैंने चुराकर काहे को लगाया।

पुष्पा—तो माँग कर लगाया होगा। जैसे अपने घर में तेल है ही नहीं, दूसरों के पास तेल भी माँगती फिरती है।

शशि—मैं क्यों तेल चुरा कर और माँग कर लगाने लगी।

पुष्पा—तो नहीं बता तेरे पास कहाँ से आई बालों की क्रीम ?

शशि—तुझे क्या इससे ? कहीं से भी आई हो।

पुष्पा—बस, पकड़ी गई न चोरी !

शशि—(मुँह बनाकर) बस पकड़ी गई न चोरी ! चोरी तो तू करती होगी।

पुष्पा—तू साहूकार है तो बता, तुम्हारे पास क्रीम कहाँ से आई ?

शशि—बताऊँ !

पुष्पा—बता ।

शशि—देख बताऊँ ।

पुष्पा—हां बता !

शशि—देख बताऊँ

पुष्पा—हां बता ! बता !

शशि—(पीछे से एक शीशी उठा कर) देख !

पुष्पा—जीजी बता तुम्हारे पास यह सब कहाँ से आया ! पद्मा के पास से लाई क्या !

शशि—पद्मा के पास से मैं क्यों लाने लगी ? मैं कोई मुंगती हूँ क्या जो दूसरे से माँगती फिरूँ । मेरी जीजी ने मुझे दिलाया है । अभी अभी एक सौदागरनी से सारा सामान ख़रीदा है । कोई ५०) रु० का सामान तो जीजी ने अपने लिये ख़रीदा है और यह सब मुझे दिलाया है !

पुष्पा—अरे हाँ अभी एक सौदागरनी अपने दरवाजे से निकली थी ।

शशि—हाँ हाँ वही । अब समझी तू ।

पुष्पा—तो-जीजी-मुझे भी तो क्लिपं और टिकुलिया दे । आधी तू रखले और आधी मुझे देदे । क्रीम और रूमाल में से एक चीज़ तू रखले और एक चीज मुझे देदे ।

शशि—वाह, तू ख़ूब हिस्सा बटाने वाली आई-मैंने तो रो-रूठ लड़-झगड़ कर-जीजी से यह सब ख़रीद वाया और तू सीधेर ही बँटवारा लेने के लिए तैयार होगई ।

पुष्पा—और नहीं तो, जो चीज घर में आवे आधी-तुम्हारी और आधी मेरी (पुष्पा उनमें से कुछ चीज़ें उठा लेती है)

शशि—(छीन कर) वाह, यह कैसे हो सकता है। मैं मेरी चीजें तुम्हें कैसे देदूँ।

पुष्पा—तुमने भी तो उस रोज मेरी चूडियों मेसे आधी पांती बँटवाई थीन।

शशि—तो वे तो तुमको पिताजी ने दिलवाई थीं।

पुष्पा—सो क्या हुआ ? पिताजी दिलाओ चाहे जीजी बाई दिलाओ, पैसे तो एक ही घर में से लगते हैं न। (लेने की कोशिश करती है)

शशि—बस रहने दीजिये। मैं इन में से एक भी चीज़ नही दे सकती।

पुष्पा—अच्छा मैं भी देख लूँगी ! आज ही स्कूल में मास्टरनी जी से कह कर तुम्हारी पिटाई करवाऊँगी।

शशि—जा जा कहदेना बस

पुष्पा—देखना मैं जरूर कहूँगी और तुम्हारे मार पडवाऊँगी।

शशि—तुम्हें चीजें नहीं मिलीं न इसीसे।

पुष्पा—यह विलायती फैशन हमको कभी न भाये। ✓
क्रीम टिकुलिया क्लिपें विदेशी नहीं सुहाये ।।१।।

शशि—बाहर बगुला भक्त हिया अन्दर ललचावे।
मन माँगे पर मिले नहीं दिल फट फट जावे ।।२।।

पुष्पा—वेश स्वदेशी लगे हमें अति सुन्दर प्यारा।
भारत देश बना हर माल अतीव दुलारा ।।३।।

शशि—जाओ जाओ नहीं बनाओ यह सब थोथी बातें।
क्यों अंगूर बताती खट्टे फिर रोओगी रातें ।।४।।

[पुष्पा एक गायन गाती है]

गायन

तुमको विलायत की चीजें सुहाये ।
हमको ना भाती तुम्हारी बतियाँ,
तुमको जो बापू की सीख न भाये ॥
फैशन में पड़ कर जो सुख को मनाये,
रुपयों की होली जलाये दिन रतियां ॥१॥
लंदन और पेरिस की चीजें तुम्हारी,
भारत हमारा और दौलत हमारी ।
फैशन को समझो तुम आंखों का प्यारा,
लन्दन में जाता है पैसा हमारा ।
हमरे लिए वह बेड़ी की कड़ियां ॥२॥

[गायन समाप्त होते २ पुष्पा की माँ का प्रवेश]

माँ—अरे यह क्या ऊधम मचाया है ?

पुष्पा—अम्मा, अम्मा देख बड़ी जीजी ने क्या २ सामान खरीदा है और यह चीजें इसको दिलाई है। माँ यह जीजी वहुत अनाप शनाप खर्च करती है।

माँ—और यह सब सामान खरीद कर लाया कौन ?

पुष्पा—यह जीजी कहती है कि एक सौदागरनी से खरीदा है वह कोई पाँच मिनिट पहले ही वह हमारे मकान से गई है।

माँ—ला शशि, देखें क्या २ सामान खरीदा है।

शशि—ऊँहूँ नहीं बताऊँगी।

माँ—ला बताती है या नहीं ?

शशि—तो जीजी ने मना करदिया है कि अम्माको मत बताइयो।

माँ—वह बड़ी मना करने वाली आई! मैं भी देखूँगी जब समुराल में जावेगी तो उसकी यह खर्चीली आदत किस तरह चलेगी। वह नौरंगी लालजी की बहू ऐसी कण्टक और तेज़ मिज़ाज की है कि यह तूफान देख लेगी तो बिना चाकू छुरी के ही काटने को दौड़ेगी। यहाँ तो बाप की बदौलत मनमाना ख़रीदती है, मनमाना बरतती है। आनेदो उसको आज। कहाँ गई है वह अभी ?

शशि—रमा जीजी के साथ गई है।

माँ—बस! उसको और क्या चाहिए ? ऐसी ही तो यह और ऐसी ही उसकी सहेलियाँ। गई होगी किसी क्लब या पार्टी में। थोड़े दिनों में परणी पाथी बहू बनजावेगी। अब तो यह सैलानी पना छोड़ दे। घर के काम काज में मन लगावे, घर गृहस्थी का सलीका सीखे! मेरा बस चले तो मैं उसके कान ऐंठ कर मैं उससे यह सब करालूं पर करूँ क्या ? तुम्हारे पिता जी ही उसे सर चढ़ाये रखते हैं। यह उनके लाड़ प्यार से ही तो इतनी बेकाबू की हो रही है।

[एक नौकरानी का प्रवेश]

नौकरानी—सेठाणी जी मुनीमजी के यहाँ सेबड़ी वीनणी जी आई हैं, आप को बुला रही है।

सेठानी—कौन निहालजी की बहू क्या।

नौकरानी—हाँ हाँ वही

सेठानी—अच्छा चलो (दोनों चली जाती हैं)

शशि—लो अब तो लेली न बालों की क्रीम !

पुष्पा—आने दो अभी बड़ी जीजी को अम्माजी से तुम्हारा और उसका सब सामान नहीं छिनवालूँ तो।

पटाक्षेप

दूसरा दृश्य

स्थान—रास्ता

(नौरंगीलाल जी की मँझली लड़की वीणा, छोटी लड़की प्रेम का घर से एक अन्य लड़की चमेली के साथ गाते हुए पाठशाला को जाना)

गायन

आज मेरे भैया की मंगनी आई

आओ आओ सजनी आओ गीत खुशी के गाओ
मन हरसाओ हिल मिल गाओ सुन्दर साज सजाओ
मन में हैं खुशियाँ समाई ॥

भाभी है मेरी सुन्दर सुशिक्षित विदुषी नार सुजान
कभी न ग़लती करूँ काम में सीख उसी की मान
अब कभी न करूँ बुराई

खूब पढ़ूँगी खूब लिखूँगी बैठ उसी के पास
लड़ूं न झगड़ूँ कभी किसी से कभी न खेलूँ ताश
तुम सब मिल देओ बधाई ॥

चमेली—ओ, वीणा तू यह तो बता तुम्हारे भैया की सगाई की ख़ुशी में तू हमको क्या मिठाई खिलायेगी ?

प्रेम—अरे मिठाई का क्या लाई चमेली, तुम्हारा जी चाहे सो मिठाई खाना।

(एक अन्य लड़की कान्ता का प्रवेश)

चमेली—अरे लो मिठाई के मौके पर तो यह कान्ता भी आ पहुँची है, बड़ी भाग वाली है।

कान्ता—हाँ जी मिठाई के मौके को मैं कभी नहीं चूकती। जब भी कहीं मिठाई खाने का मौका आता है वहाँ जरूर ही पहुँच जाती हूँ।

चमेली—लेकिन तुमने यह भी सुना–मिठाई क्यों खिलाई जा रही है और कौन खिला रहा है ?

कान्ता - मेरी बला से कोई भी खिलाये और कैसे भी खिलाये, मुझे तो मिठाई खाने से मतलब !

चमेली—धत् तेरे की-तो तू मिठाई का कीड़ा है ! जहाँ जाती है वहाँ बिना सोचे समझे जाकर बैठ जाती है।

कान्ता—बड़ी कीड़ा बताने वाली आई ! कीड़ा तू होगी तेरी बहिन होगी तेरी माँ होगी !

चमेली—बस बातों ही बातों में माँ बहिन तक पहुँच गई। देखली तुम्हारी समझ ? मैं तो बाबा तुमको पहिले से जानती हूँ, लो आओ वीणा और प्रेम।

प्रेम—अरे पर तुम लोग बातों ही बातो में बिगड़ती क्यों हो ? देखो कान्ता, इस ख़ुशी की मिठाई में कड़वापन क्यों ला रही हो ?

वीणा—और तुम तो सब जानती बूझती हो, चमेली।

प्रेम—मैं तो तुम दोनों ही के हाथ जोड़ती हूँ चमेली और कान्ता।

वीणा—हाँ हाँ तुम दोनों ही खुश हो जाओ। ऐसी खुशी के मौके पर नाराजगी का क्या काम।

चमेली—नहीं जी तुम भी क्या कह रही हो, वीणा। मैं क्यों नाराज़ होने लगी ?

कान्ता—और मैंने तो किसी से बिगड़ना सीखा ही नहीं।

प्रेम—लो आओ अब जल्दी ही स्कूल पहुँच जायँ। वहाँ जाकर और क्लास की लड़कियों को भी यह खुश ख़बरी सुनायेंगी।

प्रेम—जीजी मैं बताऊँ, मैं जाकर अम्मा से १) रुपया ले आती हूँ। कहूँगी हमारे क्लास की लड़कियों को मिठाई खिलाऊँगी।

वीणा—(रास्ते की तरफ़ देख कर) अरे अम्मा और भाभी तो वे आ रही हैं। प्रेम तू माँगना सहारा मैं लगादूँ गी।

प्रेम—जी जी तू ही माँगलेना।

वीणा—नहीं, नहीं, प्रेम तू तो अड़ जायगी तो लेकर छोड़ेगी। मुझे तो वे टाल भी सकती है। तुम्हारी आदत तो वह जानती है। क्यों हैं न ?

प्रेम—अच्छा-अच्छा

(प्रेम की माँ का और भाभी का प्रवेश)

प्रेमकी माँ—अरे तुम लोग अभी यहाँ ही जा रहीहो ? इतनी देर रास्ते में क्या करती रही ?

प्रेम—(माँ का आँचल पकड़ कर) माँ !

माँ—क्यों बेटी !

प्रेम—लड़कियाँ कहती हैं—आज तुम्हारे भैया की सगाई हुई है इसलिए ....

माँ—हाँ हाँ कहो न क्या बात है ?

वीणा—पर लड़कियाँ काहे को कहती हैं यही अपने क्लास की

लड़कियों को मिठाई खिलाने को कहती है, बात असल में यह है अम्मा।

माँ—हाँ खाओ न मिठाई, मैं क्या मना करती हूँ। तुम भी खूब मिठाई खाओ मेरी बिटिया और तुम्हारी सहेलियों को भी खिलाओ। व्याह सगाई के मौके पर ही यह खाना-खिलाना नहीं होगा तो और कब होगा।

प्रेम—तो लाओ एक रुपया। हम स्कूल की नौकरानी से मिठाई मँगालेंगी और सब मिलकर खा लेंगी।

माँ—आज ही।

प्रेम—हाँ, तो और क्या, क्यों वीणा जीजी ?

वीणा—हाँ ठीक तो है, क्यों अम्मा ?

माँ—लेकिन अभी तो मेरे पास नहीं है। तुम्हारे पास है क्या बहू ?

बहू—नहीं जी मेरे पास कोई जेबों में रुपये थोड़े ही पड़े रहते हैं।

माँ—अच्छा मैं देखती हूँ शायद कुछ पैसे निकल जायँ (देखकर) बेटी मेरे पास तो ये कुल चार आने के पैसे निकले हैं, परन्तु तुम इतनी जल्दी क्यों करती हो ? आज नहीं सही, कल खिला देना।

प्रेम—ला चार ही आना दे दे। फिर का फिर देखा जायगा।

माँ—लेकिन बेटी, तू समझती नहीं। अपनी हैसियत कोई चार आना जैसी थोड़ी ही है। तुम्हारे पिताजी सुनेंगे तो मुझे भी लड़ेंगे और तुम्हें भी मारेंगे। मैं बताऊँ–मैं तुम्हारे पिताजी से कह कर आम और लड्डू तुम्हारे स्कूल भर की सब लड़कियों को बँटवा दूँगी।

प्रेम — नहीं, तू तो हमें यह चार आना तो दे दे।

वीणा—अम्मा, (चुपके से) देखो वह भैया की सासू आ रही है।

प्रेम—और साथ में उनकी बहू भी है।

अम्मा—अरे वह तो इधर ही आ रही हैं!

(पारसलालजी की स्त्री का उनकी बहू के साथ प्रवेश)

प्रेम—नमस्कार सेठानीजी साहब!

वीणा और सब— नमस्कार सेठानीजी साहब!

पारसलालजी की बहू—सुख पाओ, ऊमर लम्बी हो बेटी।

प्रेम और वीणा—हम आज भाभी से मिलने आवेंगी सेठानी जी, क्यों अम्मा ?

पारसलालजी की बहू—हाँ आओ न बेटी, तुम्हारा घर है।

प्रेम की माँ—जाओ जाओ तुम लोग अब पाठशाला जाओ, नहीं देर हो जायगी।

चमेली—क्यों सेठानी जी, हमारी भाभी कितनी पढ़ी है ?

कान्ता—मैंने सुना-बहुत पढ़ी है।

वीणा—अरे तुम्हें नहीं मालूम ?

प्रेम—वह अँगरेजी में धड़ाधड़ बात चीत कर सकती है हमारे स्कूल की श्यामा रानी तो कुछ भी नहीं है उसके सामने।

वीणा—और ख़ूब बाजा बजाना जानती है।

कान्ता—और नाचना ?

पारसलालजी की बहू—अरे मैं कोई नचाती हूँ क्या मेरी लड़कियों को।

प्रेम की माँ—अजी यह आजकल की पढ़ाई इन छोरियों से

जो कुछ भी करावे सो थोड़ा है पर देखिये सुधा की माँ! मेरे घर में यह नाचना गाना नहीं हो सकेगा।

पारसलालजी की बहू—अजी जाने भी दो इन छोरियों की बातों को। वह तो बेचारी गाय है, आपके आँख के इशारे पर ऊठ बैठ करेगी।

प्रेम की माँ—भला हमारे घरों में नाचने गाने से क्या मतलब! देखिये मैं तो साफ़ बात कहती हूँ।

पारसलालजी की बहू—नहीं जी, घर गृहस्थी में नाचना गाना कैसे हो सकता है। यह तो जब तक ब्याह नहीं होता है तभी तक इन छोरियों की ये लीलायें चलती रहती हैं। घर धन्धे के कामों में पड़ने के बाद ये सब बचपन के खेल अपने आप बंद हो जाते हैं।

वीणा—क्यों साहब गाने बजाने में क्या बुराई है?

प्रेम की माँ—तू चुप रह छोरी। जाओ जाओ तुम लोग पाठशाला जाओ न।

कान्ता—लो आओ जी अपन तो स्कूल चलें।

(सब चली जाती हैं)

प्रेम की माँ—अच्छा साहब आज शाम को वर्णन में आओगे न महावीरजी के मन्दिर में?

पारसलालजी की बहू—हाँ साहब जरूर आऊँगी।

प्रेम की माँ—अच्छा तो फिर मिलेंगे ही।

पारसलालजी की बहू—हाँ जरूर मिलूँगी।

(चली जाती है।)

तीसरा दृश्य

स्थान—रास्ता

(सात स्त्रियाँ रास्ते में बात करती हुई जा रही हैं और उनको बीच में तीन नवीन शिक्षित बालिकाएँ सुधा, अरण्य और विजया मिलती हैं)

पहली स्त्री—(तीन अपटुडेट लड़कियों को जाते देखकर) देखा बाईजी इन परियों को। कैसी मजे से अकड़ती हुई चली जा रहीं हैं। बालपन तो आपने भी देखा है लेकिन यह रंग ढंग भी किया है क्या ?

दूसरी स्त्री—अजी क्यों बात करते हो ? यह तो कोई कुएमें ही भांग पड़ गई है सो जिधर देखो उधर यह तितलियाँ ही तितलियाँ नजर आतीं हैं।

(तीनों शिक्षित स्त्रियाँ पीछे मुड़कर)

तीनों एक साथ—क्यों जी तुम लोगों ने तितली किसे कहा ?

तीसरी स्त्री—ना बाबा ना हम तो कोई हमारी ही बात कर रही थीं।

सुधा—अजी हमने हमारे कानों से सुना है आप लोगों में से किसी ने हमारी तरफ इशारा करके तितली कहा है।

अरण्य—सुधा जीजी (दूसरी स्त्री की तरफ इशारा करके) इन्होंने कहा है—मैंने सुना है अपने कानों से।

विजया—आप लोगों को शर्म नहीं आती इस तरह से दूसरों की बातें बनाते।

दूसरी स्त्री—लेकिम बाबा आप लोग जबरदस्ती ही हमारे गले क्यों पड़ती हो ?

चौथी स्त्री—हाँ साहब जाइये जाइये आप के काम में देर हो जायगी।

अरण्य—लेकिन इससे आपको क्या जल्दी हो चाहे देर हो।

विजया—आइन्दा इस तरह आपको भली भली लड़कियों के लिये अपनी बोली की चतुरता का परिचय नहीं देना चाहिये।

पाँचवीं स्त्री—अजी तो हम कोई पढ़ी लिखी हैं क्या जो बोलना जानें।

चौथी स्त्री—पढ़ी गुणी तो ये हैं जो सामने की सामने ही हम लोगों की शर्म और बोली का बखान कर रहीं हैं।

सातवीं स्त्री—बहूजी आप क्यों इनसे फ़िजूल जिदती हो। हम क्या इनसे जीतने की हैं जाइये जाइये साहब जाइये, अगर किसी ने कह दिया तो माफ़ी दीजिये।

सुधा—लो आओ जी आओ अरण्य और विजया! फ़िजूल वक्त ख़राब करने से कोई मतलब नहीं।

(तीनों शिक्षित स्त्रियाँ चली जाती हैं)

पहली स्त्री—अजी अभी तो बचपन है सो माँ बाप को तो मानती नहीं हैं और अपनी मनमानी करती हैं। ब्याह होने के बाद घर के धन्धे में पड़ेंगी तो नानी याद आ जायगी।

दूसरी—वहाँ तो चक्की-चूल्हे से मतलब। यह तूफ़ाने वहाँ कहाँ?

तीसरी—अजी! पर, आज कल तो ब्याही और बिना ब्याही सब एक ही चाल की हैं।

चौथी—लेकिन, मैं तो कहती हूँ ये लड़कियाँ इतनी पढ़ पढ़ कर करेंगी क्या?

पाँचवीं—राम जाने, कचहरी में नौकरी करेंगी या दूकान खोल कर बैठेंगी !

छठी—भ-भ-भ भगवान ही मालिक है बाई जी ! (अफ़सोस प्रकट करती हुई।

सातवीं—इनके माँ बापों को भी जाने कैसे सुहाता होगा ?

पहली—अजी माँ बाप बिचारे क्या करें, ये आज कल की छोरियाँ ही ऐसी ज़िद्दी हो गई हैं कि किसी की सुनती ही नहीं हैं।

दूसरी—पहले तो माँ-बाप लाड़-प्यार से बिगाड़ देते हैं और फिर वह उनके बस की नहीं रहतीं।

तीसरी—अब मुझे देखो बहूजी ! जब मैं दस वर्ष की थी तब अकेली दस आदमियों को बना कर रोटी खिला देती थी, लेकिन आजकल की छोरियों से चूल्हे में फूँक भी नहीं दी जाती।

चौथी स्त्री—अजी चक्की चूल्हे को तो देखते ही नाक भौं सिकोड़ती हैं।

पाँचवी—लेकिन बीनणजी चक्की चूल्हे से नाक भौं सिकोड़ेंगी तो अपना और अपने घर वालों का पेट कैसे भरेंगी।

छठी—भ भ भ भगवान ही मालिक है बाई जी !

सातवीं—अजी ये क्या करें बेचारियों को घर धन्धे का काम तो इनको स्कूलों में सिखाया ही नहीं जाता।

पहली—हाँ बात तो ठीक है पोखरजी की बहू। लड़कियों के बड़े सरकारी स्कूल में मेरी चम्पा पढ़ने जाती है तो मास्टरनियाँ बनाव सिंगार के सिवा कुछ सिखाती ही नहीं।

दूसरी—बस वहाँ तो यही सिखाया जाता है-यह मांग इधर से निकालो यह धोती का पल्ला इधर से रक्खो।

तीसरी—अजी मेरी कमला पाँच वर्ष से बराबर स्कूल में जा रही है लेकिन उसे फटे के पाती लगाना भी नहीं आया।

चौथी—और मेरी शर्वती ११ वर्ष की हो चुकी लेकिन उसे रोटी तरकारी भी बनाना नहीं आता। तरकारी अच्छी बनाती है तो रोटी बिगाड़ देती है; रोटी अच्छी बनाती है तो तरकारी बिगाड़ देती है।

पाँचवीं—अजी आजकल के स्कूलों की तो बात ही मत पूछो। स्कूलों में कोई घर धन्धे की पढ़ाई होती है क्या! वहाँ तो छोकरियों को कबूतरियों की तरह नचाया जाता है।

छठी—भ भ भ भगवान ही मालिक है बाई जी!

सातवीं—लेकिन देखो जी हमारे पड़ौस में एक लड़कियों का स्कूल है वहाँ तो लड़कियों को घर गृहस्थी का सलीका भी सिखाया जाता है. लड़कियाँ रसोई भी करती हैं और कपड़े भी सीती हैं।

पहली—अजी वह तो अपने समाज का स्कूल है। उसका इन्तजाम समाज के स्याने समझदार लोगों के हाथ में है सो वे यह तोम तूफान नहीं होने देते।

दूसरी—और सरकारी स्कूलों का कोई धणी धोरी है नहीं सो वहां मनमाना होता है।

चौथी—आप भी क्या बातें करती हो? लड़कियों के स्कूल तो सरकारी और बिना सरकारी सब बराबर हैं।

पाँचवीं—अरे खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता है सो एक स्कूल की जैसी चाल देखी वैसी ही दूसरे स्कूल वाले करते हैं।

सातवीं—और इन छोरियों की पढ़ाई में खर्च इतना होता है कि बेचारी मामूली गृहस्थी का तो कचूमर ही निकल जाता है।

पहली--हाँजी मास्टरनियां बात बात के रुपये मांगती हैं लड़की देर से जाय तो लाओ जुर्माना, पोथी याद न करे तो लाओ जुर्माना।

दूसरी—किसी की दावात गिरादे तो लाओ जुर्माना, किसी से झगड़ा हो जाय तो लाओ जुर्माना।

तीसरी—अरे बाबा ये स्कूल क्या हुए, राज ने कमाई के कारखाने खोल दिये।

चौथी—भला आजकल खर्च की तंगी तो हमारे घरों में पहले से ही रहती है और तिस पर लड़कियों की पढ़ाई के ये खर्च!

पाँचवीं—अजी इनके अलावा किताबों के और फ़ीस के दामों की जो बौछार रहती है उससे तो बेचारी गृहस्थी की पीठ पर बल ही पड़ जाता हैं।

छठी--भ भ भ भगवान ही मालिक है बाईजी!

सातवीं—बाईजी! हमारे जमाने में जिस किताब से बाबा ने पढ़ाई की उसी से पोता पढ़ लेता था-लेकिन आज जो किताब बड़ी बहन पढ़ चुकी वह उसकी छोटी बहन के काम में नहीं आती, उसके लिए दूसरी ही किताब के पैसे खर्च करो।

पहली – अजी हम लोगों के घरों में बच्चों को खाने पिलाने के लिए तो पैसे पैसे की तंगी भुगतनी पड़ती है, भला हम यह स्कूलों का खर्च किस तरह बरदाश्तकर सकते हैं।

छठी--भ भ भ भगवान ही मालिक है बाईजी!

सातवीं--अरे हाँ भ भ भगवान ही मालिक हैं।

छठी--बाबा बाईजी तुम तो मेरी म म मज़ाक ही उड़ाती हो ह्ला साहब ह्ला।

सातवीं--क्यों जी मज़ाक की इसमें क्या बात हुई। भ भ भगवान मालिक नहीं है क्या ?

छठी--द द देख लिया न ब ब बाईजी ये मेरी न न नकल करती हैं।

सातवीं--म म म मैं कहाँ नकल करती हूँ।

छठी--ओ ओ और नहीं क्या करती हो।

सातवीं--ओ ओ और नहीं क्या करती हो।

छठी--ह्ला साहब ह्ला, र र राम करे तो तुम्हारी ज ज ज जीभ ही जल जाय।

(खीज कर चली जाती है)

पाँचवी--(हँसती हुई) बाईजी ! आपने भी बेचारी को नाराज़ कर दिया।

सातवीं--देखो जी मैंने इसमें..........

पहली--लो आओ जी आओ चलें।

सब--हाँ चलो साहब।

(सब चली जाती हैं)

चौथा दृश्य

स्थान—ससुराल में सुधा का उठने बैठने का कमरा।

(कमरे में सतरंज और उसके ऊपर एक बढ़िया कालीन बिछा हुआ है। एक तरफ एक कांच के किवाड़ों की अलमारी रक्खी है। बहुत सारे कपड़े-लत्ते इधर-उधर सलीके के साथ रक्खे हैं। दो एक टेबिल हैं जो कसीदा निकाले हुए टेबिल-पोशों से सुसज्जित हैं। सुधा का अन्य सामान यत्र-तत्र यथा-स्थान रक्खा हुआ है। पिताजी की तरफ से मिला हुआ सब शृंगार का सामान भी एक टेबिल पर सजा कर लगाया हुआ है। सुधा गुलाबी रंग की रेशमी साड़ी पहने एक कुर्सी पर बैठी है। उसके सामने एक टेबिल है और उसकी दो छोटी ननदें प्रेम और वीणा उसको अपनी पढ़ाई का इम्तिहान दे रही हैं। सुधा एक एक करके उनको हिन्दी, भूगोल आदि विषयों की पढ़ाई पूछ रही है और उन की लिपि आदि देख रही हैं।)

प्रेम—यह देखो मेरे अक्षर जमाने की लिपि। (लिपि दिखाती है।)

भाभी—अक्षर तो बहुत सुन्दर जमाती हो, प्रेम।

वीणा—और यह मेरी लिपि भी देखिये।

प्रेम—पहले यह मेरी भूगोल की कापी देखिए।

(प्रेम वीणा की लिपि पर अपनी भूगोल की कापी रखदेती है)

वीणा—नहीं बस तू अपनी अपनी ही तो दिखाये जाती है।

भाभी—मैं अभी तुम दोनों ही की सब कापियाँ और किताबें देख लूंगी। इतनी उतावली क्या पड़ी है प्रेम? हाँ यह तुम्हारी लिपि है वीणा?

वीणा—हाँ भाभी।

भाभी—देखो वीणा तुम जरा अक्षरों के मोड़ अच्छी तरह लगाया करो। यह देखो यों (बताती है)

प्रेम—भाभी लिपि में इसके रोज अंडा आता है।

वीणा—और तुम्हारे मतीरा आता होगा।

भाभी—फिर वही बचपन प्रेम, हाँ लाओ देखूं तुम्हारी भूगोल की कापी।

प्रेम—यह लो भाभी।

भाभी—(पन्ने उलटती है)

प्रेम—यह-राजनैतिक हिन्दुस्तान, यह देखो हमारा जयपुर।

भाभी—बहुत अच्छा, हाँ देखें बताओ तो गंगा का मुहाना कहाँ है?

वीणा—मैं बताऊँ बङ्गाल की खाड़ी।

प्रेम—तू बीच ही में क्यों लप-लप करती है, जीजी।

भाभी—देखो प्रेम यह तुम्हारी बड़ी बहिन है। इस तरह अशिष्टता से नहीं बोला करते हैं। तुमको तुम्हारे स्कूल में इतना भी अदब नहीं सिखाया जाता कि बड़ों के सामने छोटों को नम्र रहना चाहिए, छोटों को बड़ों का आदर करना चाहिए। बड़ों को छोटों से प्यार करना चाहिए।

प्रेम—लो भाभी यह मेरे बीच में क्यों बोलती है।

भाभी—अच्छा लाओ वीणा तुम्हारी भूगोल की कापी।

वीणा—मेरी भूगोल की कापी तो जाने कहाँ खो गई।

प्रेम—भाभी यह तो रोज यों ही कापियाँ खोती हैं।

वीणा—ऊं खोती है न।

प्रेम—उस रोज इतिहास की कापी खोई तब तो मास्टरनीजी ने नीलडाउन कराया ही था।

भाभी—अच्छा अच्छा प्रेम ला तुम्हारी धर्म की किताब

प्रेम—यह लीजिए।

भाभी—कितने पाठ पढ़ चुकी ?

प्रेम—आठ।

भाभी—अच्छा बताओ तुम्हारे कितने प्राण हैं ?

प्रेम—दस

भाभी—तुम बताओ वीणा चिंवटी में कितने प्राण हैं ?

वीणा—चिवंटी में, चिवटी में, हैं भाभी चिंवटी में ?

भाभी—हाँ, चिंवटी में वीणा।

प्रेम—मैं बताऊँ भाभी

भाभी—हाँ बताओ

प्रेम—सात। तीन इन्द्रिय, आयु, कायबल, बचन बल और श्वासोच्छ्वास।

भाभी—शाबास। तुमको धर्म याद नहीं मालूम होता है वीणा।

प्रेम—धर्म में तो भाभी इसके रोज मार पड़ती है।

वीणा—कब देखा तूने मुझे पिटते हुए

प्रेम—कल तो तुम्हारे शर्बती और सुलोचना ने चांटे लगाये ही थे।

भाभी—अरे फिर वही बचपन प्रेम मानती नहीं।

(विजया का प्रवेश)

प्रेम—अरे वह विजया जीजी आई। आओ विजया जीजी हम भाभी को हमारी पढ़ाई का इम्तिहान दे रही हैं।

(सुधा खड़ी होती है)

विजया—बैठो न भाभी। जैसे तुम्हारा पीहर-वैसे ही इस घर को समझो।

सुधा—नहीं तो कोई बात नहीं, इतनी देर से बैठी थी।

विजया—क्योंरी तुम लोग तो भाभी से बहुत जल्दी हिल मिल गई। भाभी को आराम करने दो क्यों फ़िजूल तंग करती हो।

भाभी—नहीं नहीं तंग करने की कोई बात नहीं। पाँच सात रोज से पढ़ने लिखने से कोई काम नहीं पड़ा था। प्रेम और वीणा से इनकी पढ़ाई लिखाई के बारे में चर्चा हुई, बड़ी दिलचस्पी रही।

विजया—बेचारी प्रेम और वीणा तो तुम्हारा चातक की तरह से इन्तजार कर रही थी। इनकी पढ़ाई में तुम बहुत मदद पहुँचा सकोगी।

प्रेम—जीजी अब हम रोज भाभी को पाठ सुनादिया करेंगी।

वीणा—फिर देखें इम्तिहान में कैसे फेल होती हैं ?

विजया—हाँ हाँ क्यों नहीं ....

(नौरंगीलाल जी की बड़ी बहू चुपचाप आकर सुनती है)

विजया—भाभी ही अब तुम्हारी लिखाई पढ़ाई की सम्हाल कियाकरेंगी। भाभी ! हम तुमको चक्की चूल्हों के धन्धों में न लगा कर घर के शिक्षा सभ्यता और सफ़ाई विभाग की पदाधिकारिणी बनायेंगी।

प्रेम—और चक्की चूल्हा करेंगी बड़ी भाभी ! ....

वीणा—यह इसी लायक है। रोज माँ से हमारी शिकायत करती है।

(बड़ी बहू दूर खड़ी खड़ी सुन रही है और सिर हिला कर मन ही मन बोलती है)—वह तो बेचारी मास्टरनी बन कर रहेगी और मैं चक्की चूल्हे में पिलूँगी। कहती हूँ अभी सासजी से जाकर।

भाभी—लेकिन आप ऐसा क्यों कहती हैं ? चक्की चूल्हा कोई खराब काम थोड़ा ही है। घर का खास काम तो चक्की चूल्हा ही है और इसीसे स्त्री घर की रानी है।

विजया—हाँ यह तो ठीक है भाभी! पर जो आदमी जिस काम के योग्य हो उसको वैसा ही काम दिया जाना चाहिए, वरना काम खराब हो जाता है। भाभी मैं भी तुम्हारे पास पढ़ा करूंगी।

भाभी—मैं क्या इस लायक हूँ विजया जी, मैं तो खुद आप लोगों से बहुत कुछ सीखने समझने की उम्मीद रखती हूँ।

विजया—सच भाभी मैं तो जब पढ़ी गुणी लड़कियों को कविता बोलते और व्याख्यान देते देखती हूँ तो मुझे अपने ऊपर बहुत ही ग्लानि और लज्जा होती है।

वीणा—भाभी अम्मा ने इसका पांचवीं क्लास से ही पढ़ना छुड़ा लिया था।

भाभी—फिर भी आपके विचार इतने उदार और सुन्दर हैं यह देख कर मुझेबहुत प्रसन्नता है। मैंने सुना-सिलाई बुनाई के काम में आप बहुत निपुण हैं ?

प्रेम—जीजी स्वेटर और गुलूबन्द बनना बहुत अच्छा जानती है। यह देखो यह स्वेटर इसी का बनाया हुआ है।

भाभी—मुझे भी सिखा दीजियेगा विजया जी! सच मैं ऐसे कामों में सदा से ही पिछाड़ रहती आई हूँ।

विजया—और तुम मुझे कविता लिखने का और संगीत का अभ्यास करा देना।

भाभी—आप संगीत थोड़ा बहुत तो जानती होंगी ?

विजया—मैंने तो हारमोनियम कभी हाथ से छुआ ही नहीं।

भाभी—लेकिन गाना तो जानती होंगी ?

प्रेम—हाँ भाभी दो एक गायन इसको बहुत अच्छे याद हैं।

विजया—चुप रह छोरी। भाभी यहाँ तो गाने वाने के नाम खैरसल्ला है।

भाभी—नहीं विजया जी जो आता है वही सुनाइये आख़िर आप गाना तो सीखना चाहती ही हैं, समझ लीजिए आज से ही सीखना शुरू कर दिया।

विजया—लेकिन भाभी मुझे कुछ आता हो तो सुनाऊं।

वीणा—क्यों आता है न जीजी वो 'नया संसार' वाला गाना।

भाभी—देखिए साहब आप संगीत सीखना चाहती हैं तो इस तरह संकोच से कैसे काम चलेगा। बाजा लाओ देखें प्रेम !

प्रेम—अभी लाई।

(बाजा ले आती है)

(सुधा बाजा बजाती है और विजया गाना शुरू करती है)

विजया—तुमभी साथ में बोलना प्रेम और वीणा। ये दोनों उस गाने को बहुत अच्छा गाती हैं।

वीणा और प्रेम—अच्छा अच्छा।

❋ गायन ❋

सजनी आओ आज बसालें एक नया संसार।
उस जग की छटा निराली हो
मन में आशा उजियाली हो,
महिलाओं में आज़ादी हो
ना क्लेश कोई-बरबादी हो।
नर नारी सब तुल्य रूप से
वरतें निज अधिकार ॥१॥
घूंघट और पर्दा छोड़ चलें
सदियों के बन्धन तोड़ चलें,
गुण गौरव विद्या जोड़ चलें
फैशन से मुंह को मोड़ चलें।
हो शुद्ध स्वदेशी वेश, न तन पर
गहनों की भरमार ॥२॥
लोभी पिता की पुत्रियाँ, बेची न जाती हो जहाँ।
बाल-वृद्ध विवाह की रूढ़िन प्रचलित हो जहाँ॥
वैधव्य का कटु-क्रूर फल सहती रहैं ना रमणियाँ।
वीर धीर सुशील शिक्षित हो जहाँ सब नारियाँ॥
तुच्छ बुद्धि बाला है जिन वर करती खड़ी पुकार।

(विजया का गायन समाप्त होते होते विजया वगैरह को
विजया की माँ आवाज़ लगाती है ।)

(नेपथ्य से—विजया विजया)

वीणा और प्रेम—(चौंक कर) विजया जीजी अम्मा ! आवाज़ लगा रही हैं ।

(नेपथ्य से—वीणा वीणा)

विजया—आई माँ

(विजया की माँ का प्रवेश)

माँ—अरे आवाज़ों पर आवाज़ें लगाये जाती हूँ कोई सुनती भी नहीं हो क्या ? सबेरे ही सबेरे यह क्या धन्धा लगाया है ?

विजया—कुछ नहीं, भाभी को योंही कुछ मेरे सीखे हुए भजन सुना रही थी ।

माँ—बहू को कुछ काम धन्धा करना भी सीखने दोगी या योंही आलतू फालतू बातों में लगाये रक्खोगी ।

(बड़ी बहू ये सब बातें पीछे खड़ी चुपचाप सुन रही है ।)

वीणा—ये कोई आलतू फालतू बातें हैं माँ ! जीजी ने भजन ही तो सुनाया है—कोई ज़ुल्म थोड़ा ही किया है ।

माँ—अरे सुनलिया बस, रहने दे । तुम सब एक माजने की हो । मैं इतनी बड़ी हो चली, कभी मुझे घर धन्धे के काम में भी मदद देती हो । यह देखो यह विजया १३ वर्ष की हो चली पर इसे चौका बर्तन तक करना नहीं आया । सो तो मैंने ११ वें वर्ष में ही इसका पढ़ना-लिखना छुड़ा लिया था ।

वीणा—तभी तो यह बिना पढ़ी रह गई । देखा, भाभी कितनी पढ़ी हुई है जो आज हमारी सब पढ़ाई का इम्तिहान ले रही है और आज से यही हमारी पढ़ाई लिखाई की संभाल करेंगी ।

प्रेम—हम भाभी को चक्की चूल्हे का धन्धा नहीं करने देंगी अम्मा !

माँ—(प्रेम के चांटा लगा कर) चुप रह छोरी। चक्की चूल्हे का धन्धा नहीं करने देगी तो पेट में चूहे दौड़ने लगेंगे।

(प्रेम रोती रोती भाभी के पास चली जाती है और वह उसको तसल्ली देती हुई कहती है।)

भाभी—(सास से) आप बच्चों को क्यों फिजूल रुलाती हैं, मैं कब कहती हूँ कि मैं चक्की चूल्हे का काम नहीं करूंगी।

माँ—यह छोरियाँ कह रही हैं न। मुझे क्या मालूम तुमने ही इनको बहकाया होगा। (कह कर चली जाती है)

(बड़ी बहू एक तरफ खड़ी खड़ी अपने आप)

बड़ी बहू—छोटी बहू तो लिखाई-पढ़ाई कराएगी और बाजा सिखाएगी और मैं चक्की चूल्हे का धन्धा करूंगी। बड़ी नवाब आई है कहीं की।

(मुंह मोड़ कर चली जाती है)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—नौरंगीलाल जी का घर

बड़ी बहू—(अपने आप) बड़ी आई नवाब बन कर इस घर में। मैं भी देख लूंगी उसकी नवाबी किस तरह चलती है। आपतो कुर्सियों पर बैठी हुकुम चलाया करेगी और मैं चक्की चूल्हे से सर फोड़ूंगी। अगर रसोई बनाना नहीं आता है तो कोई मेरी ही गर्दन-लम्बी है सो जी चाहे तब काट डालो। यहाँ बहू बन कर आई तो घर का सब हुनर सीख कर आई होती। अगर आज ही

नवाब को रसोई और बर्तन मांजने का काम न करना पड़े तो मेरा भी नाम मालती नहीं। मैं भी कोई न कोई बहाना ले कर बैठ जाती हूँ, देखें फिर रसोई कौन बनाता है? (किसी की आहट सुनकर) कौन आया! (देखती है) अरे वे सासजी इधर ही आ रही हैं। अभी बिच्छू काटने का बहाना बनाती हूँ।

(अपनी अंगुली को दांत से काट कर हाय राम हाय राम करती हुई खम्भे के सहारे बैठ जाती है और कराहती है।)

(सास का प्रवेश)

सास—अरे क्या हुआ बड़ी बहू!

बड़ी—हाय राम! हाय राम! अरी माँ कहाँ है तू!

सास—बहू बोलतो सही क्या हुआ?

बड़ी - इये मेरी माँ कहाँ है तू! अरे राम! अरे राम!

सास - बेटी बोलतो सही तुझे हुआ क्या? किसी ने मारा है या किसी ने पीटा है।

बड़ी—दर्द हो रहा है अरे राम! अरे राम!

सास—(घबरा कर) अरी ओ विजया! अरी ओ विजया!

विजया—[नेपथ्य में से] क्या है माँ?

सास—अरी दौड़ियो जल्दी से, [बहू की ओर] मेरी बहू! बोल तो सही, तुझे हुआ क्या?

बहू—अरे राम! अरे राम!!

सास—हाय राम! यही तो मेरे घर में जागती जोत है और इसी को कुछ हो गया, तो मेरा तो बुढ़ापा किरकिरा हो जायगा। हे ईश्वर! हे महावीर स्वामी! तेरे दो रात घी की जोत बोलती हूँ। मेरी बहू को अच्छा कर देना।

बड़ी बहू—अरे राम, अरे राम!

[विजया का प्रवेश]

विजया—क्या हुआ माँ, क्या हुआ माँ ! भाभी ऐसे कैसे कर रही है ?

सास—अरी देख तो सही यह कैसे ग़ाफ़िल हो रही है ? जा, तुम्हारे पिताजी को बुला कर ला।

विजया—पर इसे हुआ क्या, क्यों भाभी ! क्या हुआ तुमको ? पेट दर्द कर रहा है ?

बड़ी बहू—नहीं बाईजी, पेट में दर्द नहीं है, मेरी अंगुली को काट खाया।

सास—हैं ! साँप काट खाया !

बड़ी बहू—अजी नहीं, बिच्छू ने काट खाया। बड़ा जहरीला बिच्छू था। अरे राम, इये मेरी माँ, हे महावीर बाबा, हे ईश्वर !

सास—अरी विजया, जल्दी से तुम्हारे बाप को बुला कर ला।

विजया पिताजी यहाँ कहाँ हैं, वे तो दूकान गये हैं। छोटी भाभी को बुला कर लाती हूँ। वह जरूर इसका इलाज जानती होगी।

[वीणा दौड़ कर आती है]

वीणा—माँ, माँ, क्या हुआ ?

माँ—बेटी, तुम्हारी भाभी को बिच्छू ने काट खाया।

बड़ी बहू—अरे राम ! अरे राम !

मां—देखो कितने जोर का दर्द हो रहा है। हाँ, तो जाओ विजया, तुम्हारी भाभी को ही बुला कर लाओ।

वीणा—हाँ हाँ माँ, उसके पास एक दवा है जो लगाते ही सारे जहर को निकाल देती है।

बड़ी बहू—अरे ना बाबा ना, वह दवा तो बिच्छू से भी ज्यादा काटती है। मैं तो कमरे में जाकर लेटती हूँ। थोड़ी देर में आप ही आराम हो जायगा।

वीणा—भाभी! बिच्छू कैसे काट गया?

बड़ी—अजी मैं तो चूल्हा जलाने के लिये कुछ घास-फूस लेने लगी और जाने उसमें बिच्छू कहाँ छुपा पड़ा था। छूते ही मेरी तो नस-नस में बिजली दौड़ गई। आँख फैला कर देखा तो जहरीला काला बिच्छू सरपट दौड़ा चला जा रहा है। अरे राम! अरे राम! [खड़ी हो जाती है]

प्रेम—[दौड़ी हुई आती है] माँ, माँ! अभी तो रसोई में चूल्हा भी नहीं जला। [बड़ी भाभी की ओर देखकर] क्या हुआ माँ, बड़ी भाभी को?

सास—बिच्छू काट गया बेटी!

प्रेम—तो फिर रोटी कौन बनायेगा? हमें तो स्कूल आज जल्दी जाना है।

माँ—तू कहती थी न, छोटी भाभी को चक्की-चूल्हा नहीं करने देंगी। अब सारे घर के भूखे मरो। मेरी बिचारी की रोटी बनाने की हिम्मत ही कहाँ? बड़ी बहू को तुम देख ही रही हो। तुम्हारी छोटी भाभी से चूल्हे में फूंक भी नहीं लगती है, सो वह कुछ निहाल करती दीखती नहीं है!

प्रेम—वाह, फूंक कैसे नहीं लगती है? मैं अभी जाकर कहती हूँ। आज वही हम सबको रोटी बना कर खिलायेगी।

[चली जाती है]

बड़ी—अजी साहब क्या है, धीरे-धीरे मैं ही बना लूँगी। यह दर्द तो थोड़ी देर में ठीक हो जाता है।

सास—नहीं बहू ! ऐसी हालत में मैं तुमको रसोई बनाने दूंगी क्या ? चलो, तुम तो महल में चल कर पंखे के नीचे सो रहो ।

[सब चली जाती है]

छठा दृश्य

स्थान—रसोई घर

[पर्दा उठता है और रसोई के सब सामान के साथ रसोई का दृश्य दिखाई देता है । सुधा सिगड़ी पर से तवा उतारती हुई अपना हाथ जला लेती है और फिर रसोई के सब सामान को ठीक तरह से रखकर चली जाती है । उसके बाद बड़ी बहू आती है और बनी हुई तरकारियों में नमक आदि मसाला व पानी वगैरह डाल कर चली जाती है]

(सास का प्रवेश)

सास—[अपने आप] ओ हो, रसोई तैयार भी होगई ! अरे कहाँ गई छोटी बहू [एक-एक बरतन उठा कर देखती है] राम, राम, ये तरकारियां बनाई हैं ! किसी में हल्दी ही हल्दी है और किसी में मिर्च ही मिर्च भरी पड़ी है । खाटे को चलाया तक नहीं । हे ईश्वर ! कैसी बहू पाने पड़ी है ? पीहर वालों ने कुछ सिखाया हो तो बनावे न ।

[पीछे से छोटी बहू आती हुई सुन लेती है]

छोटी बहू—जब देखो तब आप मेरे पीहर का क्यों बखान किया करती हैं ? आप मुझे कुछ भी कह दीजिये, लेकिन मेरे पीहर के बारे में मैंकुछ भी सुनने के लिये तैयार नहीं ।

सास—तुम मेरी ज़ुबान बन्द करती हो क्या ?

छोटी बहू—तो आपको मेरे माता-पिता तक जाने का क्या हक़ है, उन्होंने आपका क्या बिगाड़ा है ?

सास—और क्या करते थे,तू इससे भी ज्यादा कराना चाहती थी क्या ? अब बता, इन तरकारियों को तेरे सर में डालूँ क्या ?

बहू—हाँ लीजिये, डालिये न ! फिर तो ख़ुश हो जाइयेगा।

सास—देख बहू ! तेरी तो ज़ुबान चल रही है और मेरे फिर हाथ चलने लगेंगे। सीधी सीधी तेरे माजने से रह जा।

बहू—लेकिन मैं भी तो कह रही हूँ—आप अपनी ज़ुबान और हाथ दोनों मुझ पर चलाइये, मैं इसके लिये तैयार हूँ।

सास—बड़ी हक़ समझाने वाली है। कल की छोकरी, दो अक्षर लिखना-बाँचना सीख गई, तो मेरी बराबरी करने चली है। तेरा यह बीबीपना इस घर में नहीं चलेगा। यह कोई बिगड़े बाबुओं का घर नहीं है, जिनकी बहुएँ अपने ख़समों के साथ हाट बाज़ारों में डोलती फिरती हैं। यह मेरी पुरखों की धुली-धुलाई गृहस्थी है जिस पर न तो पुरखों ने कोई दाग़ धब्बा पड़ने दिया और न मैं पड़ने दूंगी। समझी !

बहू - आपकी बातों को समझने के लिये मेरे पास बुद्धि भी हो !

सास - बुद्धि तो तुम्हारी यह चौड़े आ रही है न, जो सारी रसोई का सत्यानाश कर दिया। मेरे यहाँ तो ऐसी रसोई को कुत्ते भी नहीं सूंघते। भेजती हूँ अभी सारा सामान तुम्हारी माँ के पास। पाँची ! ओ पाँची ! (ज़ोर से आवाज़ लगाती है) वह भी तो परखे तुम्हारे इन पकवानों को।

[विजया का प्रवेश]

सास—पाँची, ओ पाँची !

विजया—क्या है माँ ! भाभी पर क्यों खपा हो रही हो ? जल्दी में रसोई बनाई है, कुछ उन्नीस-बीस रह गई होगी।

सास—तू बड़ी दया दिखाने वाली आई है। तुम्हारी इस भाभी को भी देखा जो मेरे मुँह लग रही है। रास्ते, मोहल्ले की कोई लुगाई तो मुझे जी से तू नहीं कह सकती और यह मेरी बहू होकर मेरे साथ जबाब-सवाल कर रही है। मैं दो मिनिट में उड़ा दूँगी इसकी यह ज़ुबानदराज़ी।

विजया—लेकिन बात न बात का नाम, माँ ! तुम तो तिल का ताड़ खड़ा कर देती हो। भाभी तो बेचारी इतनी सीधी जो चुप-चाप तुम्हारी खरी-खोटी को खून की घंट की तरह पीती जा रही है और तुम्हें फिर भी इसके कलेजे में बर्छी सी चलाते कुछ भी विचार नहीं आता।

सास—हाँ, मेरे ही मत्थे दोष मंढकर बहू को सर चढ़ा दो। राम ! राम !! यह मेरी लड़कियों का मन भी मेरी तरफ़ से फिरा रही है।

बहू—विजयाजी ! आप क्यों बुराई के सिर जाती हो, चुप रह जाओ बाबा ! जो इनको कहना है कह डालने दीजिये।

सास—ए-हे-हे-हे कैसी मीठी छुरी बन रही है, जैसे मैंने ही कोई क़सूर किया है। मेरी ही तो रसोई का नाश कर दिया और मुझे ही उल्लू बना रही है।

विजया—बस रहने दो माँ ! मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ।

(बड़ी बहू जो पीछे से सुन रही थी, आ कर)

बड़ी बहू—तो सासजी ! अब क्या फ़ायदा है, तरकारियां बिगड़ गई हैं तो मैं दुबारा से बना दूंगी । आपने आज उपवास तो अलग किया है, मन में रोष करने से उपवास और बिगड़ जायगा।

(वीणा दौड़ी-दौड़ी आती है)

वीणा—माँ, माँ ! रोटी तरकारी बन गई क्या ?

माँ—तेरी छोटी भाभी ने तेरे लिए खूब ही उम्दा रसोई बनाई है, भर पेट खाइयो।

(वीणा ढक्कन उठा कर तरकारियों को देखती है)

बड़ी बहू—बाई सा० रहने दीजिये। थोड़ी देर अपनी पोथी और घोख आइये। मैं अभी फिर से तरकारियाँ बना देती हूँ।

वीणा—क्यों, क्या हुआ इन तरकारियों में ?

बड़ी—बनाने में बिगड़ गई होंगी साहब, आदमी का ही तो हाथ है।

वीणा (तरकारियाँ ग़ौर से देखती हुई) माँ ! यह तो खाटे में किसी ने ऊपर से पानी डाल दिया है । देखो न, नीचे बिल्कुल पका और गाढ़ा खाटा पड़ा है और ऊपर से पानी तैर रहा है।

बड़ी—(देख कर) जी नहीं, यह तो कम चलाया गया है, सो फट गया मालूम होता है ।

वीणा—और देखो न, इन शाकों में हल्दी और मिर्च अलग से कैसे पड़ी हुई दिखाई दे रही है।

बड़ी—अब हो गया सो होगया। बाईसा, आप हाथ धोए धुलाये बिना क्यों सारे सामान को छू रही हैं।

सास—अरी मानती नहीं छोरी ! जाने कैसी-कैसी जात की छोरियों से छू कर तो स्कूल से आती है और उन्हीं कपड़ों से रसोई के सामान को हाथ लगा रही है। [वीणा भाग जाती है]

[बड़ी बहू सब सामान को उठा कर एक तरफ रखने लग जाती है]

(पाँची का प्रवेश)

पांची—क्या है बहू जी, आपने मुझे बुलाया ?

विजया—जा-जा, तेरा काम कर कुछ नहीं।

[पाँची चली जाती है]

सास—[बड़ी बहू से] बना लो भाई बहू, जल्दी से बना लो।

[सास और बड़ी बहू चली जाती हैं।]

छोटी बहू—[विजया से] मेरी तो ऐसी ही तक़दीर है। आप मेरा पक्ष लेकर बीच में क्यों बोलती हैं। अम्माजी को यह वहम होता है कि मैं आपको उनके खिलाफ़ बरगला रही हूँ।

विजया—तुम्हारी जैसी नेक और सरल मिज़ाज के साथ माँ का यह व्यवहार देख कर मैं तो शर्म से गढ़ जाती हूँ भाभी !

पटाक्षेप

सातवाँ दृश्य

स्थान—नौरंगीलालजी का मकान

[सुधा मकान में इधर-उधर पांची को देखती हुई आवाज़ लगाती है]

सुधा—पांची ! पांची !

[प्रेम का प्रवेश]

सुधा—अरे प्रेमजी ! पांची कहाँ है ? [धीरे से]

प्रेम—कौन, पाँची !

सुधा—हाँ, हाँ, पाँची।

प्रेम—वह पिछवाड़े में झाड़ू लगा रही है।

सुधा—जाओ, उसको बुला कर ले आओ। देखो, शोर मत करना। [प्रेम चली जाती है]

[सुधा इधर-उधर घूमती है और बार-बार इधर-उधर झाँकती है]

[बड़ी बहू का प्रवेश]

[बड़ी बहू को देख कर सुधा कुछ सहम जाती है और अपने हाथ में रखे लिफ़ाफ़े को छिपाने की कोशिश करती है, लेकिन बड़ी बहू चालाकी से देख लेती है]

बड़ी बहू—बीनणी जी, क्या कर लिया ?

सुधा—[चौकन्नी सी झाँकती हुई और टहलती हुई सी] जी कुछ नहीं, यों ही कुछ कपड़े लत्ते समेट कर आई हूँ।

बड़ी बहू—ओहो, यह साड़ी तो आज ही आपको पहने देखा है। बिल्कुल नई नकोर है, मद्रास से उन्होंने भेजी दीखे।

[पास जाकर देखती हुई]

सुधा—जी। [अनमनी सी होकर]

बड़ी—कुँवर साहब ने भेजी दीखे!

सुधा—जी। [अनमनी सी होकर]

बड़ी—[ताज़ुब करती हुई] यह साड़ी मद्रास से कुँवरसाहब ने भेजी है!

सुधा—जी नहीं, यह तो ब्याह के वक्त मेरे मामा ने दी थी।

बड़ी—सुना है मद्रासी साड़ियाँ बहुत बढ़िया और चलाऊ होती हैं।

सुधा—जी।

बड़ी—दो चार जोड़े मगां दीजिए न।

सा०सुधा—ससुरजी से चिट्ठी लिखा दीजिए आजायेंगी।
छोरि बड़ी—अजी ससुरजी की चिट्ठी से कौन लाता है। आप ही
ग० लिख दीजियेगा, आप भी तो चिट्ठी लिखती होंगी!

सुधा—आज तक तो ऐसी कोई जरूरत पड़ी नहीं।

बड़ी—अजी रहने भी दो; क्यों बातें बनाती हो।

सुधा—तो मत मानिये, मैं क्या आप से जबरदस्ती करती हूँ।

बड़ी—अब कब तक आजायेंगें ?

(सुधा प्रेम और पाँचों को आती हुई देखकर इशारे से रोकती है)

सुधा—जी

बड़ी—अब कब तक आजायेंगे कुँवर साहब।

सुधा--जब भी उन्हें अपने माँ बापों से मिलने की मन में आयेगी।

बड़ी—और आपकी नहीं।

सुधा—यहाँ तो ऐसी जरूरत ही नहीं है।

बड़ी—रहने भी दो; एक एक पल प्रहर सा बीतता होगा।

✓ सुधा—यहाँ तो आपके प्रताप से एक एक प्रहर पल सा लगता है।

बड़ी—सो तो आप पढ़ी लिखी हैं; बात बनाने में चतुर हैं।

सुधा—तो यह सही साहब आपके प्रताप से एक एक पल प्रहर सा बीतता है, क्यों यह तो ठीक है ना ?

बड़ी—हाँ साहब! आप जो भी कहें सो ठीक है (थोड़ी दूर जाकर और फिर पीछे मुड़कर) हाँ बीनणी जी मेरा वह कब्जा तो पूरा करवा दीजिए। पड़ा है बेचारा कई दिनों से।

सुधा—मैं अभी आई आप कमरे में चल कर निकालिए

(बड़ी बहू चली जाती है लेकिन थोड़ी दूर जाकर छिप जाती है)

सुधा—(धीरे से) प्रेमजी (हाथ के इशारे से) आजाइये २

(प्रेम और पाँची का प्रवेश)

सुधा—देखो पाँची, तुम वह चिट्ठी डालने का बम्बा जानती हो न !

पाँची—हां हां जानती हूँ

सुधा—कहाँ है ?

पाँची—वह लाल कटले के सामने।

सुधा—ना ना वह बम्बा तो देशी चिट्ठी डालने का है उसके आगे थोड़ी दूर जाकर एक लाल बम्बा और है।

पाँची—वह बड़ा सा लाल लाल

प्रेम—और मैं बताऊं पाँची। उस रोज हम बड़े दादा के साथ वायल और नर्मा लाये थे ना।

पाँची—हां, हां।

प्रेम—बस उसी दूकान के सामने है।

पाँची—हाँ समझ गई।

सुधा—तो यह लिफाफा ले जाओ

पाँची—(लिफाफा लेने को होती है) लाइये।

सुधा—देखें तुम्हारे हाथ बताना।

पाँची—यह देखिये बिल्कुल साफ़ हैं।

सुधा—लो जरा इस रूमाल से पोंछ लो।

पाँची—(पोंछ कर) यह लीजिये बिल्कुल साफ़ हो गये

सुधा—(लिफाफा देती हुई) लेकिन तुम इसे रक्खोगी कहाँ ?

पाँची—हाथ में रखलूँगी।

सुधा—देखें प्रेमजी, मेरे कमरे में से एक अच्छी सी किताब ले आओ ।

(प्रेम दौड़ कर किताब ले आती है)

सुधा—(किताब का कवर खोल कर उसमें वह लिफाफा रख देती है) देखो पाँची, मैंने यह लिफाफा रख दिया है। तुम उस लेटर बक्स-मतलब उस लाल बम्बे के पास जाकर यह लिफाफा इस किताब में से निकाल कर डाल देना। (पांची जाने को होती है) देखो सासजी या और कोई मिल जाय तो कह देना कि अरएय बाला के मकान पर यह किताब देने जारही हूँ ।

पाँची—अच्छा (जाने को होती है)

सुधा—ठहरो पाँची तुमको इस बार उनकी सालगिरह की मिठाई मिली या नहीं।

पाँची हां कब खिलाई आपने ?

सुधा—लो यह दो आने। आते वक्त बाजार से इनकी मिठाई ले आना।

पाँची - बहुत अच्छा

सुधा—देखो होशियारी से डालकर आना। लो आओ प्रेमजी

(सुधा और प्रेम चली जाती है)

बड़ी बहू - (सामने आकर) पाँची !

पाँची - (उसकी ओर झांक कर) क्या है बहूजी ?

बड़ी—यहां आ तो। (आ जाता है) एक काम करोगी मेरा पाँची ?

पाँची—कहिए ?

बड़ी—देखो मैं तुम्हें बहुत सारी मिठाई खिलाऊंगी, कांच की चूड़ियाँ दूँगी। एक बात पूछूँ पाँची बताओगी ?

बड़ी—अभी छोटे बीनणी जी ने तुमको क्या क्या बातें कही ?

पाँची—ऊं हूं यह तो नहीं बताऊंगी बहूजी।

बड़ी—अच्छा वह कहाँ है ?

पाँची—वह क्या ?

बड़ी—अरे वह लिफ़ाफ़ा।

पाँची—लिफ़ाफ़ा कौनसा, मेरे पास तो कोई लिफ़ाफ़ा नहीं है।

बड़ी—(पांची के हाथ में से किताब लेकर-) देखें इस किताब में क्या है ?

पाँची—देखिए बहूजी यह किताब मुझे वापस दीजिए। यह मैं आपको नहीं दूंगी। क्यों देती है क्या ! तो मैं लगाती हूँ अभी छोटे लाड़ी साहब को आवाज़।

(इतने में बड़ी बहू किताब के कवर में से लिफाफा निकाल लेती है और उसके ऊपर का पता पढ़ने लग जाती है--)

पाँची—छोटे लाड़ी साहब ! (जोर से आवाज़ लगाती है)

(सास का प्रवेश)

सास—क्या है पांची ?

पांची—देखिए बीनणी जी ने मुझ से यह किताब छीन ली।

बड़ी—कुछ नहीं साहब; मैं तो यह किताब देख रही थी सो यह लिफ़ाफ़ा निकल पड़ा।

सास—कैसा लिफ़ाफ़ा है !

(प्रेम आकर देखकर चली जाती है)

बड़ी—यह देखिये। (दिखाती हुई)

सास—किसका है ?

बड़ी—पता नहीं, पता तो छोटे बाबूजी का है।

सास—किसने दिया तुमको पाँची ?

पाँची—(चुप रहती है।)

सास—यह लिफ़ाफ़ा किसने दिया तुमको पाँची! बोलती नहीं।

पाँची—(चुप रहती है।)

सास—(पाँची को झिझोड़ कर) आखिर लिफ़ाफ़ा तुमको किसने दिया ? बोलती है या नहीं चांटा लगाती हूँ अभी।

पाँची—(चुप रहती है)

सास—(चांटा मार कर) बोल यह किसने दिया लिफ़ाफ़ा ?

सुधा—(हांफती सी आकर) मैंने दिया है यह लिफ़ाफ़ा।

सास—तो आज मालूम हुआ तू इस तरह चुपके चुपके चिट्ठियां भी चलाती रहती हैं। (बड़ी बहू को) खोलो बहू इस लिफ़ाफ़े को।

सुधा—लेकिन-दूसरों की चिट्ठी खोलने से आपको क्या फायदा मिलेगा।

सास—[उसके झटका मारकर | रक्खो बहू मेरे कमरे में इस लिफ़ाफ़े को। मंढ़ी से लोटने पर उन्हें बताऊंगी कि ये करतूतें हैं आपकी बहू की। चल पाँचो गुस्लखाने में चलकर कपड़े सुखा। खबरदार जो मुझ से छिपा कर कोई काम किया।

(तीनों चलीजाती हैं)

(सुधा सिसकियाँ लेती रहती है)

(बड़ी बहू का प्रवेश)

बड़ी बहू—माफी चाहती हूँ बीनणी जी! मेरी ही गल्ती से आपको सासजी के सामने शर्मिन्दा होना पड़ा।

सुधा—(चुप रहती है)

बड़ी—मुझे क्या मालूम था कि आपने वह चिट्ठी उन्हीं को लिखी है।

सुधा—(चुप रहती है)

बड़ी—आप ही ने अभी कहा था कि मुझे चिट्ठी देने की कोई जरूरत नहीं पड़ती है।

सुधा—(खीज कर) बस हटजाइये मेरे सामने से, आप क्यों मेरे पीछे पड़ी हुई हैं, आपका कोई बिगाड़ तो नहीं किया था मैंने।

(सुधा चलीजाती है)

बड़ी—(अपने आप) बस हटजाइए मेरे सामने से। बड़ी हटाने वाली आई मुझे (लिफाफा खोल कर पढ़ती है। आधा पत्र पढ़ लेने के बाद—पाँची का प्रवेश)

बड़ी—(पैरों की आहट सुन कर पत्र बन्द कर लेती है और अपनी आँख में से मच्छर निकालने का बहाना करती है)

पाँची—आपको सेठानी जी बुला रही हैं।

बड़ी—क्यों क्या काम है ?

पाँची—यह तो कुछ नहीं बताया।

बड़ी—अकेले हैं या और भी कोई है ?

पांची—सेठजी अभी आये हैं, उनसे बातें कर रही हैं।

बड़ी—अच्छा तुम चलो मैं अभी आई। कहना जरा आंख में मच्छर गिरगया सो उसको निकाल कर अभी आ रही हैं।

पाँची—अच्छा। (चली जाती है)

(पत्र समाप्त होने के पहले ही वीणा का प्रवेश)

वीणा—भाभी सुनती नहीं अम्मा आवाजें लगा रही हैं। (बड़ी बहू को आँख मलते देख कर) क्यों क्या हुआ भाभी ?

बड़ी—अजी आँख में मच्छर गिर गया, निकलता ही नहीं है।

(नेपथ्य में से सेठानी जी की आवाज़ आती है)

बड़ी—हाँ आई। जाओ वीणा बाईजी कहदो आँख में मच्छर गिर गया सो उसे निकाल कर अभी आई।

वीणा—अच्छातो जल्दी ही चली आओ। -(चली जाता है)

[नेपथ्य से सेठानी जी की आवाज़ आती है]

बड़ी—[अपने आप] अरे बाबा क्या आदमी है, मुँह से जुबान छोड़दी सो छोड़ ही दी।

[पत्र पूरा पढ़ लेती है और उसके बाद चली जाती है]

आठवाँ दृश्य

स्थान—सुधा का कमरा

(सुधा उदास और मलिन मुख से बैठी है और दुःख पूर्ण आवाज़ के साथ कुछ गुनगुना रही है।)

उम्मीद मुझको क्या थी, पर हो यह क्या रहा है।
क्या क्या उमंगें लेकर जीवन शुरू किया था,
दिल में नया निराला आलम खड़ा किया था,
पर क्यों कोई बना कर इन सबको ढा रहा है ॥१॥

बचपन की जिन्दगी से घर की यह जिन्दगी क्या,
लड़ने झगड़ने रोने जलने की जिन्दगी क्या,
संताप दिल ही दिल में दिल को जला रहा है ॥२॥
सासू बहू के झगड़े रौरव मचा रहे हैं,
बहुओं के भेद घर में क्या रंग ला रहे हैं,
सुपने में दृश्य वो ही नयनों में छा रहा है ॥३॥

(विजया का प्रवेश)

विजया—भाभी उदास क्यों खड़ी हो ? क्या तबियत खराब है ?

सुधा—नहीं तो, उदास कहाँ हूँ, तबियत बिल्कुल अच्छी है।

विजया—भाभी मुझ से ही छिपाती हो क्या, मैं नहीं देखती हूँ तुम रात दिन रो रोकर शरीर का नाश करती चली जा रही हो।

सुधा—(रोने लगती है)

विजया—भाभी तुम्हें अपने शरीर का भी तनिक ख़याल नहीं। बदन पहले से कितना गिर गया है ! कैसी रूखी सूखी सी हो रही हो।

सुधा—मैं क्या करूँ विजयाजी ! मेरी पढ़ाई लिखाई के दिन जब याद आते हैं तो अपने आप रुलाई आ जाती है। कहाँ वे दिन जब हर घड़ी हँसी ख़ुशी और उल्लास में व्यतीत होती थी और कहाँ ये दिन जब हर घड़ी रंज, ग़म, और उदासी में गुज़रती है। मैं जब मेरी समकक्ष सहेलियों की सोसाइटी को याद करती हूँ तो दिल फटने लगता है। ओ हो ! उस जीवन में कितनी चहल पहल थी, कितनी आज़ादी थी ! पढ़ना, लिखना, खेल कूद, सहेलियों की प्यारी प्यारी बातें। कभी किसी पार्टी में भाग ले रहीं हैं, कभी किसी

जल्से का आयोजन कर रही हैं, आज किसी सभा का अधिवेशन है तो कल किसी टूर्नामेण्ट का प्रोग्राम है—कितने आनन्द और उल्लास का जीवन था वह—सच विजयाजी मुझे तो ऐसा लगता है कि उपवन में विचर ने वाले पंछी को ब्याह एक ऐसे पिंजड़े में बन्द कर देता है—जिसका मुँह कभी खुलता ही नहीं।

विजया—तुम ठीक कहती हो भाभी। पर परिस्थिति के अनुसार आदमी को अपना जीवन भी बदलना पड़ता है। विद्यार्थी जीवन तो गया। अबतो घर-गृहस्थी में रह कर ही जिन्दगी बसर करनी है। चेष्टा करो इसी जीवन में सुख की उस किरण को ढूंढ़ने की जो तुम्हारे समस्त जीवन को उज्ज्वल कर सके।

सुधा—आप ही बताइये विजयाजी! कहाँ से ढूंढ़ सकती हूँ मैं उस सुख की किरण को। मुझे तो वह किरण घर भर में कहीं भी दिखाई नहीं देती। दिन और रात चौबीसों घंटे क्लेश में बीतते हैं। सास जी को देखिये तो वे नमालूम क्यों हमेशा ही मुझसे चिढ़ी रहती हैं और भाभीजी का तो कुछ ढंग ही समझ में नहीं आता। ऊपर से ऐसी मीठी मीठी बातें बनाती हैं और अन्दर न जाने सासजी को मेरे विरुद्ध क्या क्या भड़काती रहती हैं। मैं मानती हूँ कि घर में खाने, पीने, पहनने की कुछ भी कमी नहीं है। मन चाहा खाओ पीओ, मन चाहा बरतो, पर विजयाजी सबसे पहला सुख तो शान्ति है। जिसके मन को शान्ति नहीं उसके तन को कितना ही आराम पहुँचाया जाय, सुख नहीं मिल सकता। ऐसी हालत में आप ही बताइये—कहां से ढूँढ़ सकती हूँ मैं उस सुख की किरण को।

विजया—मैं मानती हूँ—माँ का स्वभाव कुछ तेज है भाभी! पर तुम उसकी बातों का मन में क्यों विचार लाती हो। थोड़ी

देर के लिए यही मानलो कि उसका स्वभाव ही कुछ तेज़ से बोलने का है। आदमी जिस बात को जैसी लेना चाहे, ले सकता है। रही बड़ी भाभी की बात सो उसे तुम अपनी ओर खींचने की कोशिश करो, उसे कुछ पढ़ने लिखने का लोभ दो। वह आप ही तुम से हमदर्दी रखने लग जायगी।

सुधा—पर मैं उन्हें जितना ही अपनी ओर खींचने की कोशिश करती हूँ उतना ही वे मुझ से दूर हटती जाती हैं। मैं क्या बताऊं, मेरी कोई भी चाल ढ़ाल उनके मन को नहीं सुहाती है।

विजया—यों तो बड़ी भाभी की प्रकृति ही कुछ झगड़ालू और ईर्षालू है।

सुधा—जाने सासजी के ऊपर उन्होंने क्या जादू डाल रक्खा है जो उनके कहे किये जाती हैं।

विजया—असल में बड़ी भाभी एक तो घर का धन्धा बहुत करती है और दूसरे माँ से इतनी मीठी मीठी बातें बनाती है कि माँ को बरबस ही उसके झांसे में आ जाना पड़ता है।

सुधा—घर का धन्धा करने को तो मैं भी करती ही हूँ। हाँ यह बात दूसरी है कि जो काम मुझ से बन नहीं पड़ता उसमें मैं इस डर से हाथ नहीं डालती कि कहीं बिगड़ जायगा तो······

विजया—नहीं तो, मैं कब कहती हूँ कि तुम घर धन्धा नहीं करती हो। करती हो और बड़े सलीके के साथ करती हो।

सुधा—खैर बाबा, इन बातों से क्या मतलब ? किसी को कम आता है, किसी को ज्यादा आता है। कोई कुछ भी करे या न करे। दुनियां में सभी तरह की समझ और योग्यता वाले लोग हैं।

विजया—(अरण्य को आती हुई देखकर) ओ, अरण्यबाला आई है !

सुधा—अरण्यबाला आई है ! आओ अरण्यबाला !

अरण्य—सुधा जीजी, नमस्कार।

सुधा—नमस्कार।

विजया—आज किधर से भूल पड़ीं बहन जी।

अरण्य—ओ हो ! किधर से भूल पड़ीं बहनजी ! जैसे मैं कभी आती ही नहीं हूँ। तुम और सुधा जीजी तो अलबत्ता ईद का चाँद हो रही हो जो किसी जल्से में, सभा में, पार्टी में कभी भी कहीं नहीं दिखाई देती हो। कल सविता देवी के व्याख्यान में गई तो वहाँ भी आँखें फाड़ती रही पर तुम दोनों कहीं नजर ही नहीं पड़ीं ?

विजया—बात यह है अरण्य, भाभी अब गृहस्थाश्रम में पड़ गई है न।

अरण्य—सो तो मैं भी जानती हूँ विजया, पर आजकल तो कुमुद भाईसाहब भी यहाँ नहीं हैं जो घर-गृहस्थी से फ़ुरसत ही नहीं मिलती है। अब कब तक आ जायेंगे कुमुद भाई साहब ?

विजया—पाँच रोज पहले उनकी रवानगी का तार आया था और कल चिट्ठी भी आई थी। उस हिसाब से तो उनको कल ही आ जाना चाहिये था। पर उन्होंने लिखा है–शायद रास्ते में कहीं ठहर जाऊँ तो एक दो दिन देर से भी पहुँच सकूँगा। आप लोग कुछ चिन्ता मत करना।

अरण्य—तब तो आज कल में आने ही वाले समझो। ओ हो ! यह बात है सुधा जीजी, आजकल आप इन्तजारी में मशगूल रहती

हैं। अरे हाँ पर मैं अपनी बात तो भूल ही गई। बात यह है सुधा जीजी, इलाहाबाद से सुलोचना जीजी आई हैं।

सुधा और विजया—सुलोचना बाई आ गई क्या ?

अरण्य—हाँ आज ही सुबह आई हैं—हम सब राष्ट्र-समिति की मीटिंग में जा रही हैं। और उन्होंने आपको भी साथ ले आने को कहा है, इसलिए मैं आई हूँ।

सुधा—पर मैं तो शायद ही चल सकूँ अरण्य।

अरण्य—(हाथ पकड़ कर) नहीं सुधा जीजी मैं तो तुमको लेकर ही जाऊँगी।

सुधा—पर तुम सुनो भी तो।

अरण्य—नहीं मैं कुछ नहीं सुनती हूँ। मत चलो मैं भी यहाँ ही हूँ, करने दो उनको इन्तजार।

विजया—तो जाओ न भाभी! अरण्य बेचारी इतनी उमंग के साथ आई है।

सुधा—लेकिन सासजी से पूछे बिना मैं कैसे चल सकती हूँ ?

अरण्य—हाँ सासजी से मैं पूछ लेती हूँ अभी, बस।

सुधा—लेकिन अभी वे यहाँ नहीं हैं, पार्श्वनाथ स्वामी के मन्दिर दर्शन करने गई हैं।

विजया—आने पर मैं कह दूँगी अम्मा को तो भाभी। तुम जाओ। सुलोचना बाई भी क्या समझेंगी—लो साहब मेरी इतनी सी भी बात नहीं रक्खी।

सुधा—आप तो कुछ समझती नहीं विजयाजी। घर में एक नया तूफ़ान खड़ा हो जायगा।

विजया—इसमें तूफ़ान की क्या बात है ? मैं समझा दूँगी अम्मा को तो कि इलाहाबाद से अरण्य की बड़ी बहन आई हैं। उन्होंने बहुत आग्रह के साथ बुला भेजा तोचली गई।

अरण्य—और अम्माजी तो मन्दिर से आती ही होंगी। रास्ते में मैं उनसे इजाजत ले लूंगी।

सुधा—पर मेरा तो दिल गवाह नहीं देता विजयाजी।

अरण्य—चलो न सुधा जीजी, तुम तो यों ही हर एक बात में तकल्लुफ किया करती हो।

सुधा—नहीं तकल्लुफ़ की तो कोई बात नहीं है अरण्य। पर आदमी को अपने आगे पीछे की सब परिस्थिति सोचनी पड़ती है।

अरण्य—पर देखो न, विजया जब कह रही है और रास्ते में अम्माजी हमको मिल ही जायेंगी।

सुधा—और रास्ते में अम्माजी न मिलीं तो ?

अरण्य—अगर रास्ते में अम्माजी न मिलीं तो लौटते पाँव मैं तुमको वापस पहुँचा दूँगी, बस।

सुधा—अच्छा पर कपड़े तो बदल लूँ।

अरण्य—कपड़े तो सब अच्छे हैं जी। ये कपड़े कौन खराब हैं विजया ?

विजया—हाँ हाँ कोई खराब नहीं।

सुधा—नहीं मैं अभी बदल कर आई। (चली जाती है)

विजया—आजकल तुम्हारी सभा का क्या हाल है अरण्य ?

अरण्य—हाँ ठीक ही है।

विजया—क्यों, ऐसी दबी सी क्यों बोली ?

अरण्य—बात यह है कि महिलाएँ कुछ योग नहीं देती हैं। जिससे कहो वही कुछ न कुछ बहाना बना लेती है। तुम जानती हो हमारे घरों में रगड़े-झगड़े तो कुछ न कुछ लगे ही रहते हैं। और फिर बहनों को कुछ दिलचस्पी भी नहीं है।

विजया—दिलचस्पी क्या हो जी। समाज का कुछ होनहार ही ऐसा है।

अरण्य—होनहार का बनाना बिगाड़ना तो हमारे ही हाथ है।

विजया—तुम्हारी सभाका नाम क्या रक्खा? कौनसी समिति?

अरण्य—गृहसुधारक समिति।

विजया—हाँ, गृहसुधारक समिति। नाम तो बहुत सुन्दर है।

अरण्य—कोरे नाम से क्या जी! असल में तो काम होना चाहिये।

विजया—काम एक दम से तो कैसे हो सकता है, धीरे धीरे समिति सब करने लग जायगी।

अरण्य—सच बात तो यह है कि बहनें और माताएँ अधिवेशनों में आकर हमारी प्रार्थना भी सुनें।

विजया—घाटा तो इसी बात का है और बड़ी महिलाएँ जिसमें और भी कम आती होंगी! वे असल में हमारी सभा-समितियों से कुछ नाराज सी रहती हैं।

अरण्य—मैं हर बार उनसे यही प्रार्थना करती हूँ कि माताओ, आप आकर हमें कुछ सीख दो, कुछ अपनी सुनाओ और कुछ हमारी सुनो; तो जाकर यह नये पुराने का झगड़ा दूर हो सकता है। आप हमसे घृणा करती रहें और हम आपसे डरती रहें, तो कैसे हमारे घरों का सुधार हो सकता है? एक रोज़ मैंने सभा में केवल इतना सा कह दिया कि गहनों और ज़ेवरों से वृद्ध माताओं को क्या मतलब, जो वे मन्दिर में या ग़मी में जाती हैं तब भी हाथों और पांवों में ज़ेवर लादे रहती हैं। मन्दिर और ग़मी में

भी क्या शृङ्गार-सजावट की जरूरत है ? तो बस, एक माता मेरे ऊपर ऐसी बिगड़ीं कि उसने मेरी दादी, पर-दादी तक का बखान कर दिया। यह तो मेरी समकक्ष शान्ता ने समझा-बुझा कर शान्त कर दिया, वरना बात कुछ और भी आगे बढ़ जाती। फिर भी मैंने तो जाते वक्त उनके पाँव पकड़ लिये और कहा, माताजी! कहा सुना माफ करना।

विजया—असल में अरण्य, बड़ी बूढ़ी माताएँ यह ख़याल करती हैं कि ये छोटी छोटी छोरियां हमको क्या सीख देने चली हैं।

अरण्य—बाबा उनको सीख कौन देता है। हमतो उनसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करती हैं।

विजया—लेकिन वे उसे प्रार्थना नहीं समझतीं अरण्य। बात यह है दर असल, जो माताएँ अपने घरों में बहुओं पर नादिर-शाही हुक्म चलाती हैं वे उन्ही के मुँह से अपनी खरी खोटी बुराइयां सुनकर कैसे गवारा कर सकती हैं। वे समझती हैं—ये हमारे इशारे से नाचने वाली कठपुतलियाँ हमको बड़ी बड़ी बातें सुना रही हैं। वे तुम्हारी सीख क्या सुनेगीं अरण्य, उल्टा वे तो तुमको ही आड़े हाथों लेने के लिए हर वक्त तैयार रहती हैं।

अरण्य—हां हां सोतो मैं भी देख रही हूँ।

विजया— इसलिए मैंने कहा न कि हमारे समाज का कुछ होन-हार ही ऐसा है;जो पढ़ी बेपढ़ी और नयी पुरानी माता बहनों में मेल मुरव्वत और आपस में सहानुभूति होना ये लक्षण देखते तो दुस्साध्य ही है और इसी से हमारे घरों की स्थिति सुधरती नहीं है।

अरण्य — सुधरे कैसे। ताली दोनों हाथों से बज सकती है। मैं मानती हूँ-कुछ दोष नवीन शिक्षित बहनों का भी है। पर गृह-कलह और घर के क्लेशों में तुम ज्यादा हाथ पुरानी सासुओं का ही समझो। वे हरएक बात में बेचारी नन्हीं बहुओं पर ऐंठती रहती हैं। वे समझती हैं—जैसे ये हमारी ज़र खरीद दासिया हैं। कोई भी बात कहती हैं तो डांट फटकार कर। मुझे तो कल किसी ने कहाथा--एक सास ने अपनी बहू को चीमटे से ऐसा मारा जो उसका दाहिना हाथ उतर गया। माना कि वे जो कुछ कहती हैं या करती हैं, अपनी बहुओं की भलाई के लिये ही करती हैं। पर विजया प्यार से जो काम निकलता है वह दण्ड से नहीं हो सकता। वे बहुओं को अपनी बेटी के समान समझ कर उनसे कटु या कोमल जैसा भी जरूरत हो व्यवहार करें,पर उनके साथ जैसा व्यवहार किया जाता है, वह ऐसा होता है जैसा एक मालिक अपने नौकर के साथ करता है। फिर बहुओं को भी तहस आजाता है और यही हमारे घर के झगड़े टंटे और क्लेशों की बुनियाद है।

विजया – हाँ तुम बिल्कुल ठीक कहती हो।

अरण्य—ओ सुधा जीजी अभी तक कपड़े बदल कर नहीं आई

विजया—भाभी ! ओ भाभी !

सुधा – (नेपथ्य में से) हाँ आई विजया जी।

(सुधा आजाती है)

अरण्य—विजया, नमस्कार

विजया—हाँ देखो, वापस पहुँचाने के लिए मैं किसी को भेजं क्या ?

अरण्य—नहीं नहीं किसी की भी जरूरत नहीं। मैं घरसे राधा को भेज दूँगी।

(दोनों चली जाती हैं)

नवाँ दृश्य

स्थान—जिन मन्दिर

(जिन मन्दिर में एक बड़ी टेबिल लगी हुई है। उसके उपर एक चांदी का बड़ा सिंहासन है जिस में भगवान की मूर्ति या तसवीर विराजमान है। मूर्ति के ऊपर एक छत्र लगा हुआ है। चारों कोनो में चार चंवर हैं। एक तरफ शास्त्रों की अलमारी है। अन्य आवश्यक सामान यथा स्थान रक्खा हैं। इधर उधर मालायें टंकी हुई हैं एक टेबिल या बेंच सामने पड़ा है जिस पर महिलाएँ अक्षत पुष्प आदि चढ़ा रही हैं। बहुतसी स्त्रियाँ दर्शन करने के लिए आजा रही हैं। उनमें सुधा की सास और सुधाकी जिठानी भी है। कोई माला फेर रही है, कोई दर्शन कर रही हैं। पर्दा उठते ही महिलाएँ स्तुति-गान आदि करती हुई नजर आती हैं।)

एक स्त्री—ॐ जय जय नमोस्तु नमोस्तु णमोअरहंताणं इत्यादि।

दूसरी स्त्री—सकल-ज्ञेय ज्ञायक तदपि निजानन्द रसलीन।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित अरि रज रहस विहीन॥

तीसरी स्त्री—(फेरी देती हुई)तुभ्यं नमोस्तु भुवनार्तिहरायनाथ इत्यादि। (वे तीनो स्त्रियाँ एक साथ बोलती हैं। घंटा बज रहा है और कोलाहल सा हो रहा है। कोई पाँच मिनिट पीछे चार स्त्रियाँ और सास बहू बाहर निकल कर आजाती हैं और पर्दा गिर जाता है।

पहली स्त्री—अजी मैं तो बांका मूंड़ा पर सूंछूं कि जो नई बात है छै या थांका ही घर सं शुरू है छै। थे ही बताओ बीनणी-जी आपणा घरा में आज ताईं भी कोई बहू बिना घूंघटा के बारा न निकली छी कांई।

बड़ी बहू—अजी तो ये सासूजी कांई कर। बांको कोई खबो भी माने। ये तो बिचारा घणा ही भिकभिक करे छै पर बांकी तो कोई चलबा भी तो को न दे।

दूसरी—चन्नो तो यांको ही माननो चाइजे। अजी सासू के सामने बहू की कांई मजाल जो आपकी मनमानी करे।

तीसरी—थे मन देखो। मैं म्हारी बहू न ऐसो जंजरी में काढ़ राखी छै कि बींको कांई मुँह भाग छै जो म्हारी बात न जरा भी टाल दे।

सास—अजी मानजी की माँ या गलती तो म्हारी ही हुई! जो शुरू सं ही मैं बीन डाट डपट कर राखती तो वा इतनी माथ कौन चढ़ती। अब स थे जाणो मैं बीन दो बात ख भी यूछूं तो म्हारा सं जवाब सवाल करबान तैयार होजाव छै।

बड़ी बहू—अजी एक घंघटो ही कांई धोत्ती भी पहन छै तो ईं ढंग की पहन छै जो बीसूँ कोई बाण्या बामण की जात की भी कौन बतावे।

चौथी स्त्री—हे-हे-हे है भारी चोखी लाग सा थाकी बहू! म्हें तो लाडू के दिन मन्दिर में देखी छी। जाण जनाना हस्पताल की नरस आई।

पहली—अजी म्हारासा क्यूं तो बड़कां की रीत राखो। सारी ही क्यों खोवो छो।

सास—अजी म्हारा बस की बात हो तो मैं तो सारी ही राखल्यूं

दूसरी—या तो क्यों खो छो विजयाजी की माँ। थे चावो तो सब कुछ कर सको छो।

सास—अजी काँई म्हारो मूँड करूं। मैं दो बात खूं भी छूं तो मोट्यार भी म्हारा कंठ पकड़े छै।

बड़ी वहू—अजी म्हारी साथणन तो जो मनमें आवे सोही खैयो भलाई। पर बीन सा-वा पढ़ी लिखी रही कुण को मुँह भाग जो बीन क्यं कहदे।

तीसरी—क्योंजो घर को धन्धो करवा में कियाँ कांई छै

बड़ी बहू—जी की साहब या सासूजी न पूछो।

सास--अजी करवान तो करै ही छै पर म्हारा मन लायक कौन करै।

बड़ी वहू—अजी घर को काम धन्धो तो छोड़ो। यां सासूजी न या तो पूछो कि थान कदे या भी आर कही छै क ल्यो सासूजी आज तो थांक पगां क दो मूंठी लगायूं। यांनपूछ ल्यो मैं तो यांका मूंड़ा पर खूंछूं।

चौथी स्त्री--साब म्हान तो थांकी बहू की बातां चोखी कोन लागी।

पहली स्त्री—अजी हाँ आज वांकी वहू तो दस चाल अनोखी चाल रही छै तो काल म्हारी बहू आवली जकी १५ चाल अनोखी चालली

दूसरी—हाँजी योतो देख्या देखी को सोदो छै।

तीसरी—धीर धीर सारा ही घराँ में यो रोग फैल जावलो।

चौथी—म्हाको तो यो कहबो छै विजया जी की माँ थे बड़कां की रीत न मत जाबा द्यो। कियान कियान कर बहू को ढंग सुधारो। लुगाया थांक ही पल्लै बुराई बांध छै।

सास—देखो साब अब मैं भी क्यूं हिम्मत सूं काम लेसूं जणा जार पार पड़सी।

पहली—हां जी जरा दाब दैसत सूं काम ल्यो। पढ़ी लिखी है तो कांई है छ तो थांकी वहू ही न।

सास—देखो साब अब मैं तो बीन सुधारबा में कसर राखूंली कोन। फेर भगवान की मरजी छै।

दूसरी—आछ्या साब ल्यो आओ चालां अब देर ह छै।

सब—हां तो चालां विजया जी की माँ म्हाकी वातां को ध्यान राखज्यो।

सास—आच्छां साब

(सब चली जाती हैं)

दसवाँ दृश्य

स्थान—सुधा के मकान का बाहरी भाग।

(सास और बड़ी बहू मन्दिर से घर बातें करती हुई आरही हैं)

सास—देखा बहू मन्दिर में लुगाइयाँ मेरे कैसी चेंट गईं। मैं तो लाज से जमीन में गड़ गई।

बहू—लुगाइयां बेचारी क्या करें ? वे तो जैसा देखती हैं वैसा कहती हैं। किस किस की जुबान पकड़ सकते हैं हमलोग। बात तो असल में लाज से गड़जाने की ही थी।

सास—तुम्हीं बताओ अब मैं क्या करूँ ? किस तरीके से बहू को समझाऊँ कि तुम पुरखों की चाल मत छोड़ो। अब वह कोई बिल्कुल बच्ची हो तो है नहीं कि उससे मार पीट कर और डाट डपट कर काम लिया जाय।

बहू—नहीं साहब आज कल की पढ़ी लिखी बहुएँ और मार पीट ! राम राम कीजिए सास जी। आपने उस कटले वाले हरखचंद जी की बहू की बात नहीं सुनी क्या ? हरखचन्दजी की स्त्री ने बेचारी ने बहूको इतनासा कहदिया था कि भली आदमण देख भाल कर काम किया कर। तुमने आँखों के ये घाणी के बैल के जैसे डीबे तो लगा लिए फिर भी तुमको आटे में सुलसुले नहीं सूझे, सो उसने तमक कर सास के ऊपर चीमटा उठालिया। वह तो सास ही कुछ गम खा गई,नहीं तो अपस में मार पीट तक की नौबत आ जाय।

सास—अजी यह तो तुम रहने दो । मैं ऐसी वैसी सासुओं में नहीं हूँ।

बहू—नहीं जी, मैंने तो एक बात कही है।

सास - वह हरखचन्दजी की बहू तो निरी डरपोक और कायर है। बहू के आगे थर-थर धूजती है। यह तो मैं जरा नर्मी खींच जाती हूँ कि लो जिग्रड़ा, अभी फिसाद खड़ा हो जायगा। नहीं तो ऐसी एक क्या दस बहुओं को ठिकाने पर ले आऊँ।

सास—सोतो जानती हूँ कि आप अपनी बात और काम के धणी हैं।

(पाँची का प्रवेश)

सास—(पाँची को देख कर) लो देखो, मैं अभी उसको बुलाकर तुम्हारे सामने ही सब बातें तय करलेती हूँ। पाँची !

पाँची—जी सेठानी जी।

सास—देखो ऊपर कमरे में छोटी बहू सोगई या जाग रही है

पाँची—अच्छा जाती हूँ। (चली जाती है।)

बड़ी बहू—सासजी मैं जरा दूध के जावण देदेती हूँ।

सास—अच्छा जाओ देदो। देखो जरा निवाया रख कर ही दूध जमा दिया करो। वरना आजकल कुछ ठंड कासा मौसम आ गया है, इसलिए दही फटा फटा सा होजाता है।

बड़ी—बहुत अच्छा (चली जाती है)

(पाँची का प्रवेश)

पाँची—छोटे बहूजी यहाँ तो नहीं है।

सास—नहीं है ! कहाँ गई ?

पाँची—पता नहीं।

सास—ऊपर और कौन कौन है ?

पाँची—विजया जी बड़े महल में सो रही हैं। वीणा बाईजी और प्रेमजी छोटे कमरे में किताब घोक रहे हैं।

सास—देखो यहीं कहीं होगी, कहाँ जा सकती है।

पाँची—मैं सब जगह देख आई साहब। कहीं भी नजर नहीं आई।

सास—छोटे बाबू के कमरे में देखो, कहीं सो न गई हो।

पाँची—उसके तो ताला लगा है।

सास—(अपने आप) तो फिर कहाँ जा सकती है। (कुछ सोचकर) ओः मैं समझी, गई होगी उसी अरण्य बाला के साथ कही पार्टी वार्टी में। आने दो आज उसको। पाँची !

पाँची—जी सेठानीजी।

सास—देखो एक काम करो।

पाँची—जी सेठानीजी।

सास—पिछवाड़े वाले दरवाजे को बन्द कर तुम बडे दरवाजे पर खड़ी रहो। मैं अभी आई।

पाँची—जी सेठानीजी। (चली जाती है)

ग्यारहवाँ दृश्य ।

स्थान—अरण्य बाला के मकान का बाहरी भाग ।

अरण्य—सुधा जीजी, मुझे तो आज की मीटिंग बहुत पसन्द आई । लेक्चर तुम देखो एक से एक बढ़िया और कितने अच्छे थे ।

सुधा—तुमको मीटिंग की सूझ रही है और मेरा अन्दर से दिल धड़क रहा है ।

अरण्य—क्यों, क्या हुआ सुधा जीजी ?

सुधा—सास जी घर में जाते ही तूफ़ान खड़ा कर देंगी।

अरण्य—इसमें तूफ़ान की क्या बात है, तुम तो यों ही बहम करती हो, सुधा जीजी ।

सुधा—नहीं अरण्य, समय बहुत हो गया है। आज सभा भी मेरी किस्मत की इतनी देर से खतम हुई।

अरण्य – तुमको ज्यादा ही विचार हो तो मैं चलूं तुम्हारे साथ।

सुधा—नहीं नहीं, तुम्हारे चलने की तो कोई जरूरत नहीं है। हां वह राधा आ रही थी ना ।

अरण्य—राधा ! ओ राधा !

(नेपथ्य से "आई") (राधा का प्रवेश)

अरण्य—ओह ! इतनी आवाजें दिये जा रही हूँ, बोलती ही नहीं।

राधा—बड़े बाईजी के कमरे में बिस्तर करने लग गई थी ।

अरण्य—जाओ सुधा जीजी के साथ। उनको घर पहुँचा कर आओ। अरे लालटेन तो ले आई होती।

सुधा—नहीं, लालटेन की क्या जरूरत है? मेरे पास टार्च है।

अरण्य—अच्छा तो जाओ। नमस्कार।

सुधा—नमस्कार

बारहवाँ दृश्य।

स्थान—सुधा के मकान से निकट वर्ती चौराहा।

सुधा—राधा, तुम जाओ। अब मैं चली जाऊँगी।

राधा-अब इतनी दूर आ गई तो ठेठ घर तक ही पहुँचा आऊँ न।

सुधा—अब घर कौनसा दूर है? एक चौराहा ही तो है।

राधा—देखिए कहीं बाईजी मुझे लड़ने न लग जायँ।

सुधा—अरे नहीं नहीं, जाओ तुम कोई नहीं लड़ेगा।

राधा-अच्छा (चली जाती है।)

तेरहवाँ दृश्य

स्थान—नौरंगी लाल जी का घर।

(मकान का बाहरी भाग)

(सास क्रोध के आवेश में इधर उधर दरवाज़े पर घूम रही है। पाँची एक तरफ खड़ी है)

(सुधा का प्रवेश)

(सुधा दरवाज़े पर आकर सास को विकराल अवस्था में देखकर डर जाती है और सास की निगाह से बचती हुई कतरा कर निकलना चाहती है । पर सास की निगाह उस पर पड़ जाती है)

सास—(कड़क कर) ठहरो !

सुधा—(ठहर जाती है)

सास—इधर आओ।

(सुधा दुबकती हुई सी सास के सामने आकर खड़ी हो जाती है)

सास—तुमको इस घर में रहना है ?

सुधा—(चुप रहती है।)

सास—तुमको इस घर में रहना है ?

सुधा—(चुप रहती है।)

सास—जवाब दो, तुमको इस घर में रहना है या नहीं ?

सुधा—आपको विजया जी ने कहा होगा न।

सास—विजया ने कुछ कहा हो या न कहा हो, पर मैं पूछती हूँ तुमको इस घर में रहना है या नहीं ?

सुधा—बात यह थी कि अरण्य बाला की बड़ी बहन आज ही ससुराल से आई थी और उसने बहुत आग्रह के साथ बुला भेजा तो मैं उसके साथ मीटिंग में चली गई।

सास—तो तुम मीटिंग में गई थी। मैं तो समझ रही थी कि यों ही अपनी किसी सहेली के साथ गई होगी। पर तुमने मीटिंग का नाम लेकर तो और भी मेरे कान खोल दिये ।

सुधा—लेकिन ····· ·········

सास—मैं लेकिन-वेकिन कुछ नहीं जानती। आज तक मैं

तुम्हारे रंग ढंग देखती रही और बरदास्त करती रही पर अब बरदास्त नहीं कर सकती।

सुधा—मेरी ग़लती हुई जो मैं आपसे बिना पूछे मीटिंग में चली गई। मैं माफ़ी चाहती हूँ।

सास—नहीं, मैं इस समय और भी सब बातें तुमसे तय करना चाहती हूँ।

सुधा—और सब बातें कौनसी ?

सास—वादा करो कि कल से ही—

१ पल्ला निकाल कर बाहर जाऊँगी।

२ पुराणी आबरू के कपड़े पहन कर बाहर निकलूंगी।

३ अपनी घर की आबरू के माफिक गहने भी पहनूंगी।

४ बाजा और किताब हाथ से नहीं छुऊँगी।

५ घर के हर एक काम धन्धे में पूरी मदद करूंगी।

सुधा—घर के काम धन्धे में तो मैं पहले से ही अपनी योग्यता के मुआफ़िक मदद कर रही हूँ। और बाकी चार शर्त्तों का मैं कुछ सोच कर जवाब दे सकती हूँ।

सास—नहीं सोचना सुचाना कुछ नहीं। मैं इसी समय दो टूक जवाब चाहती हूँ। हां या ना।

सुधा—अगर मैं कहूँ कि इन चार शर्त्तों को मानने के लिए मैं तैयार नहीं, तो।

सास—तो तुम्हारे लिए भी इस घर में जगह नहीं।

सुधा—तो फिर सोच कर क्या करना है, आप अभी ही दो टूक जवाब चाहती हैं न ?

सास—हां अभी चाहती हूँ।

सुधा—पहली चार शर्त्तों को मानने से मैं इन्कार करती हूँ।

सास--तो मैं भी तुमको इस घर में रखने से इन्कार करती हूँ।

सुधा--लेकिन शायद आप भूल रही हैं-मैं इस घर की बहू हूँ, दासी नहीं।

सास--सास के सामने दासी और बहू दोनों एक चीज हैं। यह घर मेरा है और मैं जब कभी चाहूं तुमको निकाल सकती हूँ।

सुधा--आप याद कीजिए-आप भी कभी इस घर में बहू बन कर आई थीं।

सास--तुम मुझसे जबाब देही करती हो क्या ?

सुधा--मैं क्या करूँ-सवाल आपने आप जवाब चाहता है।

सास--पाँची दरवाजा बन्द करदो। बन्द करो दरवाजा।

(सुधा कुछ देर ठहर कर चली जाती है।)

(पर्दा गिर जाता है)

चौदहवाँ दृश्य।

स्थान--अरण्यबाला के मकान का बाहरी भाग।

सुधा--अरण्यबाला ! अरण्यबाला !

(नेपथ्य में से कौन है)

सुधा--यह तो सुधा है, किवाड़ खोलो, अरण्यबाला।

(अरण्यबाला का प्रवेश)

अरण्य--क्यों, क्या हुआ सुधा जीजी ? इतनी घबराई हुई क्यों हो ?

सुधा--मैं कहती थी न कि आज घर में जाते ही जरूर कुछ न कुछ उत्पात मचेगा। मैं तो जब व्याख्यान सुन रही थी तभी मेरी

दाहिनी आँख बराबर फड़क रही थी।

अरण्य—लेकिन हुआ क्या जीजी ?

सुधा—सासजी ने मुझे घर से निकाल दिया।

अरण्य—घर से निकाल दिया!

सुधा—हाँ अरण्य।

(नेपथ्य में से—अरण्य-अरण्य)

अरण्य—सुधा जीजी अम्माजी आवाज़ लगा रही हैं। आई माँ। मैं अभी आई। (चली जाती है)

(सुधा सोच में घूम रही है। अरण्यबाला आती है)

सुधा—क्यों, क्या बात थी ? पूछा होगा कौन आया है।

अरण्य—हाँ मैंने कहा-सुधा जीजी आई है।

सुधा—और क्या कहा तुमने ?

अरण्य - कुछ नहीं, सासजी से कुछ बोलचाल हो गई तो गुस्से में चली आई।

सुधा—तो उन्होंने क्या कहा ?

अरण्य—उन्होंने कहा-इस तरह से बचपन नहीं करना चाहिए। सास से बोलचाल हो भी जाय तो कुछ धीरज से काम लेना चाहिए। अब भी अच्छा यही है कि वह घर वापिस चली जाय।

सुधा—लेकिन मैं यहाँ रहने के लिये थोड़ी ही आई थी।

अरण्य—तुम तो सुधा जीजी उल्टी पड़ रही हो। चलो न अन्दर, अब रात को और कहाँ जाओगी। सुबह होते ही मैं खुद तुमको तुम्हारे ससुराल पहुँचा आऊँगी और हाथ जोड़कर तुम्हारे सासजी से माफ़ी माँग लूँगी कि मेरी ही ग़ल्ती हुई जो मैं आपके बिना पूछे सुधा जीजी को मीटिंग में ले गई।

सुधा—नहीं अरण्य, एक मीटिंग ही क्या वहाँ तो और भी कई भूतभरे पड़े हैं।

अरण्य—तो पहले तुम अन्दर चलो, फिर सब सुनाना। चलो न सुधा जीजी, चलो सुधा जीजी। चलती नहीं हो क्या? मैं अन्दर से अम्माजी को बुलाकर लाती हूँ। (अन्दर चली जाती है)

(सुधा रास्ते की तरफ़ चली जाती है)

पन्द्रहवाँ दृश्य

स्थान—सुधा का घर

(आमने सामने से सास और पाँची का प्रवेश)

सास—(घबराती हुई सी) पाँची! विजया को जगाकर लाओ। जाओ, जल्दी लाओ।

सास—(अपने आप) 'आप भी इस घर में कभी बहू बनकर आई थीं'। ओः यह मैंने क्या किया? आवेश में आकर बेचारी बहू को घर से बाहर निकाल दिया। लेकिन मैं क्या जानती थी कि बातों ही बातों में नौबत यहाँ तक पहुँच जायगी।

(विजया, वीणा और प्रेम का घबराहट के साथ प्रवेश)

तीनों—क्यों क्या हुआ माँ?

सास—जाओ, विजया तुम जाओ। छोटी बहू कोई इसी चौराहे तक गई होगी।

विजया—लेकिन वह गई कहाँ है?

सास—यह सब पीछे बताऊँगी। मेरी ही ग़लती हुई सो मैंने आवेश में उसको..."""अच्छा जाओ जाओ तुम देर न करो। वह गुस्से में कुए बावड़ी में गिर पड़ेगी तो बेटी, गज़ब हो जायगा।

(विजया जाने को होती है)

सास—ठहरो, लालटेन लेती जाओ ! पाँची ! लालटेन लाओ लपक कर ।

वीणा—मैं अभी लाई । (वीणा ले आती है)

वीणा—अम्मा, मैं भी जीजी के साथ जाती हूँ ।

सास—हाँ जाओ जाओ ! एक और एक ग्यारह का काम देते हैं ।

प्रेम—मैं भी साथ जाऊँगी माँ ।

(वीणा और विजया चली जाती हैं)

सास—तुम बालक हो, अभी सो रहो ।

प्रेम—नहीं नहीं, मैं भी जाती हूँ । जाने भाभी का क्या हुआ होगा ? (ज़ोर से आवाज़ लगाकर) ठहरो विजया जीजी ! मैं भी आती हूँ । (चली जाती है)

(पाँची का प्रवेश)

पाँची—छोटे बाबू साहब आगये सेठानी जी ।

सास—मेरा कुमुद आ गया ! ओः मैं उसको कैसे मुँह दिखाऊँगी । बहू के लिये पूछेगा तो क्या जवाब दूँगी ? हे ईश्वर ! हे महावीर स्वामी ! तू ही मेरी लाज रखना ।

(सास पाँची के साथ चली जाती है)

सोलहवां दृश्य

स्थान—रास्ता

विजया—भाभी ! (आवाज़ लगाती है)

वीणा—(लालटेन ऊँची करके) भाभी !

प्रेम—भाभी !

विजया—कहीं दिखाई ही नहीं देती है, वीणा !

वीणा—अब क्या होगा जीजी ?

प्रेम—भाभी !

वीणा—देखो कोई इधर आ रहा है। (लालटेन ऊँची करके)

(फूल बेचने वाली एक मालिन का माथे पर फूलों का टोकरा लिए प्रवेश)

विजया—तुमने एक बड़ी सी लड़की को इधर जाते देखा ?

मालिन—कैसी लड़की ?

वीणा—नीली धोती और नीला ही सलूका पहने थी।

विजया—अरे नहीं-नहीं, अरण्यबाला के साथ गई तो वह साड़ी बदल कर गई थी। आसमानी रंग की साड़ी पहने थी मालिन !

(मालिन सोचने लग जाती है)

प्रेम—जल्दी बताओ मालिन !

मालिन—साड़ी पहने तो मैंने इधर किसी लड़की को जाते हुए नहीं देखा। एक काला लहंगा और हरा पोमचा ओढ़े बड़ी सी लुगाई को इधर जाते जरूर देखा है। क्यों, कोई आपके साथ की बिछुड़ गई है क्या ?

वीणा—हाँ मालिन, वह हमारी भाभी है।

मालिन—तो इसमें फ़िक्र की क्या बात है बेटी ! वह आप ही घर पहुँच जायगी।

विजया—तुम समझती नहीं हो मालिन ! चलो वीणा और प्रेम ! आगे बढ़ो।

(चली जाती हैं)

सत्रहवाँ दृश्य

स्थान — रास्ता

(सुधा का भय और लज्जा की हालत से प्रवेश । सुधा एक तरफ से दूध बेचने वाली को और एक तरफ से सब्ज़ी बेचने वाली को देखती है और उनकी आंखों से बचने की कोशिश करती है और उनके चले जाने के बाद कुछ देर के लिए निस्तब्ध और निश्चल भाव से खड़ी रह जाती है ।)

[नेपथ्य से आवाज़]

"वादा करो कि कल से ही तुम पल्ला निकाल कर बाहर निकलोगी। इज्जत-आबरू के कपड़े पहन कर बाहर जाओगी। अपने घर की आबरू के माफ़िक गहने, कपड़े पहनोगी । बाजा और किताब हाथ से नहीं छुओगी।"

(अकस्मात विजया, वीणा और प्रेम का प्रवेश)

(तीनों सुधा को देखते ही हांफती सी 'भाभी' कह कर उसके चारों ओर खड़ी हो जाती हैं)

विजया—कहाँ चली जा रही हो भाभी! ढूंढते ढूंढते हम तो पागल होगये। बेचारी प्रेम और वीणा का 'भाभी भाभी' चिल्लाते गला बैठ गया। गल्ती असल में मेरी ही हुई जो मैंने तुम्हें अरण्यबाला के साथ मीटिंग में भेज दिया । मैं क्या जानती थी कि बिस्तरों पर पड़ते ही मुझको नींद आ घेरेगी। वरना मन्दिर से आते ही मैं माँ को सब समझा देती और उसको इतना तूफ़ान मचाने का मौक़ा ही नहीं आने देती। उसको भी अब होश हुआ

है जब तीर कमान से निकल गया। बेचारी बछड़ा खोये गाय की तरह पागल हो रही है। चलो भाभी!

सुधा--आपको मालूम नहीं विजया जी, आज मेरे और सासजी के कितनी ठहरी है और नौबत कहाँ तक पहुँच गई है?

विजया--मुझे सब मालूम है,अम्मा का गुस्सा दूध का उफ़ान है। जब आता है तो बिल्कुल आपे के बाहर हो जाती है, और फ़िर होश आने पर उन्हीं बातों को याद करके पछताया करती है। पर इसमें माँ का क़ुसूर नहीं है, भाभी। झगड़े की जड़ तो असल में बड़ी भाभी है जो हर वक्त माँ के कानों में फूंक भरा ही करती है।

सुधा--मैं सब जानती हूँ, विजयाजी। पर मैं अभी घर चलने को किसी तरह तैय्यार नहीं।

विजया--नहीं भाभी, तुमको घर चलना ही पड़ेगा। मेरा इतना सा भी कहा नहीं करोगी क्या?

प्रेम--भाभी चलो ना (हाथ पकड़ कर खींचती हुई)

वीणा--चलो, भाभी को हम पकड़ कर खींच ले चलती हैं, देखें कैसे नहीं चलती। (दूसरा हाथ पकड़ कर खींचती हुई सी)

सुधा--अरे ठहरो भी।

विजया--इस तरह खींचा तानी मत करो, प्रेम और वीणा।

प्रेम और वीणा--तो जीजी, क्यों नहीं चलती है भाभी हमारे साथ?

विजया--आप ही चली जायगी वीणा।

सुधा--देखिए विजयाजी, सच कहती हूँ मैं आप अभी मुझे मत ले चलिए। मेरे जाते ही तूफान अभी फिर से खड़ा होजायगा। गरम गरम दूध को आंच दिखाते ही उफान आ जाता है, सो

उपद्रव अभी बिल्कुल शान्त तो हुआ नहीं है, मेरे जाते ही उसकी पुनरावृत्ति हो जायगी।

विजया--पर तुम जाओगी कहाँ भाभी ?

सुधा--और कहाँ जा सकती हूँ, विजयाजी। सास की सताई हुई बहुओं का पीहर सहारा और पीहर से उकतायी हुई बहुओं का ससुराल सहारा।

विजया--लेकिन इतनी रात गये इस तरह तुम अकेली पीहर जाओगी तो तुम्हारे अम्माजी इससे क्या समझेंगी कि······

सुधा—नहीं, तुम इसकी चिन्ता मत करो। उनको तो मैं सब समझा दूंगी। कह दूंगी-अरण्य बाला के साथ सभा में गई थी, तो सीधी उनके घर से यहाँ ही आगई। तुम जाकर सास जी को समझा देना, अच्छा।

विजया—अब मैं तो क्या कहूँ। तुमको नाराज तो करना नहीं चाहती, भाभी। बाकी दिल तो मेरा यही कहता है कि तुमको यहाँ से लेकर ही जाऊँ।

सुधा—नहीं विजया जी, मैं बहुत ठीक कहती हूँ। आप जाकर सासजी को शान्त कर दीजिए। बात ठंढी हो जाने पर कल परसों तक मुझे बुलावा भेज देना। मैं आजाऊँगी।

विजया—अच्छा, जैसा तुम उचित समझो।

सुधा—प्रेम और वीणा को अच्छी तरह ले जाना। आपने भी फिज़ूल तकलीफ़ की और इन बच्चियों को भी ख़ाम ख़ाँ हैरान किया।

विजया—यह प्रेम तो मेरे पीछे दौड़ी चली आई, मैं क्या करूँ ? अम्मा ने भी इसको मना किया पर मानी ही नहीं।

प्रेम—तो यह वीणा जीजी क्यों आई फिर ?

सुधा—अच्छा अच्छा प्रेम, बिगड़ती क्यों हो, कोई हर्ज नहीं आ गई तो।

विजया—अच्छा नमस्कार।

प्रेम वीणा—नमस्कार भाभी।

सुधा—नमस्कार

विजया—(लौट कर) लेकिन भाभी तुम अकेली हो।

सुधा—आप मेरा कोई फ़िक्र मत कीजिए। मैं चली जाऊँगी। बिल्कुल पास ही तो अब मेरा पीहर आ गया है।

(चारों अपनी अपनी तरफ चली जाती हैं।)

अठारहवाँ दृश्य।

स्थान—पारसलालजी का घर।

(सुधा एक कमरे मे कुर्सी पर विचार मग्न बैठी है। उसके सामने एक टेबिल पर कई-अखबार व किताबें पड़ी हैं। वह अखबार बार २ उठा कर पढ़ना चाहती है पर कुछ पढ़ नहीं सकती, इसलिए उठाती है और वापिस उठा कर रख देती है।)

(शशि का प्रवेश)

शशि—जीजी, तुम्हें अम्मा बुलारही है।

सुधा—क्यों, क्या काम है? जाओ कहदो मैं नहीं आती।

शशि—चलो न, वह फिर नाराज हो जायगी।

सुधा—आखिर कोई काम भी होगा

शशि—बात यह है जीजी कि जीजाजी आये हैं सो उनको…

सुधा—चलो हटो मैं नहीं आती।

शशि—(मुँह बना कर) चलो हटो मैं नहीं आती, तो कहदूँ अम्मा से जाकर। मुझे नहीं मालूम फिर वे चलेजायें गे।

सुधा—(खीज़ कर) जाती है या नहीं ? (शशि चली जाती है)

(पुष्पा का प्रवेश)

पुष्पा—जीजी, तुम्हें नहीं मालूम-जीजाजी आये हैं। मुझे चुपके से पूछा-तुम्हारी जीजी कहाँ है ? मैंने कहा-कमरे में अकेली बैठी किताब पढ़ रही है। अभी अम्मा से बात कर रहे हैं। इधर ही आयेंगे शायद थोड़ी देर में।

सुधा—(गुस्से के साथ) चुप रह-

पुष्पा उल्टी ही तो खुश खबरी सुनाई, उल्टी ही मुझे डांट रही है

सुधा—चल यहाँ से।

पुष्पा—(मुँह बना कर) चल यहाँ से-(चली जाती है।)

(अरण्य बाला का प्रवेश)

(अरण्य बाला विचार मग्न सुधा के पीछे की तरफ से चुपके चुपके आकर उसकी आँखे मूंद लेती है)

सुधा—(खड़ी होकर जोश और आवेश में रहने दीजिए कुमुद बाबू ! आप किसके साथ यह क्या व्यवहार कर रहे हैं ? एक ऐसी प्राण हीन लड़की के साथ जो एक-पंख हीन पत्ती की नाईं ईंट और-चूने के मकानों में रहकर अपना पेट भर लेती है, पद दलित होती हैं, गालियां सहती है, फटकारें सहती है। जिसके जीवन की कोई हस्ती नहीं, जिसके विचारों को कोई जगह नहीं, जिसके गौरव का कोई मूल्य नहीं। मैंने जिन उच्च अभिलाषाओं को लेकर

जीवन शुरू किया था, वे सब मिटाई जा रही हैं। जिन उच्च तम आशाओं का भव्य भवन खड़ा किया था, वह ढ़ाया जा रहा है। मेरे हृदय की भव्य भावनाओं को कुचला जा रहा है। मेरे विचारों का स्वत्व नष्ट किया जा रहा है। क्या आप यह चाहते हैं कि मैं विचार हीन, प्राणहीन, और स्वत्व हीन होकर-चमड़े की धोंकनी की भाँति सांस लेती रहूँ और दोनों वक्त पशुओं की भाँति अपना पेट भर लिया करूँ। आपको जरा भी रहम नहीं आता मेरी इस दयनीय दशा पर! क्यों नहीं अपना एक अलहदा घर बसा लेते हैं? (अरण्य बाला की ओर मुड़ कर एक दम निस्तेज अप्रतिभ और लज्जित सी हो जाती है।

अरण्य—सुधा जीजी!

सुधा—(लज्जा और उद्वेग के साथ) ओ, अरण्य बाला! तुम हो! तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया कि मैं अरण्य बाला हूँ? बोलो अरण्य बाला! (झिझोड़ कर) अब मैं कहाँ जाकर छिपजाऊँ, किस तरह जमीन में गड़ जाऊँ! क्यों तुमने मुझ से मेरी अंतरंग दशा को तुम्हारे सामने धोखे से प्रकट करवाया, क्यों मुझे लज्जित किया। बोलो, अरण्य बाला! बोलो, अरण्य बाला! (कहती हुई सुधा उद्विग्न, उत्तेजित, लज्जित और बेसुध सी होकर कमरे में पास ही पड़े हुए बिस्तरों में मुंह छिपा कर पड़ जाती है और अरण्य बाला अपनी ग़लती पर पश्चाताप प्रकट करती हुई उसको मनाने लगती है।)

अरण्य—मुझ से ग़लती हुई, सुधा जीजी, माफ़ करो। तुम मुझे चांटा मारो, दंड दो! सुधा जीजी! बोलो, सुधा जीजी!

ड्राप—सीन

पहला अंक समाप्त।

दूसरा अंक–

पहला दृश्य

स्थान—सुधा का नया घर।

(सुधा ने हाल ही में एक नया घर किराये पर लिया है। मकान छोटासा है पर बहुत दिनों से बन्द पड़ा रहने के कारण जगह जगह जाले लगे हुए हैं। ऐसा मालूम होता है कि सफ़ेदी भी कई वर्षों से नहीं हुई है। सुधा के पास अभी मामूली फरनीचर है। मनोरंजन का सामाम-ग्रामोफ़ोन, रेडियो आदि कुछ भी नहीं है। पर कुमुद बाबू को आरजी तौर पर महकमा डिफेन्स में एक क्लर्क की पोस्ट मिल गई है इस लिए सुधा धीरे धीरे सब तरह का फरनीचर, ग्रामोफोन रेडियो आदि चीजें बसाने की सोच रही है। सुधा के पीहर की नौकरानी फूलां सुधा को घर के काम काज में मदद पहुँचाने के लिए उसके पिताजी ने दे रक्खी है। सुधा मेज कुर्सी अलमारी आदि को सफाई और उनको व्यवस्थासे सजाने आदि के बारे में फूलां को जरूरी हिदायतें दे रही है और बिल्कुल अप-टु-डेट ड्रेस पहनकर चहेरे पर आज़ादीऔर अन्तरंग खुशीं की झलक के साथ कहीं जाने को उद्यत है।)

सुधा—फूलाँ, कमरे की सफ़ाई अच्छी तरह किया करो। देखो टेबिल पर यह कैसी गर्द ही गर्द जमी है। और हर एक सामान को जगह की जगह रख दिया करो।

फूलाँ—बहुत अच्छा।

सुधा—मैं अभी किसी काम से जा रही हूँ और तुम रसोई जल्दी ही बना लेना। आज से वे महकमा डिफेन्स में नौकरी पर जाने लगेंगे, इसलिए भोजन जल्दी ही करेंगे।

फूलाँ—आप कहाँ जा रही हैं? कुमुद बाबू बाग से लौटने पर पूछें, तो क्या कहूँ?

सुधा—कहना-बहन श्यामारानी अपनी स्कूल के वार्षिक जल्से पर छात्राओं से एक ड्रामा करा रही हैं और उसी के बारे में राय लेने के लिए मुझे उन्होंने बुलाया है।

फूलाँ—बहुत अच्छा, पर लौट कर जल्दी ही आइयेगा, वरना रसोई ठंढी हो जायगी।

(सुधा थोड़ी दूर जाकर और फिर वापस लौट कर)

सुधा—फूलाँ! देखो, मैं फिर भूल जाऊँगी, अभी वे आएँ तो उनसे कहना कि एक रेड़ियो और ग्रामोफोन की मशीन आज ही बाजार से लेते आएँ। इन चीजों के बिना घर सूना सूना सा मालूम होता है।

फूलाँ—कल शायद, कुमुद बाबू भी अरण्यबाला के भाई से बात तो कर रहे थे कि कुछ रुपया इकट्ठा हो जाय तो ये चीजें खरीदने हैं।

सुधा—अरे नहीं नहीं, रुपया इकट्ठा होने की कोई ज़रूरत नहीं है। उन्होंने रात को यह तय किया था कि यह सब चीज़ें एक साथ ही विनोद-भंडार से ख़रीद लेगें और नौकरी अब लग ही गई है, सो दस रुपये माहवार की किश्त से चुका दिया करेंगे।

फूलाँ—आप कब तक लौटेंगी ?

सुधा—मैं ज्यादा देर नहीं लगाऊँगी, यही कोई घंटे भर में आती हूँ।

फूलाँ—अच्छा।

सुधा—मकान मालिक को मैंने अभी बुलाया था। वह आवे तो उससे कहना—ग़ुस्लखाने का परनाला और सड़क की तरफ़ के रोशनदान जल्दी से जल्दी ठीक होने चाहिएँ। जब तक ये ठीक नहीं होंगे, हम किराया नहीं देंगे। और कहना सब जगह नहीं तो कम से कम सोने-उठने के कमरों में तो सफ़ेदी करवाइये। आख़िर हम किराया मुफ़्त का थोड़े ही देंगे।

(सुधा चली जाती है।)

दूसरा दृश्य।

स्थान—कन्या-महाविद्यालय

(अध्यापिका श्यामारानी बालिकाओं से नाटक का रिहर्सल करा रही है। बालिकाएँ बैठी हुई हैं और अध्यापिका के निर्देश के अनुसार अपना अपना पार्ट बोलती जारही हैं। एक टेबिल पर हारमोनियम रक्खा हुआ है और रमादेवीगायन की बारी आने पर गायन का अभ्यास कराती है।)

श्यामारानी—रमारानी! गायन नं० ५ का अभ्यास कराओ।

रमारानी—(खड़ी होकर हार्मोनियम बजाती हुई) हां जी, चलो गायन नं० ५ किसका है?

बैठी हुई सब लड़कियाँ—प्रेमलता का!

रमारानी—उठो प्रेमलता!

(प्रेमलता खड़ी होती है)

रमारानी—शुरू करो-आ आ आ आ।

आज सब जग में छाई है कैसी बहार।

(खंखारती हुई और आवाज़ को बिगाड़ती हुई 'आ आ आ आ आज सब जग में छाई है कैसी बहार। यह बिगाड़ कर बोलती है और इस तरह दो तीन बार अभ्यास कराया जाता है और वह गाने के अयोग्य साबित होती है)

रमारानी—मास्टरनीजी साहब! यह प्रेमलता तो यह गाना नहीं गा सकेगी। यह पार्ट तो आप किसी दूसरी लड़की को दीजिये!

श्यामारानी—तो वीणा से बुलाकर देखो।

रमारानी—हां यह ठीक रहेगी-चलो वीणा!

(वीणा खड़ी होती है)

रमारानी—आ आ आ आ।

वीणा—(ठीक बोल लेती है)

रमारानी—"आज सब जग में छाई है कैसी बहार"।

वीणा—आज सब जग में छाई है कैसी बहार। दो बार बोलती है।

(सुधा का प्रवेश)

श्यामारानी ओ सुधा आ गई! ठहरो, बन्द करदो रमा!

सुधा—नहीं, नहीं, बन्द क्यों कर दिया? गाने दो न।

श्यामारानी—पहले मैं तुम्हारे साथ इस विषय में जरूरी सलाह करूंगी।

सुधा—हां तो, श्यामा बहन! यह नाटक स्कूल के वार्षिक अधिवेशन के समय करा रही हैं क्या?

श्यामा—हां सुधा; असल में पाठशाला इस समय एक भारी आर्थिक संकट में फँसी हुई है और इसीलिए नाटक का आयोजन किया जा रहा है!

सुधा—नाटक का विषय क्या है?

श्यामारानी—नाम तो रूप सुन्दरी है और विषय सामाजिक है।

सुधा—रूप सुन्दरी शायद प्रधान नायिका का नाम है।

श्यामारानी—हां, रूप सुन्दरी ही हमारे नाटक में प्रधान नायिका है और उसका पार्ट करने वाली है यह उमा, खड़ी होना !

(उमा खड़ी हो जाती है)

सुधा—शकल सूरत से तो यह वास्तव में रूप सुन्दरी ही है। अपना कोई पार्ट तुम्हें ज़ुबानी भी याद है !

श्यामारानी—सातवें दृश्य का पार्ट बोलो, उमा !

उमा—यह मुझे ज़ुबानी याद नहीं हुआ अभी ।

श्यामारानी—लक्ष्मी प्रोम्प्ट करती रहेगी,उठो लक्ष्मी !

(लक्ष्मी किताब लेकर खड़ी होती है)

(लक्ष्मी प्रोम्प्ट करती जाती है और उमा बोलती जाती है)

"हे भगवन् अब तू ही मेरा रक्षक है ! मैं मेरी दुःख भरी गाथा और किसे जाकर सुनाऊँ ! आज पूरे आठ बरस हो गये ! रात और दिन रो रो कर बिताती हूँ ! आँखें इन्तजारी से ऊब चुकी हैं ! न कोई ख़त है, न कोई समाचार है !

सुधा—बस, बन्द कर दो उमा ! ठीक है। तुम वैसे ही बतादो श्यामा बहन ! आखिर तुमने नाटक में क्या दिखाया है ?

श्यामारानी—बस यही विप्रलम्भ शृङ्गार नाटक का मुख्य रस है ।

सुधा—मेरी राय में तो नाटक और किसी उपयोगी विषय को लेकर खेला जाना चाहिये ।

श्यामारानी—बात यह है सुधा ! शृङ्गार रस के अतिरिक्त किसी अन्य रस गर्भित नाटक लोगों के मन को रुचता नहीं है ।

सुधा—तुम्हारी यह धारणा ग़लत है श्यामा बहन ! नाटक होना चाहिये भावपूर्ण। मैं तो ऐसे ऊल जलूल नाटकों को पसन्द

नहीं करती। तुम तो इतनी मेहनत से नाटक तैयार कराओगी और इसका फल होगा केवल लोगों का क्षणिक मनोरंजन।

श्यामारानी—तो फिर तुम्हीं बताओ कौनसा नाटक होना चाहिये ? ज्यादा अच्छा तो यही हो कि तुम खुद ही कोई अच्छा सा नाटक तैयार करो।

सुधा—(कुछ सोचती हुई सी) आज कल मैं एक नाटक लिख तो रही हूँ।

श्यामारानी—किस विषय पर ?

सुधा—नाटक का नाम और विषय दोनों ही मातृभाषा है।

श्यामारानी—(खुशी से) मातृभाषा ! ओः यह नाटक तो वास्तव में एक नयी चीज़ रहेगी। तुम तो यही नाटक तय रक्खो और कल से ही इसका रिहर्सल शुरू करादो। इस नाटक का रिहर्सल तो मैं आज ही से बन्द करा देती हूँ। लो चलो आफिस रूम में। इस विषय में हम और भी अध्यापिकाओं से सलाह करलें।

———

तीसरा दृश्य

स्थान—अरण्य बाला का घर

(अरण्य बाला ने अपनी कुछ हम-उम्र शिक्षित बहनों को टी-पार्टी दी है और अरण्य बाला के कमरे में वे सब एक गोल टेबिल के चारों तरफ़ कुर्सियों पर बैठी हुई हैं। उनके सामने गरमा-गरम चाय के प्याले तश्तरियों में रक्खे हैं। हर एक के हाथ में चम्मच है। एक सेविका, धुले हुए सफेद वस्त्रों में, अपने हाथ में चाय की देगची लिए हुए जिस प्याले में चाय खतम हो जाती है, आवश्यकतानुसार चाय देती रहती है। सब सहेलियाँ हास-उपहास के साथ कभी सामाजिक, कभी राजनीतिक, कभी शिक्षा-सम्बन्धी और कभी घर-सम्बन्धी बात चीत करती हुई चाय पीती जा रही हैं और चाय पी चुकने के बाद पहले से छिड़े हुए किसी प्रसंग पर बात चीत करती हुई बाहर आजाती हैं और खड़ी खड़ी बात करती रहती हैं।)

श्यामारानी—लेकिन मैं तो इन सब उलझनों का मूल कारण हमारी विलास प्रियता और आराम तलबी ही समझती हूँ। हमारी नवीन शिक्षित बहिनें घर के काम धन्धों में योग देना पसन्द नहीं करती हैं, बस यही हमारी बड़ी बूढ़ी माताओं का आजकल की

शिक्षा और आजकल की शिक्षित बहनों से चिढ़े रहने का मुख्य कारण है। मैं नहीं कहना चाहती कि फैशन और विलासिता हमें कुछ इतनी प्यारी हो गई है कि इसके सामने घर गृहस्थी को क्या हम हमारी शिक्षा और सुधार के क्षेत्र को भी छोड़ती हुई चली जा रही हैं। हमें न समाज को चिन्ता है और न हमारे अधिकारों से प्रयोजन है। हमें चाहिए हमारा फैशन, हमारी निराली दुनियाँ और हमारा आमोद प्रमोद का छोटा सा संसार।

सुधा—क्षमा कीजियेगा, बहन श्यामारानी! आप जरा समझने में ग़लती कर रही हैं। मेरे कहने का यह आशय नहीं है कि हम रात दिन भोग विलास में पड़कर आनन्द मनाती रहें और हमारा समाज और जाति के प्रति जो कर्तव्य है उसे कतई भूल जायँ। मैं सिर्फ यह कहना चाहती हूँ—आखिर बड़ी बूढ़ी मातायें हमारी हर एक प्रवृत्ति से क्यों इतनी अधिक चिढ़ी रहती हैं। उन्हें हमारा चलना, हमारा बोलना, हमारे कपड़े लत्ते, हमारे जेवर, हमारा पढ़ना लिखना यहाँ तक कि हमारा हँसना और खुली हवा में साँस लेना-गरज़ यह कि हमारा हरएक काम क्यों उन्हें दांत में उलझे हुए तिनके की तरह खटकता है? वे चाहती हैं कि इन नई पढ़ी लिखी बहुओं के जीवन के सब रास्ते बन्द करदिये जायँ। उन्हें किसी भी सभा-समिति में न जाने दिया जाय। उन्हें जीवन के किसी भी आनन्द उत्सव में भाग न लेने दिया जाय। उन्हें अपनी सखी सहेलियों से न मिलने दिया जाय। वे रात दिन घर के कोने में पड़ी रहें और सिसकती रहें। वे हमें आजकल की सभ्यता और संस्कृति से न रहने दें सही, पर सुख से जीने तो दें!

अरण्य बाला—मैंने बहुत सी बहनों को देखा है जो ब्याह के पहले फूल सी खिली हुई, खूब खुशमिजाज, सुन्दर, स्वस्थ और सब

तरह से प्रसन्न दिखाई पड़ती थीं और ब्याह के कुछ ही दिनों बाद ऐसी मुरझा गई कि पहचानने में भी नहीं आ सकीं। आखिर वह कौनसी बात है जो एकदम इतना परिवर्तन हो जाता है!

कानन बाला—बात और क्या हो सकती है? सास के कठोर व्यवहार से बेचारी रात दिन घुलती रहती हैं।

रमादेवी—और फिर असमय में ही काल ग्रास बन जाती हैं!

सौन्दर्य प्रभा—आखिर यह दिन हम कब तक देखती रहेंगी, अरण्य!

श्यामारानी—हां, ठीक तो है भोजन की तारीफ करने से तो कोई पेट भर नहीं जायगा, सो कोरी टीका टिप्पणी से तो ये दुःखदूर होने के नहीं। इसका कोई समुचित उपाय सोचना चाहिये बहिनों!

अरण्य—हां, इसके लिये जरूर कोई उपाय सोचना चाहिये। मेरी राय में तो एक दिन पढ़ी लिखी बहिनों को कुछ अधिक संख्या में किसी जगह इकट्ठी करो और इन सब बातों पर विचार करो। कोई न कोई रास्ता निकलेगा ही।

श्यामा—मैं तो यह चाहती हूँ अरण्यबाला! सांप भी नहीं मरे और लाठी भी नहीं टूटे। हमारे घरों में कोई उपद्रव भी न मचे और सीधे सीधे हमारी बड़ी बूढ़ी मातायें हमारे जीवन को और हमारे विचारों को सहानुभूति से भी देखने लग जायँ, कोई ऐसा मार्ग निकालना चाहिये।

अरण्य—है तो यह बिल्कुल ठीक, श्यामा रानी! पर यदि दही बिना मथे ही मक्खन निकल जाय तो कोई भी चतुर ग्वालिन दही

मथने का कष्ट नहीं उठायेगी। मुझे तो ऐसा दीखता है कि हमारे घरों में फैली हुई सास-बहुओं की विषमताओं को दूर करने के लिये और शांत सुखी तथा स्वर्गीय गृहस्थी का मधुर मक्खन चखने के लिये एक बार तो समाज का सारा ही वातावरण क्षुब्ध होना है।

श्यामा—मक्खन मथने से निकलता है, अरण्य बहन! यह मैं भी मानती हूँ। पर ऐसे तरीके से मथना भी ठीक नहीं जो दही की बिलौनी ही फूट जाय और समूचा दही ढुलक जाय।

सुधा—हाँ ठीक है अरण्य! हमें तो हमारी बिगड़ी हुई गृहस्थी को सुधारना है, उसे बिल्कुल नष्ट थोड़ा ही करना है।

श्यामा फिर भी बहिनों! पहले हमें हमारी कमजोरियों को और कमियों को दूर करना चाहिए। हम बड़ी बूढ़ी माताओं को इसके बाद अपनी ओर आकृष्ट कर सकती हैं।

अरण्य—कमजोरी और कमी किसमें नहीं है, श्यामा बहिन! पूर्ण तो एक परमात्मा है, सो उसे हमारी घर गृहस्थी से कोई मतलब नहीं।

रमा—हाँ जी ऐब और इन्सान तो सदा संग संग रहते आये हैं।

श्यामा—सो तो मानव शास्त्र के सिद्धान्त की बात हुई बहिनो! हम इस सिद्धान्त की शरण लेकर कमी और कमजोरी की ओर ही क्यों बढ़ती रहें! ऐब को हम अपना लक्ष्य क्यों समझें? लक्ष्य तो हमारा पूर्णता ही है।

अरण्य—खैर, यह सब लक्ष्य सिद्धान्त की चर्चा तो पीछे होती रहेगी। अभी तो हमें यह तय करना है कि हम सबको कब और कहाँ इकट्ठा होना है?

सुधा—होली के बाद का कोई समय रखिए। तब तक रास्ते मोहल्लों में उपद्रव भी शान्त हो जायेंगे।

कानन—हां हां, ठीक है होली के कौन ज्यादा दिन हैं ?

रमा—स्थान कौनसा रक्खा जाय ?

कानन—यही प्रतिभा का मकान क्यों न रख लिया जाय ? पास का पास और एकान्त का एकान्त।

सौन्दर्य—क्यों श्यामा बहिन ?

श्यामा—कोई हर्ज नहीं।

रमा—तुम्हें तो कोई ऐतराज नहीं न, अरण्य !

अरण्य—यह भी कोई पूछने की बात हुई जी। आप लोगों का मकान है, जी चाहे तब पधारिये। मैं तो अपने को बहुत धन्य समझूंगी जो ऐसा शुभ आयोजन मेरे ही घर से शुरू होगा। –

कानन—तुम्हारे माता जी या पिताजी को तो·······

अरण्य—नहीं, नहीं; वे तो सुन कर बहुत खुश होंगे। मेरी मां तो आप सबसे मिलकर बहुत प्रसन्न होती हैं। मुझसे वे कई बार कह चुकीं कि अरण्य ! तू तेरी सहेलियों को अपने घर कभी नहीं बुलाती है क्या ? आप लोग सुन कर प्रसन्न होंगी कि आज की पार्टी का आयोजन भी उन्हीं की प्रेरणा से हुआ है।

सुधा और श्यामा—सो तो हम जानती हैं।

सुधा—तो फिर एक काम क्यों न करें श्यामा बहन ! इस आयोजन का भार अरण्य के ऊपर ही रहने दें।

रमा—हां हां, यह बिल्कुल ठीक रहेगा।

श्यामा—कोई अच्छा सा दिन मुकर्रर करके मीटिंग के कार्य क्रम और समय की सूचना यह अपने ही नाम से सब बहिनों के पास पहुँचा देगी।

रमा—हम सब बहिनों के अलावा और किन किन को बुलाना है यह सब भी यही देख लेगी।

सुधा—क्यों अरण्य ?

अरण्य—मैं इन्कार तो किस मुँह से कर सकती हूँ। आप लोगों का हुक्म सिर माथे पर है। पर देखिए यह सब होगा आप ही लोगों की मदद से। मेरी तो बिचारी की बुद्धि ही कितनी सी है।

सुधा—अजी रहने भी दो! तुम्हारी तो वह बुद्धि है जो आसमान के तारे तोड़ लाओ।

अरण्य—क्यों चींटियों पर पंसेरियाँ फेंक रही हो, सुधा जीजी!

श्यामा—तो फिर तय हुआ और क्या। अब चलना चाहिए साहब। समय काफी हो चुका है।

रमा और कानन—हां ठीक है, अब चल ही देना चाहिए।

सुधा—अरे! अरण्य को आज की पार्टी का धन्यवाद तो देती जाओ।

सब—हाँ साहब धन्यवाद!! खूब धन्यवाद!

श्यामा—क्यों अरण्य बाला! अब तो खुश हो!

अरण्य—जैसे मैंने ही कोई धन्यवाद के लिए आग्रह किया हो।

सुधा—जबान से कुछ भी न कहो तो क्या हो। अन्दर से दिल तो कुछ कुन्द होता ही। लो साहब सहेलियां ऐसी बे मुरब्बत निकलीं कि पार्टी के बाद दो शब्द तारीफ़ के भी नहीं निकाले।

अरण्य—तुम सुधा जीजी कुछ न कुछ मजाक किया ही करती हो।

सब—(हँसती हुई) लो आओ साहब चलें। अच्छा नमस्कार, अरण्य बाला !

अरण्य—नमस्कार! हां सुनिये तो मैं एक बात तो कहना भूल ही गई।

(सब अरण्य की ओर मुड़ जाती हैं)

अरण्य—आज शाम को सुनीता देवी का व्याख्यान-भवन में प्रोग्राम है। आप लोग चलेंगी क्या ?

सुधा—समय क्या है ?

अरण्य—आठ बजे।

श्यामा रानी—किस विषय को लेकर कार्य-क्रम निश्चित किया गया है।

अरण्य—आप लोगों को मालूम नहीं ! वे आज कल बंगाल के बाढ़ पीड़ितों की सहायता के लिए राजस्थान में तूफानी दौरा कर रही हैं और इसी सिलसिले में यहाँ आई हैं।

सुधा—तबतो जरूर चलना चाहिए।

कानन—हाँ, सुनाहै-वक्तव्य भी उनका बहुत जोशीला होता है।

श्यामा रानी—तब क्यों नहीं चलेंगी ? जरूर चलेंगी।

अरण्य—अच्छा तो शाम को जरूर मिलियेगा।

सब—बहुत अच्छा—

(सब चली जाती हैं)

चौथा दृश्य ।

स्थान—व्याख्यान-भवन ।

(महिलाओं से खचाखच भरी हुई सभा । पर्दा उठता है और सुनीता देवी महिलाओं को व्याख्यान देती हुई दृष्टिगोचर होती हैं)

सुनीता—बहिनों ! आज देश में क्या क्या विपदायें बीत रही हैं, यह आप सब पढ़ी लिखी बहिनों को भली भांति विदित है । मैं स्वयं बंगाल का दौरा करके आई हूँ और वहाँ अकाल पीड़ितों की दुरवस्था का जो दर्दनाक और करुण दृश्य मैंने देखा वह अभी तक मेरी आँखों के सामने चलचित्र की तरह घूम रहा है ।

कलकत्ते की मुख्य मुख्य सड़कों पर ट्राम्बे की पटड़ी को छोड़कर तिलभर भी ऐसी जगह नहीं दिखाई देती जहाँ हमारे अकाल पीड़ित भाई बहन अपनी दर्दभरीं कराहें न लेते हों । बहिनों ! मैं ५६ के अकाल की दयनीय घटनाओं का हाल अपने बड़े बूढ़ों से सुनती हूँ, लेकिन जो हाल मैंने वहाँ देखा, वह उनसे भी ज्यादा दयनीय और दयार्द्र है । आप लोग सुन कर हैरान होंगी कि हमारे ये अकाल-पीड़ित भाई-बहिन, लोगों के कै किये हुए शरीर के दूषित माद्दे से भी अन्न के टुकड़ों को चुन-चुन कर खा जाते हैं ! सड़कों पर रक्खे हुए कूड़ेदानों और दूषित पानी की पावरिडयों तक में अन्न के कण ढूढते रहते हैं ! नन्हें नन्हें बच्चे अपनी माताओं की गोद में चिपके हुए भूख से बिलबिलाते हैं और अन्न के अभाव में लट और चिंवटियों की भांति छटपटा

कर प्राण दे देते हैं ! कहीं स्त्रियों की करुण चीत्कार सुनाई देती है तो कहीं पुरुषों की दर्दनाक पुकार कलकत्ते की ऊंची अट्टालिकाओं का भेदन कर रही है ! यदि किसी मुसाफिर या यात्री ने अपनी भूंठी पत्तल सड़क पर डालदी है तो वे भूख से व्याकुल प्राणी कौवे और चीलों की भाँति उस पत्तल पर टूट पड़ते हैं ! ओहो ! उन घर-विहीन ! जन-विहीन ! भोजन-विहीन ! और वस्त्र-विहीन प्राणियों के नर कंकाल देखकर पत्थर से पत्थर कलेजा भी पारे की तरह पिघल पड़ता है। निर्मम से निर्मम हृदय भी सहानुभूति से पसीज जाता है। रुक्ष से रुक्ष आँखें भी दया से आर्द्र हुए बिना नहीं रह सकतीं। बस, यह समझिये कि एक मिनिट भर के लिये भी उस भीषण दृश्य के सामने आप खड़ी रहजायेंगी तो आँखों से आंसुओं का समुद्र बरस पड़ेगा ! उस हाहाकार चीत्कार, रोदन और विलाप के दर्दभरे दृश्य को देखकर इस महान संसार के प्रलय का दृश्य आँखों के आगे नाचने लगता है !

बहिनो ! भूख और अकाल का यह नग्न तांडव सिर्फ कलकत्ते में ही नहीं किन्तु बंगाल के कोने कोने में अपनी प्रलयंकारी भुजायें फैलाये हुए है ! बहिनो ! बंगाल की यह संकटापन्न अवस्था मनुष्य के दुःख की परम सीमा को भी पार कर गई है ! शहरों में जगह जगह भूख से तड़प कर मरे हुए प्राणियों की लाशें दिखाई दे रही हैं ! हजारों नंगे भूखे प्राणी अपने पेट पर पानी ढोल २ कर रह जाते हैं ! हजारों प्राणी, मलेरिया, ताप, जूड़ी इत्यादि बीमारियों से कष्ट पा पाकर बंगाल के इस महान संकट यज्ञ में अपने शरीरों की आहुतियां दे रहे हैं !

देश के इस दिल दहलाने वाले संकट के रोमाञ्चकारी दृश्य को आंखों से देख कर और कानों से सुन कर भी क्या हम यह

महसूस न करेंगी कि हमें जल्द से जल्द हमारे जीवन की रूप रेखा को बदलना चाहिये। आप सब शिक्षित बहनों को यह फैशन और विलासिता कैसे सुहा रही है ? अपनी खर्चीली आदत और शौकीनी तबियतको तिलाञ्जलि दीजिये। टी-पार्टी और गार्डन पार्टी की दिलचस्पियां भूल जाइये। छिः! छिः!! छिः!!! आपकी ये बहूमूल्य साड़ियां जो उन्हीं ग़रीब मजदूरों की स्वेद और रक्त की बंदों से तैयार हुई हैं, आज आपको कैसी प्यारी मालूम हो रही हैं! आपकी मजदूर बहिनें रात को खाली पेट रह कर सो जाती हैं और सुबह वस्त्र विहीन अवस्था में कफन और काठी के बिना ही धू धू करती हुई चिता में जला दी जाती हैं, तो आपको क्या हक़ है कि आप दुनियां की हर एक रंगरेलियों और दिलचस्पियों में उनके हिस्से का पैसा बरबाद करें। आप सुवासित व्यञ्जन और स्वादिष्ट आहार के साथ रात अज़हद आराम और चैन की नींद के साथ सोती हैं तो उनको कमसे कम रूखे सूखे अन्न से अपना पेट भरने का मौका तो दीजिये। अपने जीवन की आवश्यकताओं को जहां तक सम्भव हो परिमित और संक्षिप्त बनाइये और बचत के धन से उन ग़रीब भूखे नंगों की मदद कीजिये। यहां से आठसौ मील दूर बैठे हुए वे दीन हीन प्राणी आपलोगों की सहायता के लिए आशा लगाये हुए हैं! झोली फैला रहे हैं! करुणा भरी पुकार कर रहे हैं! आप अविलम्ब जाकर उनकी सहायता कीजिये और अपने शरीर व धन का सदुपयोग कीजिये।

मेरी बहनो! पढ़ा लिख करके भी आज हम हमारे कर्तव्य को भूली हुई हैं, यह हमारे लिये बहुत ही दुःख की बात है! अन्धा आदमी ठोकर खाकर गिर सकता है और उसका गिरना लोगों को

खटकता भी नहीं, किन्तु जो आदमी उजाले में जारहा है और फिर भी ठोकर खा जाता है या किसी दीवार से टकरा जाता है तो उस पर लोग हँसेंगे भी और उसकी आलोचना भी करेंगे। फिर भी मैं आपलोगों की आलोचना करने नहीं खड़ी हुई हूँ किन्तु आँखें खोलने खड़ी हुई हूँ। बहिनों। हमारी पढ़ाई लिखाई और शिक्षा सभ्यता को लोग इसीलिये इतनी सहानुभूति की दृष्टि से नहीं देखते कि हम पढ़ लिख कर भी बेपढी महिलाओं की तरह जीवन, समय और धन के उपयोग को नहीं ग्रहण कर सकी हैं। हमने हमारे जीवन का उपयोग आनन्द-उत्सव, समय का उपयोग टी-पार्टी या मौज एवं धन का उपयोग विलासिता और फैशन बना रक्खा है, यह कटु सत्य मैं न चाहने पर भी कहने को बाध्य होती हूँ। बुद्धिमान को इशारा काफी होता है। मैं आप लोगों का अधिक समय नहीं लेना चाहती और उम्मीद करती हूँ कि मैंने जिन आवश्यकताओं की ओर प्रकाश डाला है उनको पूरी करने के लिए आप तत्काल ही कटिबद्ध हो जायें गी।

अब बहन रमारानी एक गायन सुनायें गी और फिर कार्य क्रम खतम हो जायगा। आशा है आप लोग कल भी इसी तरह ठीक समय पर पधार कर हमारे कार्य-क्रम में योग देंगी।

पटाक्षेप

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—अरण्य बाला का कमरा

(कमरे के बीचों बीच दो तीन सोफा-सेट और दो एक मखमल की गुलाबी रंग की गद्देदार कुर्सियाँ रखी हैं। एक ओर ग्रामोफोन की मशीन और उसके पास ही कुछ रेकार्ड पड़े हैं। एक कोनेमें पियानो रक्खा हुआ है। एक छोटी टेबिल पर रेडियो है। कमरे की हर एक खिड़की पर हरे रंग के चिक पड़े हैं। अरण्य बाला पियानो पर किसी गायन का अभ्यास कर रहा है।)

(श्यामारानी का प्रवेश)

श्यामारानी—अरण्य बाला। नमस्कार।

अरण्य बाला—ओ, आइये आइये, श्यामारानी। नमस्कार। मैं आपही के इन्तजार में बैठी थी। (कहती हुई खड़ी हो जाती है)

श्यामा—कहिये क्या सेवा है ?

अरण्य—ओहो। आपतो चींटियों पर पसेरिया फेंक रही हैं। मैं और आपसे सेवा।

श्यामा—बबा आप लोग बडे आदमी हैं। आप लोगों के सामने इसी कायदे से पेश आना चाहिए।

अरण्य—लो साहब। बहुत बडे आदमी हो गए। नाहर गढ़ या मोती डूगरी।

श्यामा—अच्छा, अच्छा, बाबा तुमसे अब कौन जीते, हाँ बताओ तो, क्या काम था ?

अरण्य—बैठिये! विराजिये! जरा तसल्ली लीजिये! फिर बताऊँगी।

श्यामा—बैठने विराजने का तो समय नहीं है। देखो (घड़ी देख कर) साढ़े दस बज चुके हैं और फिर इतनी दूर जाना है। मैंने सोचा अरण्य बाला ने बुलाया है—कोई जरूरी काम होगा इसलिए खड़ी खड़ी मिलती ही चलूँ।

अरण्य—मैं आपसे सुधा के बारे में कुछ बात करना चाहती थी

श्यामा—ओ ऐसा! सुधा के बारे में तो मैं भी कई दिनों से सोच रही हूँ। बेचारी बहुत मुसीबत में है!

अरण्य—सास और जिठानी के कठोर व्यवहार से ऊब कर जरा शान्ति से जीवन बिताने को अलग घर बसाया तो बेचारी पर ग़रीबी का पहाड़ टूट पड़ा। कुमुद बाबू की नौकरी का दिन है और आज का दिन है, घी और दूध के दर्शन तक नहीं होते। किसी किसी वक्त तो दाल शाक के आसरे ही तसल्ली ले लेनी पड़ती है! कल शाम को मैंने राधा को किसी काम से उसके घर भेजा था, तो फूलाँ उससे कह रही थी कि आज तो बेचारी सुधा रानी ने भर पेट भोजन भी नहीं किया।

श्यामा—अरण्य बाला! सुधा जब अलग घर बसाने लगी थी तो मैंने उसे खूब समझाया था कि तुम अलग घर मत बसाओ। औरतें तो अलग निन्दा करेंगी और तुम्हारे ऊपर गृहस्थी का बोझा अलग पड़ जायगा। तुमको अभी तक इस बात का अनुभव नहीं है कि गृहस्थी में किन २ मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। तुम्हारी सास और जिठानी का व्यवहार कुछ तेज है तो उसे बरदाश्त करने की आदत डालो।

अरण्य—श्यामा रानी! बात तो आप ठीक ही कहती हैं पर क्या करे बेचारी! वह शुरू से ही ऐसी शान्त और एकान्त प्रिय मिजाज की है, जो उसे तो हमारे घरों का उग्र वाता-वरण कुछ रुचता ही नहीं है।

श्यामा—उसके पीहर से भी उसे कोई मदद नहीं मिलती है क्या?

अरण्य—मदद मिलने को तो मिलती ही है जी, पर आप जानती हैं, असली अपनी माँ तो है नहीं, विमाता है, सो उसे क्यों तो इतना दर्द आने लगा और क्यों वह इसकी कठिनाइयों की तरफ ध्यान देने लगी। दूसरी बात यह भी है कि सुधा जीजी अपना दुःख किसी दूसरे पर प्रकट भी तो नहीं करती, अन्दर ही अन्दर छीजा करती है। यह तो हम लोग रात दिन उससे मिलती रहती हैं तो हमें उसकी विपदायें मालूम हो जाती हैं!

श्यामा—और ससुराल से तो मदद मिलने ही क्यों लगी? सास तो पहिले ही उसके ऊपर खार खाये बैठी है।

अरण्य—अजी सास तो फिर भी पांच बिस्वा नरम पड़जाती है पर उसकी जिठानी तो घर की सारी चीज बस्तों पर ऐसी साँप बनी बैठी है कि देखें एक रत्ती तो कोई उसमें से ले जाय। वैसे ससुराल वालों के पास अब देने लेने को है ही क्या? जो था सो सट्टे मे खो दिया।

श्यामा—मैंने सुना-सुधाने जब अलग घर बसाया तो उसको गहने कपड़े भी ज्यादा नहीं दिये गये!

अरण्य—अजी ज्यादा और कम कौन से! वही उसका माल असबाब समझो जो घर से निकलते वक्त उसने अच्छी से अच्छी

साड़ी पहन ली। अपने पीहर का जेवर वस्त्र था, वह तो साथ लाती ही। बर्तन बासण तक तो उसको अपने खर्चे से अलग बसाने पड़े हैं।

श्यामा—कुमुद बाबू की नौकरी कैसे छूट गई ?

अरण्य—अजी जगह मुस्तिकिल तो थी नहीं। पहिले वाले प्राइममिनिस्टर ने लड़ाई के सिल सिले में डिफेन्स का एक नया महकमा खोला था, वह नये प्राइममिनिस्टर ने आकर तोड़ दिया। नौकरी छूटने की भी कोई बात नहीं। नौकरी छूटने के बाद भी अगर कुमुद बाबू सीधे सीधे बैठे रहते तो कोई बात नहीं थी परन्तु उन्होंने भी बाप और भाई की देखा देखी वह धन्धा शुरू करदिया जो दस पाँच दिन में ही बेचारी सुधा जीजी के सारे गहने बिक गये !

श्यामा—वह धन्धा कैसा ?

अरण्य—यही चाँदी सोने का सट्टा।

श्यामा—राम ! राम !! परमात्मा बचावे इस चाँदी सोने के सट्टे की बला से आदमी को !

अरण्य—अजी मेरे पिताजी तो बड़े भाई साहब को रोज यह सीख दिया करते हैं कि बेटा ! बाजार में चलते चलते एक तरफ दो बैल लड़ते हुए आ जायँ और एक तरफ चाँदी की गोल आ जाय तो लड़ते हुए बैलों की तरफ तो चले जाना पर बैलों की फेट से बचने के लिए चाँदी की गोल की तरफ कभीमत जाना क्यों कि बैलों की फेट से पैदा हुआ घाव तो बड़े अस्पताल में जाकर अच्छा हो सकता है पर चाँदी की गोल से जो घाव होगा, उससे जहन्नुम में जाकर भी छुटकारा नहीं मिलेगा, क्योंकि वहाँ भी साढ़े पाँच आने ली और छह आने बेची यह दो भूत आँखों के आगे खड़े ही रहेंगे !

श्यामा—अजी यह सट्टा तो समुद्र का कीच है, जिसमें एक बार आदमी फँसने पर निकल नहीं सकता। जितना ही आदमी निकलने का यत्न करता है, उतना ही वह गहरा उसमें धँसता चला जाता है।

अरण्य—सो ही हाल कुमुद बाबू का हुआ! अन्तमें सट्टे से उनका पिण्ड तब छूटा जब बाजार वालों ने उनका सौदा लेना बन्द कर दिया। अब बेचारी सुधा जीजी करे तो क्या करे! दुःख के मारे दिन दिन दुबली होती चली जा रही है!

श्यामा—उसके पास पहले का भी कुछ बचा हुआ रुपया नहीं दीखता है।

अरण्य—अजी अब तो वह भी बहुत पछताती है, श्यामारानी! परसों मेरे सामने रोने लगी, कि अरण्य, अगर मैं आज तक के जेब खर्च को फालतू चीजों में बर्बाद न कर, जोड़ती रहती तो इस मुसीबत के वक्त कितना काम आता!

श्यामा—लेकिन माल लुट जाने पर दिया दिखाई दिया तो क्या फायदा!

अरण्य—यह तो बिल्कुल ठीक है, तो मैं आपसे यह राय लेना चाहती थी कि अगर सुधा जीजी सरकारी स्कूल में पढ़ाने का कार्य करने लगे त ··

श्यामा—हाँ, हर्ज तो क्या है?

अरण्य—आपकी तो शिक्षा विभाग की निरीक्षिका से अच्छी जान पहचान होगी। उन्हीं से यह काम पार पड़ सकता है।

श्यामा—अच्छा, तो मैं बात करूँगी।

अरण्य—हाँजी; कम से कम घर खर्च तो चले।

श्यामा—बिल्कुल ठीक है। फिलहाल उसका मन कुछ तोइन चिन्ताओं से हटे ही गा। अच्छा अब जाती हूँ।

अरण्य—देखिये, चेष्टा रख कर इस काम को पार पटकने की कोशिश कीजियेगा।

श्यामा—मैं जरूर कोशिश करूँगी। अच्छा, नमस्कार।

अरण्य—नमस्कार।

(अरण्य बाला एक कुर्सी पर बैठ कर कुछ सोचने लगती है)

(विजया का प्रवेश)

विजया नमस्कार, अरण्य बाला !

अरण्य—ओ विजया ! आओ, बैठो।

(विजया एक दूसरी कर्सी पर बैठ जाती है।)

विजया—मैं तुम्हारे पास किसी जरूरी काम से आई हूँ। अरण्य ! मुझे पूरी उम्मीद है कि तुम इन्कार नहीं करोगी।

अरण्य—हां हां, कहो न। आज तक भी मैंने तुमको किसी काम के लिये इन्कार किया है।

विजया—भाभी बेचारी इस समय बहुत ही आर्थिक संकट में फँसी हुई है। घर में आटा दाल तक के लिये पैसे नहीं हैं और फुटकर मांगने वालों का तकाजा इतना बढ़ रहा है कि एक दो दिन में उन लोगों को रुपया नहीं चुकायेगी तो बहुत फ़ज़ीहत होगी।

अरण्य—तो बोलो न, मुझसे तुम क्या मदद चाहती हो।

विजया—तुम मुझे २००) रु. तुम्हारी बड़ी जीजी से उधार दिलादो। महीने दो महीने में यह रुपये मैं किसी भी तरह चुका दूंगी।

अरण्य—हां हां, ले जाओ न। यह कितनी बड़ी बात थी जो मैं तुम्हें इन्कार कर सकती थी। लाऊँ अभी?

विजया—लाकर क्या करना है? ये रुपये भाभी के पास पहुँचा देना। मैं लेजाकर जो भाभी को दूंगी, तो वह लेगी नहीं। तुम कोई ऐसी तजवीज़ करो जो वह रुपये ले सके। मेरा तो ऐसा खयाल है, तुम खुद ही उसके पास ले जाओ। तुम्हारे पास से तो शायद उधार के बहाने से भी ले लेगी।

अरण्य—(कुछ सोचती हुई सी) उधार के बहाने से तो नहीं, मैं और ही कोई तरक़ीब करूँगी और वह ऐसी होगी जो सुधा जीजी को रुपये अवश्य स्वीकारकरने पड़ेंगे।

विजया—मैं भी पूछ सकती हूँ क्या कि वह तरकीब क्या होगी?

अरण्य—अभी नहीं, पीछे मैं तुम्हें सब बतादूँगी।

विजया—तो रुपये कब पहुँचाओगी?

अरण्य—आज ही अभी घंटे दो घंटे में भेज देती हूँ।

विजया—मैं तुम्हारी बहुत कृतज्ञ रहूँगी, अरण्य बाला!

अरण्य—तुम तो कभी कभी ऐसी बात करती हो, विजया, जैसे हम और तुम कोई अलग अलग हों। कृतज्ञ होने की भला इसमें क्या बात है! आइन्दा ऐसी बात मुँह से न निकाला करो। लो आओ ऊपर नाश्ता करके जाने दूँगी।

(अरण्य बाला कुछ लज्जित सी हुई विजया का हाथ पकड़ कर ले जाता है।)

छठा—दृश्य

(सुधा का नया घर)

(फूलां बैठी हुई तरकारी काट रही है)

(मकान मालिक की स्त्री का प्रवेश)

आगन्तुका—कुमद बाबू ! ऐ कुमद बाबू !

फूलां—क्या है सेठानी जी ?

आगन्तुका—अजी क्या क्या है ! आज छः महीने हो गये ! किराया बराबर चढाये जारहे हैं। रोज आती हूँ और कह देते हैं-कल देंगे। उनका कल कभी आयगा भी या नहीं। हमारे पास कोई खजाना थोड़ा ही गड़ा पड़ा है ! हम भी तो इस किराये की आमदनी से ही दाल रोटी चलाते हैं।

फूलां—कुमुदबाबू तो कहीं गये हैं। इतनी खफ़ा क्यों होती हो, सेठानी जी ! एक दो दिन में किराया दे देंगे। बेचारे वे भी इसी फ़िक्र में हैं। आज कल कुछ खर्च की तंगी है। बापरने पर तो सबसे पहले आपका किराया चुकायेंगे।

आगन्तुका—अजी उनका कल तो इतना बड़ा है कि आज छः महीने निकल गये और तुम एक दो दिन का नाम ले रही हो सो जाने ये बरस दो बरस में पूरे होंगे क्या ? मैं आज किराया लिये बिना कभी नहीं जाऊंगी। बुलाओ न तुम, अपनी उस बबुआनी का ! कहां गई है वह अभी ?—

फूलां—लेकिन सेठानी जी ! कह दिया न, आपको किराया दे दिया जायगा, फिर आप क्यों उबलती जा रही हैं ?

(सुधा का प्रवेश)

सुधा—सेठानी जी ! मैं आपके हाथ जोड़ती हूँ। आपने इतने दिन तक बर्दाश्त किया तो आज शाम तक और बर्दाश्त कीजिये। मैं आपको पूरा विश्वास दिलाती हूँ कि दिया बत्ती होने के पहले पहले आपका चूकता किराया घर बैठे पहुँचा दिया जायगा।

सेठानी—आज शाम तक क्यों चाहे दो दिन बाद तक पहुँचा दीजियेगा, पर हमें तसल्ली तो हो जाय न कि फलां दिन हमें किराया मिल जायगा।

सुधा—आप इतमीनान रखिये आज शाम तक जरूर किराया पहुँच जायगा।

सेठानी—तो भेजूँ मैं शाम के वक्त चम्पा को आपके घर।

सुधा—नहीं, किसी को भेजने की जरूरत नहीं है।

सेठानी—अच्छा, आज शाम तक और सही।

(चली जाती है)

(एक धोबिन का प्रवेश)

धोबिन—बहुआनीजी ! डोलते डोलते मेरे तो पांव रह गये और आइन्दा से हमने तो आपके कपड़े धोने की कसम लेली है। अब आपही बताइये-हम रोज कमाने वाले और रोज खाने वाले धुलाई कब तक छोड़ सकते हैं ?

सुधा—फूलां ! इसके सब दाम कितने होते हैं धुलाई के ?

फूलां—पांच रुपये साढ़े बारह आने।

सुधा—आज शाम को आकर ले जाना।

धोबिन—बीनणी जी ! घर में अनाज का एक दाना भी नहीं है, इसलिये आपके पास मांगने आना पडा, वरना आपके दाम सोने की पेई में हैं ।

सुधा—ज्यादा बकवाद करने की जरूरत नहीं है । कह दिया न, आज शामको आकर ले जाना ।

धोबिन—लो आपतो नाराज हो गये । लाइये कपड़े और देते हैं क्या धुलने के लिये ?

सुधा—नहीं, कपढ़े-वपड़े कुछ नहीं देना है । तुम तो तुम्हारे दाम ले जाना । (धोबिन चली जाती है)

(सुनारिन का प्रवेश)

सुनारिन—लो बीनणी जी ! मैं कहती थी न कि मुझे अभी लौटकर वापस आना पड़ेगा । उन्हों ने तो साफ़ कहा है कि या तो इयरिंग की जोड़ी के दाम ले आओ या इयरिंग की जोड़ी वापिस ले आओ ।

सुधा—आज शाम तक और ठहर जाओ पार्वती की मां । मैं दिया बत्ती होने के पहले पहले सोना और घड़ाई दोनों के दाम पहुँचा दूँगी ।

सुनारिन - देखिये, मुझे फिर लौटना पड़े ?

सुधा—नहीं, तुम मेरी तरफ से पार्वती के बाप को समझा देना कि शाम तक दाम जरूर आजायेंगे ।

सुनारिन—तो जाऊं मैं वापिस ।

सुधा—हां, जाओ भाई पार्वती की मां !

(सुनारिन चली जाती है)

सुधा—फूलां! देखो और सब काम छोड़ दो। पहले श्यामा रानी के पास जाओ। लोयह जंजीर लो। उससे यह कहना-आज दोपहर के पहले पहले अपने भाई के हाथ बाजार भाव से इसे बिकाकर जो कुछ भी दाम बटें, मेरे पास पहुँचा दे। उसे यह भी कहना कि यह जंजीर मेरी मांने मेरे व्याह के वक्त पांच तोला सोना देकर बनवाई थी।

(फूलां धूजते हुए हाथों से जंजीर ले लेती है। इतने में किसी की आहट मालूम होती है और "कौन है" यह कह कर सुधा जंजीर को वापस अपनी जेब में रख लेती है।)

(श्यामारानी की नौकरानी का प्रवेश)

सुधा—कौन रूपां! कहो कैसे आना हुआ ?

रूपां—मुझे श्यामारानी ने भेजा है।

सुधा—श्यामारानी ने भेजा है! अच्छा तो फूलां मैं इससे बात कर लेती हूँ, तुम तब तक चौका बरतन करलो।

फूलां—बहुत अच्छा। (चली जाती है)

सुधा—हां, अब बोलो रूपां! क्या समाचार लाई हो?

रूपां—(अपनी जेब में से २००) रु० के नोट निकाल कर) ये अरण्य बाला ने भिजवाये हैं।

सुधा—हैं! अरण्य बाला ने रुपये भिजवाये हैं!

(कुछ सोचती हुई सी)

रूपां—हां, लीजिये।

सुधा—लेकिन मैंने तो उससे रुपये नहीं मंगवाये थे। तुम वापस ले जाओ, रूपां! सहानुभूति के लिये उसको मेरी तरफ से धन्यवाद देना।

रूपां—लेकिन सुनिये तो! उन्होंने ये रुपये अपने पास से थोड़े ही भिजवाये हैं। बात असल में यह हुई कि कुमुद बाबू और अरण्य बाला के भाई ये दोनों कल साथ साथ बाजार गये थे। कुमुद बाबू की जेब में ये दोसौ रुपये पड़े हुए थे। अरण्य बाला के भाई को जब यह मालूम हुआ कि कुमुद बाबू का रुख इन रुपयों से चाँदी का सट्टा करने का है तो उन्होंने चालाकी से उनकी जेब से ये दोसौ रुपये निकाल लिये।

सुधा—लेकिन उन्होंने इस तरह क्यों किया? कुमुदबाबू ने जब अपनी जेब में हाथ डाला होगा और उनको रुपये नहीं मिले होंगे तो उनको कितना दुःख हुआ होगा।

रूपां—अजी, सट्टा करने वालों के दिलों पर इतनी सी रक़म के खो जाने पर क्या असर हो सकता है? सोचा होगा-एक पेटी में इतना नुक़सान ही सही। और हुआ भी यही। कुमुद बाबू ने जब अपनी जेब सम्भाली तो रुपये गायब थे। कुछ उनमने से उल्टे पाँव घर लौट आये।

सुधा—लेकिन रूपां! यह अरण्य बाला के भाई ने अच्छा नहीं किया।

रूपां—उन्होंने तो सोचा-यह रकम कुमुद बाबू के पास से तो योंहीं चली जायगी। सुधा बहन के पास रहेगी, तो घर का जरूरी खर्च चलेगा।

सुधा—तभी रूपां! कल शाम को वे आये तो गुम गाम से थे और आते ही बिस्तरों पर लेट गये।

रूपां—लेकिन जो हो गया, सो हो गया। अब तो इसके सिवाय और हो भी क्या सकता है कि आप इन रुपयों को घर-खर्च में बरतलें लीजिये!

सुधा—(कांपते हाथों से रुपये ले लेती है)

रूपां—आप गिन लीजिये इन रुपयों को।

सुधा—गिनना क्या रहजाता है रूपां! जब तुम लाई हो।

रूपां—नहीं जी, रुपये पैसे का मामला है।

सुधा—(गिनलेती है) २००) रु० !

रूपां—पूरे दो सौ रुपये आगये ?

सुधा—हाँ आगये।

रूपां—अच्छा तो जाऊँ अब मैं ?

सुधा—मैं तुम्हारी क्या खातिर करूँ, रूपां! रसोई तैयार है, भोजन करती जाओ।

रूपां—मैं आप ही का दिया खाती हूँ, सुधारानी! अच्छा तो जाती हूँ अब मैं।

सुधा—अच्छा जाओ।

(रूपां जरा दूर जाकर वापस आती है)

(पीछे से किसी के पैरों की आहट होती है)

रूपां—हाँ सुनिये तो! अरण्य बाला के भाई ने यह खास तौर से कहला भेजा है कि इन दो सौ रुपयों के लिये कुमुद बाबू को किसी भी तरह मालूम नहीं होना चाहिये। अगर कुमुद बाबू को यह प्रकट हो जायगा कि अरण्य बाला के भाई ने इस तहर धोखा करके उनसे छिपा कर आपके पास रुपये भेजे हैं तो आइन्दा के लिए अरण्य बाला के भाई के साथ कुमुद बाबू का व्यवहार बिगड़ जायगा।

सुधा—हाँ रूपां! यह तो बात ही एसी ही है। अगर उन्हें मालूम हो जाय तो वह उसी वक्त हथियार लेकर अरण्य के भाई से लड़ने के लिये जायँ।

रूपां—अच्छा तो मैं जाऊँ?
सुधा—ओ! यह कौन आया अभी?
रूपां—कहाँ?

सुधा—अभी अभी किसी के पैरों की आहट हुई थी। जैसे कोई चुपचाप आकर हमारी बात सुनकर चला गया हो! देखो तो!

रूपां—उधर तो कोई भी नहीं दिखाई देता है।

सुधा—नहीं, कोई जरूर आया था। मुझे किसी जाते हुए आदमी की परछाई नज़र पड़ी है। फूलाँ! फूलाँ!! (आवाज़ लगाती है।)

(फूलाँ का प्रवेश)

फूलाँ—क्यों, क्या बात है सुधारानी?
सुधा—अभी कौन आया इधर से?

फूलाँ—और कोई नहीं, कुमुद बाबू ही तो थे। इधर ही तो आकर वापस चले गये।

सुधा—कुमुद बाबू थे!
फूलाँ—क्यों, क्या बात थी?
सुधा—कुछ नहीं, जाओ, तुम अपना काम करो!
फूलाँ—लेकिन आप इतनी घबरा क्यों रही हैं?

सुधा—कुछ नहीं, फूलाँ! जाओ, तुम रसोई में जाओ उनको भोजन करने के लिये देर हो जायगी। (फूलाँ चली जाती है)

सुधा—रूपां ! मेरा तो दिल नहीं कहता कि मैं ये रुपये अपने पास रखलूँ । लो तुम वापस ले जाओ ।

रूपां—सुधारानी ! रख लीजिये । मैं तो वापस नहीं ले जाती हूँ । (रूपां चली जाती है)

सुधा—रूपां ! रूपां !! रूपां !!! सुनो तो !

(कहती हुई उसके पीछे चली जाती है)

सातवाँ दृश्य ।

स्थान—नौरंगीलाल जी का घर

प्रेम घर के आँगन में अपने हाथ में एक घी का भरा हुआ कटोरा लेकर धीरे धीरे चल रही है । बड़ी बहू अकस्मात् आ जाती है और प्रेम उसकी 'प्रेम जी क्या ले जा रहे हैं ?' यह डाँटती हुई आवाज़ सुनकर घबरा जाती है और उसके हाथ से कटोरा छूट जाता है । बड़ी बहू कटोरा उठा कर कड़क कर कहती है ।)

बड़ी बहू—कहाँ ले रहे थे यह घी का भरा कटोरा ?

प्रेम—(चुप रहती है)

बड़ी बहू—बुलाऊँ सास जी को और दिखाऊँ आपकी ये करतूतें ! मैं सब जानती हूँ कि आप यह घी का भरा कटोरा कहाँ ले जा रहे थे !

(वीणा का प्रवेश)

वीणा—भाभी ! क्यो डाँट रही हो बेचारी प्रेम को ?

बड़ी बहू—यह आये दूसरे छोटे भाभी के हिमायती।

बीणा—सो क्या तुम हमें हिमायती होने से रोक लोगी क्या ?

बड़ी बहू—मैं नहीं रोकलूँ तो ! मेरा घर क्या उजाड़ने को है।

प्रेम—क्या उजाड़ा हमने तुम्हारा घर ! यह घर जैसे तू हीं अपने पीहर से उठा कर लाई हो !

वीणा--इस घर में तुम्हारा ही ऐसा क्या देना आता है जो घर की हर एक चीज की मालकिन बनी बैठी है।

बड़ी बहू—नहीं तो ! मेरा तो इस घर में कुछ भी देना नहीं आता ! देना आता है आपकी उस छोटी लाड़ली भाभी का !

बीणा—वह तो बेचारी इतनी सीधी है जो घर से जाते वक्त एक तिनका भी अपने साथ नहीं ले गई।

बड़ी बहू—इस तरह चोरी चोरी मंगाकर सारा घर तो खाली कर दिया ! और क्या ले जाती थी ?

(विजया का प्रवेश)

विजया--भाभी ! तुम्हें छोटी भाभी को घर से निकाल कर भी चैन नहीं मिला, जो जब देखो तब उसके कोई न कोई लाञ्छन लगाया ही करती हो !

बड़ी बहू—अजी लाञ्छन कोई लगाने से लगता है क्या ? जो कोयलों में हाथ देगा, अपने आप उसके हाथ काले होगें।

विजया—बस ! चुप रह जा ! भाभी ! क्यों जले पर नमक छिड़क रही हो ?

बड़ी बहू—तो जाइये न अपनी छोटी भाभी के पास, जो जले पर मरहम लगा दे !

(सास का प्रवेश)

(सास को देखकर-रोती हुई सी)

बड़ी बहू —मैंने ही आपका क्या छीन लिया है, जो मैं तो आपको काँटे की तरह खटकती हूँ और छोटी भाभी इतनी प्यारी हो रही है!

विजया—और क्या छीनती थी? घर में जो निधि थी वह तो तुमने हमसे छीन ली!

सास—विजया! तू इतनी बड़ी हो गई पर तुम्हारे में अभी तक कुछ भी समझ नहीं आई! यह कोई तुम्हारी देवरानी जिठानी है क्या जो तू इसके साथ इस तरह लड़ा करती है।

विजया—तो माँ! यह बेचारी छोटी भाभी को क्यों खांमखां बदनाम करती है!

बड़ी बहू—बाबा, आप तो मेरे झूँठे छींपटे मत लगाओ जी। मैंने किसी की क्या बदनामी की! आप ही तो मुझे कोसते जा रही हो और उल्टा मेरे ही सिर बुराई का ठीकरा फोड़ती हो। आपकी छोटी भाभी को कोई मैंने इस घर से निकाल दिया क्या जो आप जब देखो तब ताना कस देती हैं।

सास—विजया! तू बेचारी बड़ी बहू को क्यों कोसती है। तुम्हारी छोटी बहू को तो मैंने ही इस घर से निकाला है। वास्तव में वह मेरे घर की निधि थी और वह मेरे जन्म की सबसे बड़ी भूल हुई जो मैंने आई हुई निधि को हाथ से खो दिया। यह सब उसी भूल का फल है जो आज मेरा भरा पूरा घर दरदर का हो रहा है! घर की निधि भी गई और इज्जत आबरू भी। बेचारी

इन छोरियों को देखो जो इनकी पढ़ाई की देख भाल करने वाला भी तो कोई नहीं है ।

वीणा और प्रेम—तभी तो उसके जाने के बाद हम बराबर फेल हो रही हैं !

सास—अब उन बातों को याद कर पछताने से क्या फायदा ! अब तो इसीमें हमारा भला है कि हम समझा बुझाकर उसको घर वापस ले आवें । विजया ! तू ही यह काम पार पटक सकती है ।

विजया—मैंने तो कई बार छोटी भाभी से आग्रह किया है पर वह न मालूम क्यों नहीं आना चाहती ?

(पाँची का प्रवेश)

पांची—डाकिया यह चिट्ठी देकर गया है । लीजिये ।

(सास चिट्ठी लेलेती हैं)

सास – वीणा ! पढ़ो तो देखें इस चिट्ठी को !

(वीणा चिट्ठी खोल कर पढ़ती हैं)—

विजयपुर.

ता० १०-८-४२.

सेवामें श्रीमान् साह नौरंगीलालजी कुंवर कुमुदरायजी.

पत्र आपका आया । समाचार मालूम हुए । विवाह की तारीख तय करने के लिये लिखा सो ठीक । कल चिरंजीव. सुधीर का बम्बई से पत्र आया है । उसने लिखा है कि जबतक वह लड़की को स्वयं न देखले और उसकी पढ़ाई-लिखाई और योग्यता के बारे में जानकारी प्राप्त न करले तब तक विवाह की तिथि निश्चित न की जाय । वह दस तारीख तक डाक्टरी का इम्तिहान दे कर

विजयपुर पहुँच जायगा। हम सब १५ तारीख को जयपुर पहुँच रहे हैं। रूबरू मिलने पर सब बातें तय की जायेंगी। योग्य सेवा लिखें। कृपा भाव बनाये रक्खें। शुभेच्छु

माणिकलाल मनोहरलाल गोटेवाले

(चिट्ठी पढ़ने के बाद)

सास—हे भगवान्! हमारे ही घर पर क्या नाराज़ी है जो संकट पर संकट आता जा रहा है! इस कठिनाई को तो छोटी बहू के सिवाय और कोई भी दूर करने वाला नहीं है विजया! मैं खुद ही आज उसके घर जाऊँगी और उसको चिट्ठी के सब समाचार कहूँगी।

——

आठवाँ दृश्य।

स्थान—नौरंगीलालजी का घर

(घर भर में दीपावली की रोशनी हो रही है और घर के आंगन में सात बालिकायें हाथों में जलते हुए दीपकों के थाल लिए हुए घूमती हुई गायन गा रही हैं।)

जगमग जगमग ज्योति लिए सखि आई है दीवाली
उजियाली! दीवाली!
जग में उजास है, घर घर प्रकाश है।
जिन वीर धीर श्री जिनेश का उछाह है॥
उजियाली! दीवाली॥१॥

संतोष—सुख बढ़े, दारिद्र—दुख घटे।
गुण-ज्ञान वीर्य सम्पदा दुनियाँ में नित बढ़े ॥२॥
उजियाली ! दीवाली !!

अज्ञान तम हटे, दुख दर्द भ्रम मिटे।
भारत अमी की बेड़ियाँ सखि शीघ्र ही कटे ॥३॥
उजियाली ! दीवाली !!

(वीणा और प्रेम का प्रवेश)

वीणा—जीजी ! छोटी भाभी के घर नहीं चलोगी क्या, दीपक जलाने ? तुम सुबह कहती थीं न कि आज शामको दीपक जलाने के लिये छोटी भाभी के घर भी चलेंगी।

विजया - हाँ अभी चलती हूँ, वीणा ! जरा और ठहर जाओ।

प्रेम—तो फिर चलो न जीजी,

अरण्य - सुधा जीजी के यहाँ जा रही हो क्या !

विजया—हाँ अरण्य ! हमने सोचा आज त्यौहार का दिन है, इसलिये गृहस्थी में बहुत से काम लगे रहते हैं। भाभी वेचारी घर में अकेली है। वह क्या क्या काम सँभालेगी, इसलिये घर को दीवाली के दीपकों से सजाने में हमही जाकर मदद कर देंगी।

श्यामारानी—क्यों आजकल फूलां नहीं रहती है क्या !

विजया—फूलां रहती तो है पर उसे तो ऊपरी कामों से ही फुरसत नहीं मिलती है।

श्यामा—मैंने सोचा शायद आज काम की अधिकता से सुधा की माँ ने फूलां को अपने घर बुला लिया हो।

अरण्य—हां बुलाने को तो बुला सकती हैं क्यों कि उन्हीं के घर की नौकरानी है और उन्हीं के यहाँ से तनख्वाह पाती है

विजया—हां यह भी हो सकता है। यह तो सुधा की माँ की लायकी ही समझो अरण्य ! जो विमाता होते हुए भी सुधा से इतनी हमदर्दी रखती है। और मुफ्त में अपने घर का आदमी काम करने को दे रक्खा है।

अरण्य—इस बात की तो मैं भी तारीफ करती हूँ सुधा की माँ की। पर इसके सिवा सुधा की और तो कोई खैर खबर वह लेती नहीं है। और फूलां के लिये भी तुम यही समझो कि पिताजी के दबाव से ही फूलां को उसने सुधा के घर में काम काज के लिये छोड़ रक्खा है !

श्यामा—अगर फूलां न होती तो सुधा को बड़ी मुसीबत का सामना करना पड़ता क्यों कि उसने बेचारी ने चक्की चूल्हे का धन्धा पीहर में कब किया था ?

विजया—हाँ यह तो बिल्कुल ठीक है श्यामारानी।

प्रेम और वीणा—चलो न जीजी ! देर क्यों करती हो ?

विजया—तुम भी चलती हो क्या अरण्य ?

अरण्य—(कुछ सोच कर) मैं भी चलूं क्या ! अच्छा चलती हूँ। तुम भी चलो श्यामारानी।

श्यामा—चलती तो मैं भी जरूर पर मुझे मामा ने बुलाया है।

शेष स्त्रियां—अच्छा अब हम जाती हैं, विजयाजी ! नमस्ते !

विजया—नमस्ते !

(चली जाती हैं)

श्यामा—मैं भी जाती हूँ विजया !

विजया—अच्छा नमस्ते !

श्यामा—नमस्ते ! (चली जाती है)

(श्यामारानी वापस मुड़कर कुछ बात चीत करती है.)

श्यामा—हाँ विजया ! तुम भी तो कल से हमारे नाटक मातृभाषा में पार्ट करने रिहर्सलों में आया करोगी न ? सुधा ने मुझ से कहा था।

विजया—हाँ जरूर आऊँगी।

अरण्य—क्यों, यह भी पार्ट करेगी क्या ?

श्यामा—तुम्हें नहीं मालूम अरण्य ? इसको तो नाटक में मुख्य पार्ट दिया गया है। बात यह है (कुछ उधर लेजाकर चुपके से) १५ तारीख को विजया के ससुराल वाले उसे देखने के लिये आयेंगे और सुना है वे विजया की पढाई लिखाई के बारे में भी जाँच करना चाहेंगे। लड़के ने इस बात पर खास तौर से जोर दिया है कि लड़की अच्छी पढ़ी लिखी होनी चाहिए, वरना वह विवाह नहीं करेगा। विजया कुछ पढ़ी लिखी है तो नहीं, इसलिये सुधा ने इसको नाटक में पार्ट दिया है। नाटक की तारीख भी १५ ही निश्चित की है। उसने कहा मैं विजया को ऐसा पार्ट दे रही हूँ जो उसके ससुराल वाले देख कर दंग रह जायँ और लड़की के बेपढ़ी होने का ऐब छिप जाय।

अरण्य—ओ ! ऐसा ! उपज तो बहुत अच्छी है (विजया की ओर मुड़कर) तो विजया क्यों न रिहर्सलों में जायगी !

विजया—ये चुपके चुपके क्या बातें हो रही हैं।

प्रेम—जीजी ! अब चलो न, देखो सब जगह दीवाली की रोशनी हो गई है।

अरण्य—इसको बड़ी उतावली लग रही है छोटी भाभी के घर जाने की।

विजया—अजी बस पूछो मत ! पिताजी या अम्मा इसको किसी काम से छोटी भाभी के घर जाने के लिए कह देते हैं तो इसके पाँवों में घूघरे बँध जाते हैं।

अरण्य—क्यों प्रेम ?

(प्रेम शर्म के मारे मुंह नीचा कर लेती है)

अरण्य—(प्रेम के माथे पर हाथ फेरती हुई) बड़ी भोली और सुशील लड़की है। लो चलें !

(सब चली जाती हैं।)

नवाँ दृश्य।

स्थान—सुधा का नया घर

(सुधा एक दृष्टि से देखती हुई खम्भे के सहारे खड़ी किसी पूर्व बात का स्मरण कर रही है और एक तरफ एक टेबिल पर बिना जले हुए दीपकों की थाली रक्खी है)

[नेपथ्य से आवाज़]

"कुमुद बाबू ! आपको ग़लत फहमी हुई है !"

"नहीं, तुम भी मुझे धोखा देना चाहती हो। मैं नहीं जानता था कि अरण्य मेरे हृदय में पैठ कर अन्दर ही अन्दर यह छुरी

चलायेगा ! उसने मेरी अजान कारी में तुम्हारे साथ जो सहानुभूति दिखाई है, उसका रहस्य मैं सब समझता हूँ। उसने मेरी ग़रीबी से नाजायज़ फायदा उठा कर मेरी इज्जत पर हमला करना चाहा है ! तुमने उसकी गुप्त सहायता को मुझ से छिपा कर स्वीकार किया, इससे मुझे तुम्हारे ऊपर भी शक होता है !"

(फूलां आकर दीपकों की थाली को सुधा के सामने पेश करती हुई)

फूलां—सुधा रानी ! आज दीवाली का दिन है। सब जगह रोशनी होगई है। हर एक घर में खुशियाँ मनाई जा रही हैं ! आप इस तरह यहाँ अनमनी सीं किस दुविधा में खड़ी हैं ! कपड़े बदलिये और दीपक जलाइये। आपको मालूम है, आज लक्ष्मी देवी के स्वागत का दिन है !

सुधा—लक्ष्मी देवी का स्वागत ! फूलां ! तुम लेजाओ मेरे सामने से यह थाली। जो लक्ष्मी देवी हम ग़रीबों और निर्धनों की सम्पत्ति को बटोर कर धनवानों और पंजीपतियों का घर भरती है, हम उस लक्ष्मी देवी का स्वागत नहीं करना चाहते ! लक्ष्मी देवी अपना प्रसाद उन पंजी पतियों को प्रदान करना चाहती है जो गगन चुम्बी अट्टालिकाओं के सुन्दर प्रासादों में रह कर हम ग़रीबों के हक़ के पैसों से आनन्द उत्सव मनाते हैं ! सुवासित व्यञ्जनों से अपनी रसना-लालसा बढ़ाते हैं ! शराबखोरी करते हैं ! व्यसनों की दुर्वासना में रहते हैं ! भोगविलास के प्रकाण्ड ताण्डव का तमाशा देखते हैं ! एक रुपये की जगह १०) रुपये खर्च करके अपनी शान जमाते हैं ! झूठी इज्जत और ठाट बाट के पीछे मरते हैं ! रात को पूर्ण बे फिक्री के साथ सोते हैं और सुबह बेहद खुशी की अंगड़ाइयाँ लेते हुए उठते हैं ! किन्तु लक्ष्मी देवी हमें क्या

प्रदान करती है ? हमें प्रदान करती है-अपना अभिशाप ! जिसके प्रभाव से हमारी झोंपड़ियाँ ग़रीब और निर्धनता का जीर्ण पंख फैलाये निराशा और दुःख के घने अन्धकार में विलीन होरही हैं ! जिनमें रहने वाले हम ग़रीब आनन्द उत्सव के दिन भी आँखों में आंसुओं की धारा बहा कर त्यौहार के देवताओं को अपनी अञ्जली चढ़ाते हैं ! ऐसी हालत में मैं उस लक्ष्मी देवी की पूजा नहीं करना चाहती जो देवी होते हुए एक ही प्रकार के दो इन्सानों में भेद भाव दिखाती है। मैं लक्ष्मी देवी को देवी नहीं मानती। उसका हृदय पक्षपात के पाप से सना हुआ है ! उसका हृदय वज्र से भी कठोर है ! क्यों कि वह ग़रीबों के हृदय में धूधू करके जलती हुई वन्हि को आँच से भी नहीं पिघलता है ! फूलां, लेजावो तुम मेरे सामने से इस थाली को !

फूलां—आज आपको क्या हो गया है ! आप क्यों इसतरह बहकी सी बातें कर रही हैं ! होश में आइये सुधा रानी ! लक्ष्मी देवी के लिए इस तरह कहना बहुत अपशकुन है !

सुधा—मैं आज लक्ष्मी देवी के साथ लोहा लेने खड़ी हुई हूँ लाओ यह थाली (थाली छीन कर उसको फेंकती है) मैं आज लक्ष्मी देवी को उसके पक्षपात पूर्ण व्यवहार के लिए कठोर सबक सुनना चाहती हूँ,क्यों वह ग़रीबों के साथ जुल्म करती है ? (अस्त व्यस्त होकर रखी चीजें फेंकने लग जाती है और बालों को बिखेर कर रण चण्डी सी घूमती हुई) क्यों वह ग़रीबों के भग्न हृदयों पर पदाघात करती है ! आज उसी के अभिशाप के कारण मेरे घर का यह हाल हुआ ! इसी के अभिशापसे मुझे पद दलित होना पड़ रहा है ! इसी के अभिशापसे मेरे शील और गौरवमें लांछन लगाये जाने का मौका आया है ! निर्धनता सबसे बुरी बला है फूलां (फूलां को झिझोड़कर)

तुम लक्ष्मी देवी की पूजा के लिये दीपक मत जलाओ ! हमारे घर की सब रोशनी बन्द करदो और घने अन्धकार के काले झण्डों से उसके पक्षपात पूर्ण अहँकार का मर्दन करो (कहती हुई सुधा बे होश होकर जमीन पर गिरजाती हैं। इसी मौके पर विजया वगैरह हाथोंमें दीपकों की जलती हुई थालियाँ लेकर आ पहुंचती हैं और प्रेम सुधा की दहलती आवाज़ सुनकर और उसकी इस तरह जमीन पर गिरते देख लड़खड़ा कर गिर जाती है।)

विजया—भाभी ! भाभी !! यह क्या होगया भाभी को फूलां ! यह पागलों का सा प्रलाप क्यों कर रही थी ! घर में सब जगह अन्धकार क्यों छाया हुआ है ! सब चीजें अस्त व्यस्त क्यों पड़ी हैं ! .खुशी का कोई चिन्ह नहीं नजर आ रहा है ! भाभी ! उठो न भाभी ! बोलो ! देखो अरण्यबाला दीवाली के दीपक लेकर आई है ! उठो भाभी ! बोलो ! बोलती क्यों नहीं !

(पर्दे का गिरना और रास्ते में से किसी ग़रीब औरत का गाते हुए निकलना)

क्या भगवान् ! तेरी लीला हम सदा मुसीबत में रहते !
मिले एक दिन टुकड़ा फिर दिन तीन भूख का दुःख सहते ॥
जीर्ण-शीर्ण मैले-चिथड़ों में सिकुड़-सिमट लिपटे रहते ।
लाज आबरू रही किनारे सिसक-सिसक सर्दी सहते ॥१॥
ऊँचे ऊँचे महल किसी के हम टूटी कुटिया बसते ।
घोर-घाम गर्मी में वर्षा-ऋतु में बून्द-चोट सहते ॥२॥

दसवाँ दृश्य

स्थान—मातृभाषा का भवन

(मातृभाषा अपने सिंहासन पर बैठी हुई अपनी हीनावस्था पर विचार कर रही है और दो सेविकाएँ इधर-उधर छड़ी हाथ में लिए हुए खड़ी हैं ।)

(पाँच बालिकाओं का 'मातृ भाषा की जय' के साथ प्रवेश)

मातृभाषा—यह कैसा जयकार है ! (सामने आती हुई बालिकाओं को देख कर अपने सिंहासन पर से उठ खड़ी होती है और क्रोध के साथ उनको ललकारती है ।)

मातृभाषा—कौन हो तुम ! मेरा जयकार करने वाली बालिकाएँ !

पहली बालिका—तुम्हारे चरणों का प्रसाद पाने की इच्छुक तुम्हारी सेविकाएँ !

सब बालिकाएँ—भगवती मातृ भाषा के चरणों में नमस्कार !

मातृ भाषा—मैं तुम्हारे ऐसी कृतघ्न बालिकाओं का नमस्कार नहीं झेलना चाहती। विलायती भाषा के रंग में रंगी हुई बालिकाओ ! तुम आज किस मुँह से मेरा प्रसाद पाने के लिए उत्कंठित हुई हो और किस मुँह से अपने आपको मेरी सेविकाएँ कहने का दुस्साहस कर रही हो ।

दूसरी—हम सुन रही हैं क्या भला माता तुम्हारे ये वचन !
जल्दी बताओ कब किया अनुचित तुम्हारे से चलन।

मातृ भाषा—नफ़रत मुझे आती तुम्हारी इस कृतघ्न जुबान से
जाओ हटो, मैं बात भी सुनती नहीं इस कान से

तीसरी—मातेश्वरी-हम से ऐसा कौन सा महान अपराध हुआ है, जो तुम हमारी बात भी नहीं सुनना चाहती। हम हाथ जोड़ कर प्रार्थना करती हैं कि अब जल्दी से जल्दी हमारी ग़लतियों को समझाओ और उनके लिए कठोर से कठोर दण्ड दो।

मातृ भाषा—यदि तुम यही सुनना चाहती हो तो सुनो; कान खोल कर सुनो। सबसे पहले मैं तुम से यह पूछना चाहती हूँ कि तुमने तुम्हारी मातृ भाषा के लिए क्या सेवायें की हैं जो उससे प्रसाद पाने की आशा रखती हो। आज संसार के सब देशों में उनके निवासी अपनी प्यारी मातृभाषा का गौरव बढ़ाने और उसको संपूर्ण भाषाओं से ऊँचा उठाकर रखने में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर रहे हैं। उसका सम्मान करने के लिए प्रकाण्ड विद्वान पैदा कर रहे हैं। उसकी शिक्षा के लिए विश्व विद्यालय स्थापित करते हैं और अपने देश वासियों के हृदयों में उसके प्रति आदर का भाव भरते हैं। देश के किसी भी व्यक्ति को उसकी शिक्षा से वञ्चित नहीं रहने देते। उन देशों की शिक्षा में, सभ्यता में और हर एक संस्कार में मातृ भाषा की छाप रहती है। उन देशों के स्कूल और कालेजों में, अदालत और महकमों में सरकार और दरबार में उनकी अपनी मातृभाषा गौरव और अभिमान का झंडा लिए अपना मस्तक ऊँचा किए हुए है किन्तु आज भारत ऐसे अभागे देश में उसकी अपनी मातृ भाषा के तुम्हारे ऐसी बदनसीब पुत्रियां और गुलाम पुत्र पैदा हुए जो एक विदेशी भाषा का तुच्छ प्रलोभन पाकर उस के पदों को चूम रहे हैं और अपनी मातृ भाषा के प्रति अपने कर्त्तव्य को भूल बैठे हैं।

भारती भूले हुए हैं आज अपनी मात को। ✓
पाश्चात्य भाषा में रंगे हैं छोड़ अपनी जात को ॥
ऐ हिन्दवालो ! देखलो है क्या दशा हिन्दी की आज !
भाषा विदेशी के पदों में पड़ा है हिन्दी का ताज़ !!
दफ्तर अदालत आफिसों में गर्व से फूले वही।
दरबार में सरकार में उल्लास से चमके वही ॥
डंका उसी का बजरहा है चौतरफ़ संसार में।
यहाँ तक कि फैलाया उसीने पंख निजघर-द्वार में ॥
बच्चे पुकारें तात मां को मदर-फादर बोल कर। ✓
जल जाय मेरा रक्त सारा, देखले कोई तोलकर ॥
डाक्टर-वकील हुक्काम-हाकिम और क्या शिक्षकसभी।
बोलें उसीको शौक से, ना बोलते हिन्दी कभी ॥
भाषा विलायत की बुरी बूसे भरे हैं भारती। ✓
यही बू इस देशको नहिं गुलामी से तारती ॥
आती है बू मुझे वह तस्वीर से तुम्हारी।
जाओ ! हटो ! जलाओ ना जिस्म यह हमारी ॥

(पांचों मातृ भाषा के चरणों में गिर जाती है)

चौथी—मांगें क्षमा देवी हमारे दोष की कर जोड़कर,
अब तक हुईं पथ भ्रष्ट हमको लगाओ अब मार्ग पर

मातृ भाषा—जाओ तुम्हें यदि खेद है अपने किए का आप पर
डंका बजा ओ आज से हिन्दी ज़बाँ का नाम कर। ✓

पांचवी--पर क्या करें सरकार ने फैला दिया है सब जगह,
अपनी ज़ुबाँ का जाल जो उलझा हुआ है हर जगह

मातृमाषा--दरख्वास्त-अर्ज़ी-आरज़ू-चिट्ठी-लिखावट में सदा,
भाषा हमारी काम में लो, लिखो ना आज़ल कदा ॥
बोलो लिखो, सोचो, सदा हिन्दी ज़ुबाँ की छाप से।
सरकार आयेगी ठिकाने अन्त अपने आप से ॥

पहली-मातेश्वरी तुमने आज हमारी आंखें खोलदीं ! हम प्रण करती हैं कि आज ही से हम तुम्हारा प्रचार करने में हमारे तन मन और धन को लगादेंगी और कुछ ही दिनों में दिखादेंगी कि भारत के कोने कोने में तुम्हारे ही गुणों की और तुम्हारे ही गौरव की गाथा गाई जारही है, किन्तु तुम हमें आज तक के अपराध के लिए क्षमा और आगे के लिए मंगल-मय आशीर्वाद प्रदान करो।

मातृभाषा—बालिकाओ ! जाओ ! तुम्हारे आज तक के अपराध को क्षमा किया और मेरा अशीर्वाद सदा ही तुम्हारे साथ रहेगा। तुम निर्भय होकर अपना कार्य आरंभ करो ।—

(सब बालिकायें 'भगवती–मातृ भाषा की जय हो !' यह तीन वार बोलती हैं और मातृ भाषा उनको आशीर्वाद प्रदान करती है ।)

ड्राप सीन

दूसरा अंक समाप्त ।

तीसरा-अंक

पहला दृश्य

स्थान—रास्ता

(एक तरफ से प्रेम, विजया और उसकी मां और एक तरफ से सुधा की मां और उसकी छोटी बहिन पुष्पा और शशि का प्रवेश)

शशि और पुष्पा—माँ वह देखो ! जीजी की सास आरही हैं।

सुधा की मां—पायलागूं समधिन जी !

प्रेम की मां—ऊंचे हो और ऊमर बधे।

प्रेम—सेठानी जी हमारी भाभी को १०) हजार रुपये का इनाम मिला है।

सुधा की मां—हाँ हम भी सुधा के घर से ही आरही हैं, वहां ही मुझको यह समाचार मालूम हुआ है।

विजया—भाभी की तबियत कैसी है सेठानी जी ?

सुधा की मां—कोई खास फरक नहीं है, वैसी ही तबियत है। यह इनाम कहाँ से और किस तरह मिला, मैं तो कुछ समझ नहीं सकी विजया जी !

प्रेम—सेठानी जी भाभी ने एक किताब—

विजया—ठहरो, प्रेम ! मैं समझाऊं ! बात यह है सेठानी जी ! भाभी ने कुछ दिनों पहले मातृभाषा इस नाम से एक नाटक लिखा था।

पुष्पा—माँ वही नाटक जो हमारी पाठशाला की लड़कियों ने मन्दिर में खेला था।

सुधा की माँ—ठहरो, पुष्पा! बीच में क्यों बोलती हो?

विजया—(पुष्पा के माथे पर हाथ फेरती हुई) बच्ची है सेठानी जी! हाँ तो, वह नाटक अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य पुरस्कार परिषद को भेजा गया था और उसी परिषद की तरफ़ से ही भाभी को यह इनाम मिला है।

प्रेम की माँ—सेठानीजी! मेरी कितनी बड़ी भूल हुई, जो मैंने आपकी लड़की को पहिचाना नहीं! मेरे पल्ले में रत्न बँधा था, काच समझ कर मैंने उसका निरादर किया! बेचारी विजया के लिए भी उसके ससुराल वालों की तरफ से एक समस्या खड़ी हो गई थी, किन्तु उसको भी बहूने कितने सुन्दर तरीके से सुलझाया है! नाटक में विजया का पार्ट देखकर उसके ससुर जी इतने खुश हुए कि दहेज और विजया के पढ़ने लिखने की बात बिलकुल छोड़ ही दी गई।

प्रेम—मैंने पद्मा से, जिसके यहाँ वह ठहरे हुए थे कि-सुना कि विजया जीजी के ससुर जी तो उसका पार्ट देखकर खुशी से फूले नहीं समा रहे थे। कहा कि हमें तो ऐसी सुयोग्य और सुन्दर लड़की मिली है जिसे हम हथेलियों पर रक्खेंगे।

सुधा की माँ—आपकी लड़की ऐसी ही है, समधिन जी!

सास—लेकिन अब मैं अपने पापों का प्रायश्चित कैसे करूँ, जो मैंने ऐसी सुयोग्य लड़की की योग्यता को नहीं समझा।

सुधा की माँ—अब सोच विचार करने से क्या फायदा ? वह आपकी बहू थी। आपने जो कुछ किया उसको सीख देने के लिए किया था। अब आप कहाँ जा रही हैं ?

सास—मैं बहू के घर उसकी तबियत पूछने जा रही हूँ।

सुधा की माँ—अच्छा तो जाइये आपको देर हो जायगी।

(दोनों अपनी अपनी ओर चली जाती हैं)

दूसरा दृश्य

स्थान-सुधा का नया घर

(सुधा बीमारी की अवस्था में बिस्तरों पर लेटी हुई है और उसके पास फूलां और विजया बैठी हुई हैं)

सुधा—(खांसती हुई) थोड़ा पानी पिलाइये, विजयाजी ! यह खांसी चैन नहीं लेने देती है।

विजया—लो भाभी यह पानी। (पानी का ग्लास देती है)

सुधा—(ग्लास के मुँह लगाकर वापस दे देती है) विजया जी ! मुझे अब बचने की कोई उम्मीद दिखाई नहीं देती है।

विजया—(रोती हुई सी) भाभी यह क्या कह रही हो ! दो एक दिन में बिलकुल अच्छी हो जाओगी।

सुधा—एक मुराद तो मेरे मन में ही रह जायगी-आपका ब्याह देखने की कई दिनों से मन में उत्कण्ठा थी। मैं चाहती थी कि आपके पीले हाथ मैं अपने ही हाथों से करती।

विजया—(रोती हुई) भाभी धीरज रक्खो ! मन में क्यों ऐसे वैसे विचार लाती हो !

सुधा—कुमुद बाबू कहां गये हैं ?

विजया—कुमुद भैया अस्पताल में दवा लेने गया है। अब आता ही होगा।

सुधा—भोजन कर लिया उन्होंने ?

विजया—हाँ, कर लिया भाभी !

सुधा—बहुत दिनों से आज ही उन्होंने मेरे साथ कोई दो बातें की हैं।

विजया—भाभी ! यह मेरी ही ग़ल्ती हुई जो मैंने अरण्य बाला को उसके नाम से रुपये भेजने के लिए कहा।

सुधा—बेचारी अरण्य बाला का भी क्या, क़ुसूर ! यह तो मेरे ही दुर्भाग्य का क़ुसूर है।

विजया—कुमुद भैया भी बेचारा बहुत पछता रहा था कि मैंने नाहक़ ही देवी ऐसी सुधा का जी दुखाया। पर मुझे क्या मालूम था कि रुपये तुमने भिजवाये थे ?

सुधा—अब उन बातों को याद करने से क्या फ़ायदा, विजया जी !

विजया—हाँ भाभी अब उन बातों को भूल जाना ही ठीक है

(श्यामा रानी का एक डाक्टरनी और नर्स के साथ प्रवेश)

(विजया खड़ी होकर अपनी कुर्सी डाक्टरनी को देती हुई) आओ आओ श्यामारानी। बैठिये डाक्टरनीजी साहब ! बैठो श्यामारानी !

(डाक्टरनी बैठ जाती है और बीमार सुधा की जाँच करती है ।)

डाक्टरनी—(खड़ी होकर श्यामा के साथ एक तरफ जाकर) अभी तो ऐसी कोई चिन्ता की बात नहीं है, पर हाँ यदि समुचित चिकित्सा न की गई तो बीमारी बढ़ जाने की सम्भावना है ।

श्यामा रानी—तो आप ही बतलाइये डाक्टरनी जी साहब । अब क्या करें ?

विजया—भाभी को हम तो आप ही की शरण में छोड़रहे हैं, डाक्टरनी जी साहब ! आपका जो जी चाहे कीजिए ।

डाक्टरनी—अच्छा मैं दवा लिख देती हूँ । किसी के हाथ डिस्पेन्सरी से मंगवा लीजिएगा (विजया को चिट देती हुई) लीजिएगा !

(विजया स्लिप ले लेती है)

(विजया को अपनी जेब में से रुपये निकालते देखकर)

श्यामारानी—विजया ! फीस की जरूरत नहीं है, तुम रहने दो ।

विजया—श्यामा रानी ! हम लोगों के पास देने के लिए है ही क्या ? (कहती हुई फीस देने के लिए अपना हाथ बढ़ाती है)

श्यामारानी—नहीं, मैं कहती हूँ न तुम वापस रखलो (उसको वापस दे देती है और झट से डाक्टरनी के साथ चली जाती है । विजया कुर्सी पर वापस बैठ जाती है)

सुधा—मुझे घर ले चलो विजया जी ! मैं ऐसी नाजुक हालत में घर ही रहना चाहती हूँ ।

विजया—तुम तो फिर वैसी ही बातें करने लग गईं भाभी !

सुधा—(खांसती हुई) विजया जी ! मेरे सिर में बहुत जोर से दर्द हो रहा है। अरण्य बाला के पास एक पेन बाम है। फूलां को भेज दो, वह ले आएगी।

विजया—मैं खुद ही जाकर ले आती हूँ। अभी पाँच मिनिट में आई।

(चली जाती है)

(वीणा का घबराहट के साथ प्रवेश)

वीणा—फूलां ! विजया जीजी कहाँ गई ?

फूलां—क्यों क्या काम है ?

वीणा—जल्दी बताओ फूलां !

सुधा—अरे इतनी घबरा क्यों रही हो, वीणा ? क्या होगया ?

वीणा—भाभी ! क्या बताऊँ अम्मा और बड़ी भाभी के आपस में बहुत बोलचाल हो गई है।

सुधा—क्यों ? बोलचाल किस लिए हो गई ?

वीणा—तुम्हारे ही बारे में भाभी ! अम्माने बड़ी भाभी को तुम्हारी बुराई करने के बारे में इतनी बुरी तरह फटकारा कि बड़ी भाभी को भी गुस्सा आगया और बातों ही बातों में झगड़े ने बहुत जोर पकड़ लिया।

सुधा—पर सासजी ने यह क्या किया ? वे क्यों भाभीजी को मेरे बारे में फटकारते थे !

वीणा—विजया जीजी कहां गई है फूलां ? भाभी ! मुझे तो डर है कि मार पीट तक की नौबत न पहुँच गई हो। और बड़ी भाभी गुस्से में आकर आत्म हत्या न कर बैठे

फूलां—विजयाजी अरण्यबाला के मकान गई हैं।

वीणा—अरण्य बाला के मकान गई है! (कह कर चली जाती है)

सुधा—ओ। यह आँख क्यों फड़क रही है ! मुझे डर लग रहा है फूलां ! घर में कोई बड़ा अनिष्ट न हो जाय ! मैं घर जाती हूँ फूलां। (उठने को होती है)

फूलां—आप मत जाइये सुधा रानी ! आप बीमार हैं (बैठती हुई) आप से ....

सुधा—नहीं, मुझे मत रोको फूलां ! मैं जरूर घर जाऊँगी (उठ खड़ी होती है)

फूलां—(रोकती हुई) सुधा रानी आप मत जाइये आप बीमार हैं ! मत जाइये सुधारानी, सुधारानी ! देखिये डाक्टरनी ने मना किया है, सुधारानी ! देखिये, हाथ जोड़ती हूँ !

सुधा—फूलां ! मुझे मत रोको। मै जरूर घर जाऊँगी, मुझे भाभी जी के बारे में कोई बड़ा अनिष्ट दिखाई दे रहा है।

(अपने आपको छुडा कर चली जाती है।)

पटाक्षेप

———

तीसरा दृश्य

स्थान—नौरंगीलाल जी का घर

(सास और बड़ी बहू आपस में झगड़ती हुई बात चात कर रही हैं।)

सास—हाँ तुम ने ही मेरे घर का सत्यानाश किया ! तुमने ही बेचारी छोटी बहू को घर से निकलवाया ! न जाने, तुमने किस बला के रूप में आकर मेरे घर में प्रवेश किया था, जो आज मेरे घर की यह दुर्दशा होगई ! मुझे क्या पता था कि तुम्हारे हृदय में छोटी बहू के प्रति यह विद्वेष और डाह भरा हुआ है ! दिल में तो आता है कि तुमने जिस जुबान से छोटी बहू के खिलाफ मेरे कान भरे, उसके अभी दो टूक कर डालूं।

बड़ी बहू—हां, जुबान ही क्यों मुझे जान से ही मारडालिये ना ! बीनणी जी को दस हजार रु० का इनाम मिल गया तो मैं आज आपकी आंखों में कांटे की तरह खटकने लगी। हे परमात्मा इस जग की कैसी लीला है ! धन के पीछे आदमी अपने पराये और खोटे-खरे को भी भूल जाता है। हे भगवान् ! तू मुझे अब इस दुनियाँ से उठाले ! मेरा अब इस जग में कोई भी रक्षक नहीं है !

सास—भगवान् से क्या कहती है, मरना है तो खुद ही मरजा, जो मेरे घर की भी बलाय बलाय नष्ट होजाय !

बड़ी बहू—यह लीजिये ! मैं अभी आपके सामने ही प्राण दिये देती हूँ, तब तो आप घी के चिराग जलाइयेगा।

(बड़ी बहू लपक कर टेबिल की दराज़ से पिस्तौल निकाल लेती है ।)

(छोटी बहू का अकस्मात् घबराहट के साथ प्रवेश)

(छोटी बहू आकर बड़ी बहू का हाथ पकड़ लेती है । और पिस्तौल छुड़ाने का प्रयत्न करती है और बड़ी बहू छोटी बहू से अपने आप को छुड़ाने का प्रयत्न करती है ।)

(इसी बीच में सास उतावली के साथ)

'अरे कोई आओ ! बचाओ ! विजया ! ओ विजया ! केशव ! ओ केशव ! अभी घर में गोधम हो जायगा ! अरी छोड़दे छोटी बहू ! पिस्तौल को ! पिस्तोल भरी हुई है ! ओ हो अब क्या करूँ ! अब मैं किसे बुला कर लाऊँ ! केशव ! ओ केशव ! (इस तरह बोलती रहती है)

(और सुधा)

"भाभी जी ! छोड़ दीजिये पिस्तौल को ! छोड़िये भाभी जी !" (इत्यादि वाक्य बोलती रहती है ।)

(और बड़ी बहू)

"बीनणी जी ! रहने दीजिये ! मैं आज जरूर मरूंगी ! मुझे मरने दीजिए बीनणी जी ! मैं घर की डाइन हूँ ! मैंने सासजी का घर उजाड़ दिया ! मेरा अब मरजाना ही अच्छा है ! बीनणी जी ! छोड़ दीजिये ।

(इस तरह बोलती रहती है)

(इसी छीना झपटी में पिस्तौल छूटने की आवाज़ आती है और सुधा पिस्तौल की चोट से घायल हो कर एक दर्द भरी आह खींच कर धड़ाम से ज़मीन पर गिर जाती है ।)

(उसी समय वीणा और विजया का घबराहट के साथ प्रवेश)

विजया और वीणा—भाभी ! क्या हुआ भाभी को माँ ! यह खून कैसे निकल रहा है ! ओ, यह पिस्तौल ! भाभी को पिस्तौल लगी है माँ ! भाभी ! भाभी !! बोलो भाभी !

सुधा—(कराहती हुई) विजया जी ! सासजी को इधर बुलाइये ! मैं उनके पैर छूना चाहती हूँ ।

सास—हाँ बोलो बेटी ! मैं यहाँ ही हूँ ।

सुधा—(सास के पैर छू कर) सास जी ! अब मैं जा रही हूँ । भाभी जी कहाँ गये ?

(बड़ी बहू आकर पास बैठ जाती है और सुधा उसके पैर छूकर)

सुधा—सासजी ! आप बड़ी बहू को कुछ न कहना मेरे बारे में, मैं आपसे यही आखिरी प्रार्थना करती हूँ ! मेरे इनाम के रुपये विजया जी को ब्याह में दे दिये जायँ ।

(प्रेम का प्रवेश)

प्रेम—माँ क्या हुआ भाभी को !

सुधा—आओ प्रेम (प्रेम उसके पास बैठ जाती है ।)

(प्रेम के माथे पर हाथ फेरती हुई)

आप लोग रो क्यों रहे हैं एक दिन सब को मरना है । (आह ! आह ! करती हुई सुधा अपनी गर्दन को जमीन पर गिरा देती है)

सब एक साथ—भाभी ! (कह कर रोने लगजाती हैं ।)

चौथा दृश्य ।

स्थान—श्मशान भूमि

(एक सन्यासिनी का गाते हुए निकलना और साथ ही पर्दे का उठना
और धू धू करके जलती हुई चिता का दृश्य दिखाई देना ।
कुछ देर तक जलती हुई अग्नि के दृश्य का नज़र
आना और फिर पर्दे का गिर जाना ।)

सन्यासिनी का गायन

नाश मय यह असार संसार ।
ज्यों पानी का बुद बुद है, अरु कमल नाल का तार ॥
तोड़ो जग से नाता अपना, यह है क्षणिक रात का सपना
बना नीन्द में मनुज भूमिपति, आँख खुले सब पार ॥ १ ॥
माता पिता बहिन अरु भाई, मरण समय सब करें जुदाई ।
स्वार्थ दम्भ दारुण क्लेशों का है यह जग आगार ॥२॥

(गायन समाप्ति के बाद सन्यासिनी का चला जाना ।)

तीसरा अंक समाप्त

उपसंहार

स्थान—नौरंगीलाल जी का घर

(पर्दा उठता है और सुधा की तसवीर के दृश्य के साथ बड़ी बहू और उसकी दो सहेलियाँ अपने आँसू पोंछती हुई दिखाई देती हैं ।)

पहली—मालती बहिन ! इस देवी का जीवन-चरित्र तो वास्तव में करुणा से भरा हुआ है ! ऐसी देवियों का चरित्र श्रवण करने से सचमुच आत्मा का मैल धुल जाता है । मालती ! इस देवी की एक तस्वीर मुझे भी देना, मैं इसे अपने कमरे में लगाऊँगी और इस के जीवन की याद से अपनी आत्मा को पवित्र करूँगी ।

ड्राप-सीन

समाप्त

परिशिष्ट

इस पुस्तक के प्रकाशन में श्री शारदा-सहेली-संघ को निम्न महिलाओं ने आर्थिक सहायता प्रदान की है, जिसकी ब्यौरेवार विगत नीचे दी जाती है तथा प्रस्तुत पुस्तक में लेखक महोदय की फ़ोटो की छपी हुई प्रतियाँ श्रीमान् छगनलालजी रतनलालजी बड़जात्या जोबनेर वालों की तरफ़ से प्राप्त हुई हैं। संघ इन सब महिलाओं और महानुभावों को अनेकानेक धन्यवाद प्रदान करता हुआ इनके प्रति आभार प्रदर्शित करता है जिन महिलाओं के आगे स्थान का संकेत नहीं है वे सब स्थानीय हैं।

२५४) श्रीमान् सेठ साहब बंजीलालजी ठोलिया, जयपुर के महिला परिवार की तरफ़ से।

४०) श्री सौ० सुभद्राकुमारी सेठी 'प्रभाकर', इन्दौर।

२५) श्री सौ० शारदादेवी, धर्मपत्नी-श्री कर्पूरचन्द्र जी पाटनी,

२५) श्री सौ० चम्पादेवी, धर्मपत्नी-श्री मूलचन्द्रजी मारोठ वाले,

२५) श्री सौ० गुणमालादेवी धर्मपत्नी श्री भंवरलालजी सांभर।

२१) श्री सौ० मिश्रादेवी, धर्मपत्नी-श्री सेठ बधीचन्द्रजी गंगवाल,

२१) धर्मपत्नी-श्री सेठ तोलारामजी, लाडनूं।

२०) श्री सौ० महताबदेवी, धर्मपत्नी-श्री सेठ घीसीलाल जी ठोलिया, जयपुर।

१५) श्री ललिताकुमारी जैन
१५) श्री सौ० चाँददेवी, धर्मपत्नी-फतेलालजी सेठी, इन्दौर।
११) श्री सौ० तारादेवी सरस्वतीदेवी काशलीवाल सैथल।
१०) श्री सौ० चौसरदेवी, धर्मपत्नी-भँवरलालजी गोदीका,इन्दौर
१०) श्री सौ० भँवरदेवी, धर्मपत्नी-श्री अनूपचन्द्र जी ठोलिया,
१०) श्री सौ० विमलादेवी, धर्मपत्नी-श्री मुंशीलालजी, जयपुर।
१०) श्री सौ० गट्टूदेवी, धर्मपत्नी-श्री गुलाबचन्द्र जी विन्दायक्या,
१०) श्री सौ० भँवरदेवी, पुत्रवधू-श्री म्होरीलालजी विलाला,
१०) श्री सौ० छुट्टनदेवी, धर्मपत्नी-श्री छीतरमलजी लुहाड़िया,
१०) श्रीमती उमरावर देवी सोनी, 'विदुषी'
७) श्री सौ० अनूपदेवी, धर्मपत्नी-श्री ईश्वरलाल जी पांडिया,
७) श्री सौ० सूरज बाई, धर्मपत्नी-श्री गुलाबचन्द्र जी पाटनी,
५) श्री सौ० चम्पादेवी, धर्मपत्नी-श्री० कर्पूरचन्द्रजी गंगवाल,
५) श्री सौ० रतनदेवी, धर्मपत्नी-श्री पारसलालजी, कासली०
५) श्री सौ० राजाकुमारी, धर्मपत्नी- कस्तूरचन्द्र जी कटारिया
५) धर्मपत्नी श्री भागेन्द्रकुमार बोस, बंगलौर।
५) श्री सौ० चाँददेवी, धर्मपत्नी-श्री कर्पूरचन्द्रजी पांड्या,जयपुर
५) श्री सौ० गुलाबदेवी, धर्मपत्नी-श्री सुन्दरलालजी सोनी,
५) श्री सौ० चौगानदेवी, धर्मपत्नी-श्री ज्ञानचन्द्र जी सोनी,
७) श्री सौ० गेंददेवी, धर्मपत्नी-श्री दारोगा कस्तूरचन्द्र जी लुहाड़िया, जयपुर।

५) श्री सौ० शान्तिदेवी, पुत्रवधू-श्री गुलाबचन्द्रजी साह, जयपुर
५) श्री सौ० सुशीलादेवी, धर्मपत्नी-श्री जोरावरमलजी पाटणी,
५) धर्मपत्नी श्रीमान् ऋद्धिकरणजी पांड्या, लाडनूँ।
५) धर्मपत्नी श्रीमान् घेवरचन्द्रजी गोधा, जयपुर।
१०) श्री सौ० चन्द्रकला कुमारी 'प्रभाकर'
१०) श्री सौ० शकुन्तलाकुमारी पाटनी 'विदुषी आनर्स'
१०) श्री सौ० छुट्टनकुमारी गोदीका, 'विदुषी आनर्स'
१०) श्री सौ० अनुपमकुमारी, धर्मपत्नी-राजमलजी तोतूक
३७) फुटकर सहायता।

६६५) कुल रुपया

ललिताकुमारी,
मंत्रिणी-श्री शारदा-सहेली-संघ, जयपुर।